TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL LIBRARY

OU_180466

UNIVERSAL LIBRARY

OUP—43—30-1-71—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/H91N Accession No. H-2449

Author हुमायूं कबीर

Title नदी और नारी 1957

This book should be returned on or before the date last marked **below.**

नदी और नारी

हुमायूँ कबीर

हंसकुमार तिवारी
द्वारा मूल बँगला से अनूदित

सर्वोदय साहित्य मंदिर,
कोठी, (बसस्टेण्ड,) हैदराबाद द.

राजकमल

राजकमल प्रकाशन
दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास

कापीराईट १९५७

मूल्य
चार रुपये

मुद्रक
भार्गव प्रेस इलाहाबाद

प्रकाशक
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

अध्याय संकेत

पृष्ठ ७ : नज्जू मियाँ
पृष्ठ ८५ : असगर
पृष्ठ १६३ : नूरू और मालिक

नज्जू मियाँ

पद्मा के किनारे खड़े होकर नज्जू मियाँ ने एक बार चारों तरफ निगाह दौड़ाई। सामने था विराट् नदी का अविराम प्रवाह—सुबह की किरणों से स्रोत में हँसी छलकी पड़ रही थी। शरीर लड़की-जैसी चंचल नदी, मगर चंचलता में थी खुशी। आवेग जितना भी हो चाहे, सर्व-नाशी शक्ति की भयंकरता नहीं थी।

सुबह की ज्योति में पद्मा का रूप देखते ही बन रहा था! दूर—दूर झिलमिलाता दूसरा तट दीख रहा था, बीच-बीच में चौर निकल आये थे और आस-पास की धार का पानी सूरज की रोशनी में झल-मला रहा था। दूर आसमान झुककर धरती के कन्धों पर टिक गया था और आसमान-जमीन के दरमियान की इस दूरी में बह रही थी जल की अपार धारा। क्या रात और क्या दिन, जल की उद्दाम धारा कभी गरजती तो कभी शान्त नीरव बहती ही जा रही थी।

नज्जू मियाँ की आँखों में बीते दिनों की स्मृतियाँ उतर आईं—उदास आँखों चारों तरफ देखकर उसने लम्बी उसाँस ली। दुःख की नहीं, आराम और तृप्ति की उसाँस। खुदा का शुक्र है, दिन भले ही बीते। उसे जवानी के उन दिनों की याद आई, जब वह निरा गरीब फटेहाल परदेशी के रूप में इसके किनारे आकर खड़ा हुआ था। साथ में गाँव-घर के लोग तो थे, पर सब उससे उम्र में बड़े थे, घर-बारी थे।

अपनी कहने को उन्हें जमीन नहीं थी और मजूरी से गुजारा नहीं चलता था। सो इस उम्मीद से घर छोड़कर निकल पड़े कि शायद बाहर तक-दीर खुले। नज्जू मियाँ भी उन्हीं के पीछे लग गया। न माँ थी, न बाप। उसकी राह भी कौन रोकता ?

दिन भर की मंजिल मारकर एक दिन ठीक साँझ हुए पद्मा के किनारे पहुँचा। साँझ की धूमिल रोशनी में पद्मा का वह खूँखार चेहरा, उफ् ! ऐसी भी कहीं नदी होती है ! नदी तो उसने अपने यहाँ भी देखी है। गाँव के किनारे शान्त शिशु-सी बहती है धीरे-धीरे उसकी धारा। उससे इस पद्मा की तुलना कहाँ ! यह तो ऐसी दौड़ी जा रही है, जैसे बाल बिखेरे कोई उन्मादिनी हो—फूल-फूल उठता है दुरंत प्रवाह: चारों ओर से गर्जन में मानों दबे क्रन्दन की आवाज आ रही हो। रह-रह कर खौफनाक शब्द के साथ कगारे टूटे पड़ रहे हैं। और इसकी कहीं हद भी है—कोई किनारा ? जहाँ तक आँखें जाती हैं, पानी, बस पानी। दूर पार का तट सूझे नहीं सूझता। साँझ के उतरते अँधेरे में प्रवाह की एक अलौकिक ही दमक है। डरते हुए नज्जू मियाँ ने पूछा था, "हम समंदर के पास तो नहीं आ निकले ?"

साथ वालों ने बताया, "नहीं रे पगले, समंदर नहीं यह पद्मा नदी है। यहाँ जमीन मिलेगी, हम नहीं बसेंगे।"

आखिर हुआ भी वही, वे वहीं रह गये। दल का अगुआ था रहीम बख्श। वह बोला—"जब हम जमीन के ही लिए घर-बार छोड़-कर इतनी दूर आये हैं, तो बगैर अपनी जमीन हुए काम नहीं चलने का। इसके लिए तो बस्ती के बजाय वीरान में भी जाना पड़े तो मंजूर है। बस्ती के पास-पड़ोस की जमीनें बन्दोबस्त हो चुकी हैं। अब अगर बस्ती में रहना हो, तो मजूरी ही करनी पड़ेगी, जिसके लिए कि हम परदेश नहीं आये।"

ज्यादा लोगों ने बात की ताईद ही की, 'ठीक ही है। मजदूरी ही करनी थी तो मुल्क छोड़कर इतनी दूर क्यों आना था ?' मगर दो-एक

ने यह न माना। बोले—'घर से दूर, विदेश आ गये, यही बहुत है। लेकिन यहाँ आकर भी अगर साँप-मगर भरे सुनसान जंगल में ही रहना नसीब हो, तो वहीं जाकर मशक्कत करना बेहतर है।'

नज्जू था नौजवान, सत्रहवें साल में पहुँचा था। चौड़ा सीना, सीने के अन्दर अटूट हिम्मत। उसे क्यों हिचक होती? उसने रहीम से कहा, "चच्चा, तुमने बहुत बजा फरमाया। अपनी जमीन ही नहीं हो सकी, तो आना ही फिजूल हुआ। मैं तुम्हारे साथ रहूँगा।"

झाड़-झंखाड़ साफ करके, गढ़े भरकर, मिट्टी गोड़कर खेत बसाना कोई मजाक तो नहीं। जिस जमीन को कभी हल ने नहीं छुआ, उस पर फसल उगाने के लिए कलेजा चाहिए और चाहिए लगन। उड़न-छू मन से जमीन का जी नहीं जोता जा सकता। रहीम बख्श ने सख्त मुनादी कर दी—'खबरदार, जब तक नई बस्ती में हर एक के मकान न हो जाय, खेतों से नई फसल घर न आ पहुँचे, तब तक कोई बीवी नहीं लाये।'

यह कड़ा हुकुम सबको नहीं सुहाया, इस पर कानाफूसी भी हुई। एतराज करना चाहा था, मगर कठोर जो था रहीम का शासन। अगर रहना है तो हुक्म की पाबन्दी करनी पड़ेगी। न मानना हो तो जी चाहे जहाँ जाओ। जोरू और ज़मीन—दोनों साथ नहीं सँभाली जा सकतीं। जिसे जमीन चाहिए, उसे फिलहाल जोरू का खयाल छोड़ना ही पड़ेगा। जिसे जोरू की जरूरत है, उसे रहीम बख्श की जमात में जगह नहीं मिल सकती।

तब नज्जू मियाँ को सरदार की बात पर हँसी आती थी—कह क्या रहा है सरदार! जोरू आई तो क्या हुआ—उससे जमीन का क्या बिगड़ता है, और क्यों? बल्कि औरत होने से कितनी सहूलियतें होती हैं! पकाना-चुकाना जैसा उनसे बनता है, मर्दों से वैसा बन सकता है भला? तमाम दिन की कड़ाचूर मेहनत के बाद तो घर आये, जरा देर सुस्ताए न सुस्ताए कि चूल्हा फूँको और रसोई बनाओ। रसोई को छोड़ दो तो

भी औरत रहने से घर की शकल ही कुछ और होती है। सरदार खुद अकलमंद है, इतना भी नहीं समझता !

पिछले दिनों की बात आज नज्जू मियाँ को फिर याद आई, सरदार ने जो कहा था, उसका उसका मर्म आज समझ में आया। ठीक ही तो कहा था। उसकी सारी बातें मानता तो आज मन में यह तकलीफ क्यों रह जाती ? सहसा वह चौंक उठा, 'अरे, मैं सोचने क्या लगा। लगाम छोड़ दो तो फिक्र का भी कहीं अन्त है ! इतना तो सोचता रहा, मगर सोचने से क्या मन का दुःख गया ?'

न, जवानी के वे दिन, खुशियों के वे दिन अब नहीं लौटने के। पद्मा पर पाल उड़ाकर लदी नौका जिस आसानी से जाती है, उसके भी काम-धन्धों से लदे वे दिन कैसे सहज गुजरे ! हेमंत की पद्मा आज शान्त है, अपनी जिन्दगी भी उसी-जैसी निथर आई है। जो अल्हड़ जवानी नदी की भादों में रहती है, उसका लेश आज भी रह गया है, मगर जवानी की वह दुर्वार शक्ति क्या फिर लौटने की है कभी ?

छाती के अन्दर नज्जू मियाँ का कलेजा जैसे उमेठा गया हो। एक निःश्वास छोड़कर उसने सोचा, 'नः, यही ठीक है। उम्र के साथ लहू की रवानी मद्धिम पड़ रही है; आँखों की ज्योति धुंधली होती आ रही है। तो जी की जलन भी क्यों न इसी के साथ कम हो जाय ?

भरी पद्मा की ओर निहार कर उसका मन भर आया। बरसाती नदी का अल्हड़ स्रोत शान्त पड़ गया है। आश्विन के अन्त में पानी का भार तो है, पर वह धारा नहीं रही। उसे लगा, पद्मा मानो उसकी घरवाली है। कितने दिन, कितनी साँझें उसके साथ गुजरी हैं, कितने अन्धड़-तूफान, आपद्-विपद साथ झेलकर उसके अपने बालों में सफेदी झाँकने लगी है।

बार-बार उसे उस दिन की याद आने लगी, जब वह पहली बार पद्मा के किनारे आकर खड़ा हुआ था। एक तो यह खूँखार नदी गरजती भाग रही थी—पानी का कहीं अंत ही नहीं हो जैसे। तिस पर यहाँ

की परती पड़ी ऊसर-जमीन की यह रूखी शकल ! न आदमी न आदम-जाद । सफेद बालू, दलदल और उसी में जंगल ! सरदार पर नजर डालकर नज्जू मियाँ ने सोचा, ऐसी जमीन को जोता-बोया कैसे जायगा ?

रहीम उसके मन की ताड़ गया । उसे पास बुलाकर कहा, "जमीन की शकल देखकर घबरा मत बेटे ! यह माटी नहीं, सोना है सोना ! साफ-सुथरा करके एक बार बोकर तो देखो, दुगनी-तिगुनी फसल लगेगी । नदी के पेट से निकली है माटी—भदई धान और रब्बी फसल के ढेर लग जायँगे । हाँ, मेहनत चाहिए ।"

मशक्कत से नज्जू मियाँ को परहेज नहीं था और उसने मेहनत की भी खूब । पौ फटते ही धुँधलके में वह चौंककर उठ बैठता । उसे धोखा होता कि देर हो गई । जग जाता तो फिर आलस कैसा । उसी वक्त से काम पर हाजिर—सुबह की रोशनी चारों ओर लोटी पड़ रही है, जलता हुआ सूरज सिर के ऊपर आ धमका है, मगर वह काम कर रहा है सो कर ही रहा है । दोपहर को दो मुट्ठी अन्न पेट में पड़ना ही चाहिए, हड्डी तोड़ मेहनत से शरीर अवश हो आता । केवल इसीलिए दौड़कर दो कौर खा आता और फिर वही चोटी का पसीना एड़ी तक । उस वक्त तक उसका अपना मकान बन नहीं सका था । मकान के बारे में सोचने का उसे वक्त भी कहाँ था ? रहीम बख्श को भी उससे ममता हो आई थी । जवान लड़का, गठा हुआ बदन, सुकुमार सखुए के पेड़-सा तरुण मन । उसकी पीठ ठोककर कहता,—"तेरी मेहनत बेकार नहीं जाने की बेटे, हर्गिज नहीं । सीधे मन, सीधी राह चलना—कोई फिक्र नहीं रहेगी ।"

उस समय नज्जू मियाँ के देह-मन में दानव की ताकत थी । काम का अन्त नहीं, नहीं उसे साँस लेने की सुध । उसके उत्साह की कोई सीमा नहीं थी । दो मुट्ठी खाकर दोपहर की चिलचिलाती धूप में खेत जाता सो धूप पच्छिम को झुक पड़ती, दूर-दूर के गाँवों की घनी छाँह में अँधेरा जम आता, थके हाथ में हल की मुट्ठी ढीली हो आती, मगर

उसका काम खत्म नहीं होना चाहता। फिर वेगवती बाढ़-सा अँधियारा उतर पड़ता, अपने को ही अपना हाथ नहीं सूझने लगता। लम्बी उसाँस भरकर लाचार वह कन्धे पर हल लिये धीरे-धीरे घर की ओर चल पड़ता।

काम भी बहुत थे। जंगल काटना, करीने से खेत तैयार करना टीले काटकर गढ़े भरकर बसने योग्य बनाना—यह सब कोई आसान काम था? जहाँ भूले कभी हल नहीं पड़ा, जिस माटी ने कभी आदमी का वश नहीं माना, उसे उपजाऊ बना डालना कोई ठट्ठा है? घरबार-हीन महज मेहनत का भरोसा—ऐसे मजूरों की जमात में बैलों का ठिकाना कहाँ! गाँव-भर में गिने-गिनाये कुल दो जोड़े ही बैल थे, बारी-बारी उन्हीं से सब का काम चलता। एक के खेत की जुताई चलती, तो बाकी सब लोग मुँह ताका करते, खेतों में ढेले तोड़ते या निराई करते। मगर ऐसे भी काम चलता है कहीं? जुताई के दिनों होड़ पड़ जाती, छीना-झपटी होने लगती—पहले किसकी बारी?

नज्जू मियाँ चुप बैठने वाला आदमी ही न था। उसने अपनी जमीन में कुआँ खोदना शुरू कर दिया। उसी की निकली मिट्टी घर उठाने का काम दे जायगी। एक ही साथ दो काम निकल आयेंगे। एक दिन उसे एक नई तरकीब सूझी। खेत जोतने का दिन आ धमका। आज उतरे कि कल उतरे वर्षा। मगर बैल की तो महज दो ही जोड़ियाँ हैं। बारी के आसरे बैठे रहने से शायद ठीक जुताई का मौका ही न मिले। यही नौबत उसके हम-उम्र और कई लोगों पर थी।

सोचते ही वह अपने दोस्त असगर के पास पहुँचा। वह अपने खेत में घास निरा रहा था। जरा देर उन्होंने आपस में बातें कीं और एक तीसरे संगी को बुला लाये। बूढ़ों की जमात को आश्चर्य-चकित करके नज्जू और असगर ने अपने कन्धों से हल खींचना शुरू किया। उनकी देखादेखी कुछ दूसरे लोग भी जुट पड़े। बैलों का मुहताज होकर उनकी खेती अब नहीं बर्बाद होगी।

जवानी के उन दिनों मेहनत जितनी अधिक थी, उसी में खुशी भी उतनी ही थी। नज्जू मियाँ के होंठों की हँसी खो-सी गई—वे पुराने दिन फिर कभी लौटेंगे ? तब असगर उसका जिगरी दोस्त था, एक जान दो कालिब और आज असगर उसका जानी दुश्मन है। दोनों के खेत-खलिहान आज भी पास-पास हैं। नज्जू मियाँ ने नजर उठाकर देखा। इस पार उसके खेत-खलिहान हैं, उस पार नज्जू मियाँ के; बीच में बहता है एक छोटा-सा नाला। बाहरी शकल-सूरत में कोई फर्क नहीं पड़ा, मगर मन में महान परिवर्तन हो गया है। उसका मन और भी उदास हो गया। सोने की फसल से उसके खेत जैसे भरे-पूरे हैं, असगर के खेतों में भी सोने की वैसी ही इफरात है। नज्जू मियाँ ने मन में कहा, या अल्लाह, तेरा यह क्या फैसला है कि मुझे दो दाने देता है तो मेरे दुश्मन का भी भंडार भर देता है ?

असगर और नज्जू मियाँ आज भी वैसे ही पड़ोसी हैं। मगर तब और अब में कैसा आसमान-जमीन का फर्क है ! तब दोनों में हँसी-खुशी और मुहब्बत थी, आज हिंसा, बैर और दुःख का समंदर है। जमाना गुजरा, मगर चाह कर भी ये बातें वह भुला कहाँ सका ? किसी दिन भुला सकना मुमकिन भी है ?

जबर्दस्ती उसने नजर फेर ली—असगर के खेतों में सोने की यह बहार वह क्यों देखे ? दुश्मनी के बारे में सोचने से क्या फायदा ? खुदा ने उसे जितना कुछ दिया है, वही ठीक है। औरों की बुराई सोचने का समय भी कहाँ है। खेतों में लगी है फसल, किसानों की जरूरत है, मजदूरों की जरूरत है। नावों की मरम्मत बाकी है। फटे पालों को सीना है, धान रखने की जगह बनानी है। कहाँ तो इतने सारे बाकी पड़े हैं काम और कहाँ वह पुरानी दुश्मनी का पचड़ा ले बैठा है। खुदा की मेहरबानी कैसे भुलाई जा सकती है। खाली हाथों यहाँ आया था, आज खुदा के फजल से उसे कमी किस बात की है ? जमीन, मकान, खलिहान, बाग-बगीचे, पोखर—क्या नहीं है अपना ? गाँव के लोग

भी उसे मुखिया मानते हैं, आदर-मान देते हैं। फिर मन में यह सब क्यों ? अल्हम्दुलिल्लाह, खुदा का लाख-लाख शुक्र है, मन में अब ऐसी फिजूल की बातें नहीं लाता !

——एक

नदी से लगा-लगा खड़ा था नज्जू मियाँ का घर। था तो मिट्टी का—मिट्टी की दीवार, सन की छौनी, मगर दिन-रात के सेवा-जतन से आठों पहर झकमक। लिपेआँगन में क्या मजाल कि कहीं कतवार का टुकड़ा भी रह जाय। अन्दर रहते हुए भी बूढ़ी आयशा की निगाह से कुछ बच नहीं पाता।

थोड़ा खुला छोड़कर अन्दर तीन कमरे थे। बीच में सनाठी का घेरा आबरू बचाये था। हँसकर आयशा कहती, तीन काल गँवाकर जो मौत की दहलीज तक जा पहुँची है, उसके लिए यह पर्दा-वर्दा क्या ?

आयशा के दिन कमिये-मजूरों की निगरानी और बाँदियों को आदेश देते गुजरते। बहुत सुबह से ही वह मुस्तैद हो जाती और रात जब एक-एक का खाना-पीना चुक जाता, तो दो-चार कौर खाकर बरामदे में चटाई पर लुढ़क पड़ती।

नज्जू मियाँ कहा करता, "आखिर तुम्हें इस कदर मेहनत करने की जरूरत भी क्या है अम्माँ ? सारी जिन्दगी तो खटते ही गुजरी है, अब खुदा के फजल से दो दानों की खुशहाली है, आराम से बसर करो।"

आयशा हँसती। कहती, "मालिक का ब्याह करा दूँ, बहू आकर घर-गिरस्थी सँभाल ले, फिर तमाम दिन आराम से सिर्फ चर्खा कातती और पान खाती रहूँगी।" फिर शिकायत करती हुई कहती, "मगर

तुम्हारा तो इधर खयाल ही नहीं है। एक ही तो लड़का है, ठोंक-बजाकर बहू लाना है।"

हँसकर नज्जू मियाँ कहता, "तुम भी कैसी बातें करती हो अम्माँ! आठ साल की तो उम्र है मालिक की। अभी शादी न हुई, तो क्या दिन निकल जायगा?"

मगर आयशा क्यों मानने लगी? बिगड़कर कहती, "एक सुकुमार नन्ही बहू घर लाऊँगी, उसके साथ हँसी-खुशी से खेलूँगी—अपने मन के मुताबिक उसे तैयार करूँगी। लेकिन तुम्हारे आलस के कारण यह सपना पूरा होने का नहीं।"

नज्जू मियाँ जवाब न देकर हँसते-हँसते निकल जाता।

गुस्से के मारे आयशा और भी जोर-जोर से चर्खा चलाने लगती, बाँदियों पर कुढ़ती-बिगड़ती।

आज सुबह भी वह बरामदे में बैठी चर्खा कात रही थी। अगहन का सबेरा, हवा में सर्दी की खुनकी। सुबह की धूप मीठी मालूम हो रही थी। इतने में हाँफता हुआ मालिक आया। दूर से ही चिल्लाता आया—"जल्दी चलो दादी, जल्दी।"

आयशा उसकी ओर देखती हुई बोली, "माजरा क्या है आखिर? बेतहाशा दौड़े हो—मुँह-आँख सुर्ख हो आई हैं। बात क्या है?"

मालिक बोला, "उतना बताने की फुर्सत नहीं है। चलना हो तो चलो, वरना मैं चल दिया। मैं कहता हूँ, जिन्दगी में जो कभी नहीं देखा, अगर वह देखना हो, तो चलो।"

आयशा हँस पड़ी। बोली, "आदम के वक्त की इस बुढ़िया को नया आखिर क्या दिखायेगा बेटे? चार बीस की उमर होने को आई. इन जली आँखों क्या-कुछ नहीं देखा, और आज तू मुझे ऐसा क्या दिखायेगा जो मैंने जिनगानी में नहीं देखा!"

मालिक ने कहा, "तुम बैठी रहो अपने पुराने पचड़े लिये, मैं चला। तुम्हें न देखना है, मत देखो। मगर मैं तो नहीं रुकने का।"

जरा देर रुककर होठ फुलाकर बोला, "चलो न दादी ! तुम्हारे लिए तो मैं दौड़ा-दौड़ा आया और तुम बहाने बना रही हो।"

हँसकर वह बोली, "बहाना कैसा बेटे ! खैर, चलो। तुमने जब तै कर लिया है तो बगैर गये छुटकारा है ? मैं क्या तुम्हें पहचानती नहीं ?"

खुशी से मालिक उछल पड़ा,—"तो फिर चल ही पड़ो। जरा भी देर न हो।"

आयशा ने कहा, "दम भी लो भैया, यह हड्डी ठहरी पुरानी, यह क्या तुम्हारे मुकाबले चल सकती है ?"

रुई सहेजते हुए उसने आवाज दी—"कुलसुम, अरी ओ कुलसुम !"

कुलसुम चूल्हे पर दूध चढ़ाकर आँच लगा रही थी। बीस-बाईस की समर्थ लड़की, गठा हुआ बदन। अँचरे को कमर में लपेटे दूध उबाल रही थी।

आयशा की पुकार से चौंक उठी—"मुझे आवाज दे रही हो अम्मा ?"

आयशा झुँझलाकर बोली, "और नहीं तो क्या, मजाक कर रही हूँ ? सुन नहीं पाती, बहरी हो गई हो ?"

कुलसुम घबरा कर दौड़ी आई—"हुकुम, अम्माँ ?"

उसके हाथों रुई थमाती हुई आयशा बोली, "चर्खे को मेरे कमरे में रख दो। खयाल रखना, रुई की तहें न बिगड़ जायँ।"

फिर वह मालिक से बोली, "अब चलो भैया, कहाँ ले चलना है ?"

जाते-जाते खिड़की के पास थमक गई आयशा। जोर से पुकारकर बोली,—"जो-जो काम कहे जाती हूँ, कुलसुम, याद रहे। गुलाबो से कहना, मछली बना ले, सब्जियाँ काट-धोकर तैयार रक्खे। और तू चर्खे को कमरे में रख कर अँगना लीप लेना। आने पर सब कुछ तैयार पाऊँ, नहीं तो...."

मालिक से और न रहा गया, दादी का हाथ पकड़ कर खींचने लगा —"तुम्हें तो बस काम ही काम है—यह हुकुम, वह फरमाइश और इधर देर हुई जा रही है।"

आयशा बोली, "अच्छा, लो चलो भैया, चलो।"

बनता तो मालिक दौड़ लगाता। आयशा के हाथ से झूल-झूलकर कहने लगा, "जानती हो हुआ क्या है दादी ? तुम्हें तो मैं कितनी बार कह चुका हूँ कि मछुओं के साथ गाजी की टेक जाऊँगा, देखूँगा कि बड़ी धार में वे मछलियाँ कैसे पकड़ते हैं। मगर तुम तो मेरी सुनने से रही। अब्बा से कहता हूँ तो वह हँसकर रह जाते हैं। कहते हैं, उफ़, वहाँ बड़ी तेज धार है ! चक्कर में पड़ जाय, तो मछुए की नावों की भी खैर नहीं। लेकिन मैं पूछता हूँ, फिर ये मछुए मछली मारते कैसे हैं ?"

आयशा बोली, "दम भी लो, चलते-चलते यों ही हाँफ रहे हो, ऊपर से फिर बक-बक।"

मालिक ने उसकी बात पर कान ही नहीं दिया। कहता चला गया, "अब्बा कहते हैं, मछुए मजबूत जवान होते हैं। तैर कर पद्मा पार कर सकते हैं। शिकार में जाने से पहले मन्नत मानकर तब नाव पर पाँव रखते हैं। यह सब सच है दादी ?"

आयशा ने कहा, "मुझे बका मत। चलते-चलते दम फूल गया।"

मालिक कहने लगा, "उस दिन अपने बेटे के साथ मधु आया था। कह रहा था हाजीगंज में बेशुमार मछली हैं, वहाँ जाल डाला जाय, तो ढेरों मिले। वह नाव और जाल माँगने आया था। मैंने अब्बा से मुझे साथ ले चलने को कहा। वे बोले—'तुम क्या करोगे जाकर, वहाँ तुम मछली नहीं पकड़ पाओगे, मछलियाँ तुम्हें पकड़ ले जायँगी।' "

आयशा बोली, "बेजा क्या कहा उसने। कहीं राघव बुआर तुम्हें पकड़ ले तो कहीं पता भी न चलने दे।"

तुनककर मालिक बोला, "पता न चलने दें, जैसे मैं बुआर पकड़ने की हिकमत जानता ही नहीं। मैंने कहा अब्बा से कि मुझे ले चलिए,

देखिए, मैं बुआर पकड़ देता हूँ कि नहीं। मगर उन्होंने कहा, 'इसके लिए बड़ी धार में जाने की जरूरत नहीं, तुम यहीं बंसी में कोई फँसा दिखाओ।' ''

मालिक आयशा के और पास आ गया। बोला, "जानती हो दादी मैंने किया क्या ? कल रात मचान से उतारा बड़ा काँटा। उसमें लगाया एक मेढ़क और नदी में डाल आया। आज तुम्हारी नींद टूटने से भी पहले मैं दौड़ा नदी किनारे पहुँचा। बताओ तो भला, क्या फँसाया मैंने ?"

मालिक हाँफता जा रहा था। कुछ तो थक जाने से और कुछ दादी को भली तरह समझाने की गरज से। वह रुक गया। जिज्ञासा भरी आँखों से दादी के मुँह की ओर देखने लगा।

आयशा ने कहा, "मैं भला क्या जानूँ कि तुमने उसमें कौन-सी दौलत फँसाई है ?"

"बस तुम्हें तो हर बात में मजाक सूझता है", मालिक ने कहा। "मगर मैं जो कहूँगा, सुनकर हँसते भी पार न पड़ेगा। कह ही दूँ। जाकर देखा, बंसी में शिकार तो फँसा है। धागे को बेहद जोर से खींचे जा रहा है। मैं खींचना चाहूँ कि तन जाय। मैंने बंसी में हाथ क्या लगाया, लगा नदी में आँधी उठ आई है। इतने में किनारे के उस खूँटे पर नजर गई, जिसे मैं ठोंक-ठोंककर गाड़ आया था। खूँटा लगभग उखड़ गया था। लाख सर मारकर कर भी जब शिकार को किनारे लगाते नहीं बना, तो मैंने खूँटे को फिर से मजबूत ठोंका। ठोंककर इदरिस की खोज में निकला।"

आयशा हँसने लगी। कहा, "फिर तो तुम्हारे अब्बा ने दुरुस्त कहा था कि बुआर मार लाना तुम्हारे बस का नहीं।"

मालिक ने कहा, "पहले बात तो सुन लो, फिर जी-चाहे जितनी टीका-टिप्पणी करना। इदरिस को तो बुला लाया। वह भी पसीने-पसीने हो गया—हार बैठा। उसने एकदम किनारे उतरकर जोर लगाया कि बल मिलेगा। नतीजा यह हुआ कि खुद पानी में जा रहा। मैंने

कहा, "इदरिस चाचा चलो डोंगी लेकर पानी में उतर पड़ें। बरछे से उसकी खबर लूँ।" इदरिस बोला, "खबरदार, पानी में पाँव हर्गिज मत डालना। यह मछली नहीं, बेशक मगर है। सिर पर पैर रख कर घर को भागो। अपने अब्बा से कहो, जितनी जल्दी हो सके दस-बीस आदमी ले आओ।"

जरा रुककर आयशा को वह देखता रहा। बोला, "अब्बा को खबर देकर ही मैं तुम्हारे पास पहुँचा। लेकिन तुमने तो इतनी देर लगा दी कि शायद अब तक लोग मगर को मार कर ऊपर ले आये हों।"

पेड़ों से ढँकी बस्ती की राह खत्म हो गई। खुले में आते ही विराट् नदी सामने दिखाई पड़ी। हेमंत की स्निग्ध ज्योति में किसी अजगर जैसी पड़ी है। किनारे एक भीड़ है—दस-बीस लोग जाने क्या बोल-बतिया रहे हैं, बहुत व्यस्तता से आ-जा रहे हैं, रस्से से कुछ खींचा-तानी चल रही है। मालिक अपने को और न सँभाल सका, दादी का हाथ छोड़-कर भागा नदी की ओर।

सोचा जा रहा था कि मगर को मारा आखिर कैसे जाय? यह तो साफ जाहिर हो चुका था कि काँटे में मछली नहीं, मगर ही फँसा है। दर्द और गुस्से से कभी-कभी वह पानी के ऊपर तैर आता था। तोड़ भागने की कोशिश से भी बाज नहीं आ रहा था, परन्तु फँसा इस बुरी तरह था कि निकल भागने की कोई गुञ्जाइश नहीं थी।

एक कमिये ने कहा, "आप कहो सरदार तो साले को खींचकर ऊपर ले आऊँ।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "नामुमकिन है रमजान। ज्यादा खींच-तान करोगे तो धागा टूट जायगा। यही ताज्जुब है कि अब तक उसने काँटे को काट कैसे नहीं दिया। खींचने से तो जरूर कट जायगा।"

रमजान ने कहा, "बंसी को काट देना उतना आसान नहीं है सर-दार। सूते को तीन बार तो बँटा है, फिर उसमें तार मिला दिया है। जहाँ पर बंसी जुड़ी है, वहाँ चौगुना तार है। काटना चाहे भी तो साले

का दाँत टूट जायगा।"

नज्जू मियाँ ने कहा—"इसीलिए कम्बख्त अभी तक भाग नहीं पाया है, फिर भी सावधान की मौत नहीं। ज्यादा खींचतान से तार भी कट जा सकता है। उससे तो बेहतर यही है कि नाव उतारो। खींचने से जब वह पानी पर तिर आये तो बरछे का घाव लगाकर मार डाले।"

अब तक मालिक आँखें फाड़-फाड़कर सब सुन रहा था। नाव की जो बात आई तो उससे चुप नहीं रहा गया। बोला, "नाव पर मैं भी चलूँगा।"

सभी हँस पड़े। बोले, "बेशक। मालिक नाव पर न होगा तो बरछा चलायेगा कौन?"

रमजान बोला, "उसे नाव पर ले लेने में हर्ज भी क्या है? हम सभी तो रहेंगे...."

नज्जू मियाँ ने गम्भीर होकर कहा, "यह कोई हँसी-खेल नहीं है रमजान! चोट खाये बाघ और मगर से मजाक नहीं चलता। मालिक दादी के साथ किनारे रहेगा; जो देखना है, यहीं से देखेगा।"

रमजान ने कहा, "नाव तो उतार लेंगे, मगर साले के पास जाया कैसे जायगा? घाव खाकर आगबबूला तो हो ही गया है, नाव देखकर तो पागल हो उठेगा। एक बार जम कर पूँछ मार बैठे, तो नाव चूर-चूर ही जायगी।"

नज्जूमियाँ बोला, "रमजान का कहना ठीक ही है। नाव बड़ी लो और चारों तरफ बाँस का घेरा डालो। उसपर हाथ में लग्गी लिये खड़े रहो। शैतान का बच्चा पास आये तो दे लग्गी। बरछा लेकर खुद मैं रहूँगा।"

सब ने नज्जू का विरोध किया—"यह न होगा सरदार। तुम्हारी उम्र हो आई। अब न आँखों में वह तेज है, न हाथों में वह कमाल। यह काम ठहरा जवान का। तुम रईस हो, बुजुर्ग हो। राय-मशविरा दो, काम बजा लायेंगे हम लोग।"

नज्जूमियाँ ने कहा, "नहीं, नहीं, वह नहीं होने का। बरखा लिये मैं ही रहूँगा। अभी भी खुदा के फजल से तुम-जैसे दो दो के लिए अकेला काफी हूँ, और तुम लोग मुझे निकम्मा बनाना चाहते हो?"

आयशा एक तरफ खड़ी थी। उसने नज्जूमियाँ को बुलाकर कहा, "तुम्हारी अकल मारी गई है। खामखा बहादुरी दिखाने में आफत न मोल ले बैठो। मालिक अभी मासूम बच्चा है, खुदा न करे, तुम पर कोई विपत्ति आ पड़े, फिर उसे देखेगा कौन? अपनी बूढ़ी अम्मा का न सही, कम-से-कम अपने बच्चे का खयाल करो।"

नज्जूमियाँ ने कहा, "तुम्हारी इजाजत बगैर मैं जा कैसे सकता हूँ अम्मा। मगर एक बात सोच देखो। सारा गाँव मुझे मुखिया कहता है, सरदार मानता है। मैं अगर दूसरों को आफतों के मुँह में डालकर खुद बगल झाँकूँ तो क्या मुँह दिखाने लायक रहूँगा? तुम मुझे खुशी-खुशी इजाजत दो अम्मा।"

आयशा ने कोई जवाब नहीं दिया, मुँह भारी किये खड़ी रही। नज्जूमियाँ फिर बोल उठा, "तुम तो जानती ही हो अम्मा, कि मुखिया बनने के पीछे असगर किस बुरी तरह पड़ा है। दाँव पर पाने से मैं बाज नहीं आ सकता और मौका मिल जाय तो वह भला क्यों रिआयत करेगा? सो तुम रोको मत अम्मा, मैं होशियार रहूँगा। नाव पर और लोग भी तो होंगे। घाव खाकर एक तो उसका तेज ही कम हो आया है, अब वह दम ही नहीं रहा।"

असगर का नाम लेते ही आयशा का चेहरा सख्त हो आया। वह जरा देर चुप रही फिर बोली, "जाना ही पड़ेगा तो जाओ, तुम्हें मैं अल्लाह के हाथों सौंपती हूँ, खुदा तुम्हें पनाह दें। लेकिन खूब सावधान, इदरिस और रमजान को साथ ले जाओ।"

आयशा ने उन दोनों को अपने पास बुलाकर कहा, "तुम दोनों भी मेरे बेटे ही के समान हो, नज्जू तुम्हारा बड़ा भाई है। मुझे जबान दो कि तुम लोग सदा उनके पास रहोगे। कोई मुसीबत न आये उस पर।"

दोनों ने दिलासा दिया, "तुम फिक्र मत करो अम्मा, जब तक हम जिन्दा हैं, मुखिया का बाल भी बाँका नहीं हो सकता। दुआ करो कि हम सभी राजी-खुशी वापस पहुँचें।"

आयशा ने मालिक को अपनी गोद में खींच लिया। कहा, "तुम तो मेरे पास रहो भैया।"

आयशा दुआ माँगने लगी। उसके सिर्फ होंठ हिलते रहे, आवाज नहीं निकली।

नौका तैयार की जा रही थी। उसी साल नज्जूमियाँ ने एक बड़ी डोंगी बनवाई थी। जोड़-जोड़ में गोबर का पोचारा, ऊपर से अलकतरा। चकमका रही थी डोंगी। पतवार के पास सिंदूर की पाँच रेखाएँ—पाँच पीर की मन्नत। जिसने भी देखा, कहना पड़ा—'इस हलके में ऐसी दूसरी नाव नहीं है।' नाव बड़ी थी तो माँझी के सिवाय भी दो और मल्लाह की जरूरत पड़ती थी। वे कभी तो डाँड़ खेते, कभी लग्गी लगाते और कभी पतवार थामते। भीतर का रकबा खासा था। लोगों ने बाँस की चचटी से खाली जगह को पाट दिया और नाव को नदी में उतारा। मधु मछुए को बंसी वाली डोरी थमाकर नज्जूमियाँ ने कहा, "खबरदार, शिकार बेहाथ न हो जाय।"

पतवार के पास एक चचटी पर नज्जू मियाँ खुद खड़ा हुआ। एक बरछा हाथ में, एक पाँव के पास रखा। उसके ठीक पीछे किनारे से लगकर खड़े हुए इदरिस और रमजान। दोनों के हाथों में लग्गी, यदि मगर नाव के पास आये तो लग्गी से उसे हटा दिया जाय। उनके भी कदमों के पास बरछे, जरूरत पड़ जाय कहीं।

नज्जूमियाँ ने मल्लाह दो के बदले चार लिये। पतवार पर बैठा बस्ती का सबसे पक्का माँझी। 'बदर-बदर' करके नाव नदी में उतारी गई। किनारे पर के लोग भी नाववालों के साथ शोर कर उठे—मालिक के गले की नुकीली आवाज सबसे ऊपर हो गई। चुप बनी रही केवल आयशा, बुत की तरह।

एक बार तो स्रोत के धक्के से नाव काँप उठी। पतवार थी पक्के आदमी के हाथ। सँभाल कर वह नाव को वहाँ ले गया, जहाँ मगर ने डुबकी लगाई थी। नज्जू मियाँ चीख उठा, "बंसी के सूत को ढीला करो।" ढील देना था कि मगर बीच दरिया की ओर दौड़ा। दौड़ा कि मधु मछुए ने सूते को खींचा। मगर पानी पर उतराया और नज्जू मियाँ का बरछा ठनाक से उसके माथे पर जा लगा। लेकिन मगर की हड्डी में इतनी आसानी से घाव लगता? बरछा छिटककर दूर पानी में डूब गया। चोट खाकर मगर गरजकर लौटा, नौका पर टूटा। लेकिन पूँछ से वार करने के पहले ही इदरिस और रमजान की लग्गियों ने उसे लौटा दिया। लग्गी की मार खाकर मगर ने डुबकी जो मारी तो एकदम लापता।

किनारे पर बातें होने लगीं। नाव पर भी राय मशविरा शुरू हो गया। मगर यदि छूट गया तो खैरियत नहीं। चोटखाया मगर आदमखोर हो ही जाता है और आदमी से बढ़कर आसान शिकार होता भी नहीं।

बड़े-बड़े मनसूबे बाँधे जाते रहे; पर किसी को कोई सूझ नहीं आई।

रमजान बोल उठा, "साला अथाह पानी में दुबका बैठा है। थाह पानी में ले आया जाय तो मैं उतर कर अकेले उसका काम तमाम कर दूँ।"

डाँटकर नज्जू मियाँ ने कहा, "उतनी बहादुरी दिखाने की जरूरत नहीं। एक तो मगर तिसपर जख्मी। ऐसे में कोई पानी में उतरे तो खैर है? तुम्हारी क्या राय है माँझी?"

बशीर अब तक चुप बैठा था। यों भी वह बात बहुत कम करता है। इस शोरोगुल में अपने होंठ सिये बैठा था। सरदार ने पूछा तो बोला, "डोर को एक बार खींच देखा जाय। बिलकुल ही न निकले तो जाल से घेरना पड़ेगा। मगर जाल को कुछ समझेगा वह?"

नज्जू मियाँ ने उत्साह से कहा, "ठीक कहा है तुमने। पहले क्यों यह सूझ नहीं आयी ?"

जोर से पुकारकर कहा, "अरे ओ मधु, एक बार डोर को ढीला तो करो, कहीं पट्ठा भागने की फिकर में दौड़ पड़े तो हचके से खींचकर ऊपर उतरा देना। और यों ही मन मारे पड़ा हो तो खींचकर थाह पानी में ले चलो, बरछे में गूँथ दूँगा।"

मगर का बच्चा अब तक चौकन्ना हो गया था। मधु ने लाख सर मारा, लेकिन वह न हिला न डुला—दुबका पड़ा रहा। उकताकर मधु ने कहा, "हर कोशिश नाकामयाब हुई सरदार! साले को बगैर जाल से घेरे काम न चलेगा। ज्यादा जोर-जार किया तो डोरी टूट जायगी।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "ठीक है, बशीर की भी यही राय है। नया और मजबूत जाल गिराओ। देखें, कैसे भागता है!"

रमजान ने कहा, "जाल को वह क्या लगायेगा, फाड़कर निकल भागेगा।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "बला से भागेगा; लेकिन जाल डालकर देखना तो है। फँसे तो बेहतर, न फँसे तो भी बेहतर! अगर पकड़ गया तो जाल के नुकसान की परवा नहीं और न फँसा तो समझूँगा, एक जाल गया। गया गया।" फिर जोर से चिल्लाकर बोला, "मधु, तुम्हारा कहना ठीक है। निरख-परखकर मजबूत जाल गिराओ। कम्बख्त ज़रूर फँसेगा, जरूर।"

वही किया गया। जाल गिराया जाने लगा। मगर के बदन से जाल का लगना था कि पानी पर बुलबुले उठने लगे। निकल भागने की कोशिश में उसने डोरी से सर मारा, परन्तु तब तक जाल ने पूरी तरह से उसे लपेट लिया। धीरे-धीरे जाल समेटा जाने लगा, तो मगर की शकल झाँक उठी। ठीक निशाना साधकर नज्जू मियाँ ने पूरी ताकत से बरछा फेंका। पीठ के सख्त चमड़े में कोई असर तो उसका नहीं हुआ, लेकिन उसके धक्के से मगर एक करवट हो गया। पेट का सफेद मुलायम चमड़ा दिख गया। लहमे में नज्जू मियाँ ने उसके पेट में दूसरा बरछा

उठाकर भोंक दिया। गुस्से के मारे मगर पानी में उछला, गोया बात-की-बात में जाल को फाड़कर निकल पड़ेगा। उसने पूँछ के वार से नाव को चकनाचूर कर देना चाहा, मगर रमजान और इदरिस तैयार खड़े थे। उन्होंने लग्गी सँभाली और पूँछ के वार को लग्गी पर ही झेल लिया। लग्गियाँ टूटकर पानी में जा रहीं। खुद दोनों उस धक्के को सँभाल नहीं सके। नाव में गिर पड़े। बरछे से बिंधा हुआ मगर पानी में छटपटाने लगा। लगा, जाल अब गया अब गया। मधु उस्ताद था, उसने जाल को ढीला कर दिया। पानी में एक बवंडर-सा उठा कर कुछ मिनटों में मगर ठंढा पड़ गया। सब ने मिल कर जाल सहित मगर को नाव पर खींच उठाया।

मल्लाहों ने 'बदर-बदर' की रट लगाई; किनारे को भीड़ ने उसे दुहराया।

नाव किनारे लगी। मगर को जमीन पर उतारकर नज्जू मियाँ ने कहा, "गनीमत है कि था बच्चा, नहीं तो आफत थी।"

रमजान ने कहा, "बच्चा है तो क्या, मगर का बच्चा है। साले के दाँत तो देखो।"

आयशा पास आ गई। बोली, "खुदा का शुकर है, सब लोग सही-सलामत वापस आ गये। मसजिद में शिरनी चढ़ाओ और एक दिन मौलूद शरीफ का इंतजाम करो। यह शिकार भैया का है—भैया का पहला शिकार।"

मालिक टुकुर-टुकुर ताक रहा था। आयशा की बात से उसे शर्म आई। उसने दादी की गोद में मुँह छिपा लिया।

——दो

इस बात को दो-तीन दिन गुजर गये। उस रोज धुलदी की पैठ थी। इलाके में इस हाट को कौन नहीं जानता? तीर में पद्मा की एक शाखा बह आई है, उसी के किनारे, बहुत बड़े पीपल की छाया में यह पैठ लगती है। नज्जू मियाँ को पिछले दिनों की याद आती है, शुरू-शुरू इस पेड़ की छाँह में कुछ किसान बैठते थे; पैकार अपनी बिसात बिछाते, बेतों की टोकरियों से रंग-बिरंगे कपड़े निकालते; शाम होते-होते खरीद-बिक्री खत्म हो जाती। बाजार समेटकर लोग अपने-अपने घर की राह लेते। किनारे का मैदान सूना पड़ा रहता और खड़ा रहता उसके किनारे पीपल का वह प्रकांड पेड़।

आज धुलदी की बात ही और है। मकान पक्के बन गये हैं। टीन की छौनी वाले कमरों में कतार से दूकानें लग गई हैं। पीपल का वह पेड़ है तो आज भी, लेकिन अब बीच हाट में न होकर एक कोने में अकेला पड़ गया है। गाछ का वह पुराना रूप-रोब नहीं रहा। पुरानी डालें खोखली हो आई हैं, चारो ओर नई जड़ें उभर आई हैं—लगता है कोई पुराना किला हो। अब वहाँ कोई दूकान नहीं लगाता। उसके नीचे चरवाहे छोकरे बैठकर बीड़ी फूँका करते हैं; दोपहर की धूप में उसी की छाया से ढोरों पर निगरानी रखते हैं।

पुराना बाजार अब नदी के और पास खिसक आया है। अब यहां आढ़तिये भी हैं। न सिर्फ वहाँ खरीद-बिक्री होती है, बल्कि देश-विदेश की बहुत सारी खबरें भी वहाँ से सर्वत्र फैलती हैं। इस गाँव की बात उस गाँव को पहुँच जाती है, उस गाँव की इस गाँव को। इस आवा-गमन में खबर की सूरत-शकल भी बदल जाती है। दस जबान पर चढ़कर तिल को ताड़ होते देर क्या लगती है?

इसी से हाट जाकर नज्जू मियाँ को यह खबर मिली कि उसके दस साल के लड़के ने बीस गज लम्बे मगर को मार गिराया है। किस तरीके से मारा—इस पर भी ढेरों अटकल पच्चियाँ! किसी ने कहा, 'लड़का नहाने को नदी में उतरा था। पाँव के पास ही बीस गज का बहुत बड़ा मगर निकल पड़ा। निकलना था कि लड़के ने बरछे से उसका काम तमाम कर दिया।' किसी ने टिप्पणी कसी—'बरछा लेकर भी लोग नहाने जाया करते हैं? दरअसल वह बुआर के शिकार को गया था। अँधेरे में ठीक अन्दाजा नहीं कर सका। उसे मछली का धोखा हुआ। वह तो तकदीर अच्छी थी कि बरछे की नोक मगर की आँख में जा बैठी।' सहज में सुननेवाला कोई न था। सो पहले ने कहा, जिसने कि नहाते वक्त मगर मारने की बात उड़ाई थी, 'अपनी ये दलीलें अपने पास रखो। तुम्हारी बातों में आकर आँखों देखी का एतबार न करूँ?'

बात बढ़ती ही गई। राह चलते लोगों ने नज्जू मियाँ को घेर लिया। सब पूछने लगे कि बाकया क्या था। क्या सचमुच ही मालिक ने बीस गज लम्बे मगर को मारा है? नहाते वक्त मारा कि मछली मारते वक्त? और दिन होता तो सवालों की ऐसी झड़ी से नज्जू मियाँ जल-भुन जाता, मगर आज उसे अच्छा ही लग रहा था। दूसरों का आदर-सम्मान भला किसे नहीं अच्छा लगता?

दर्जियों की दूकानों की कतार जहाँ खत्म और मनिहारी दूकानों की शुरू हुई है, वहीं पर एक हकीम ने साइन बोर्ड लगाकर दूकान खोल ली। हकीम तो हर्कीम ही हैं। कई लोग बताते हैं कि दर्जी मुहल्ले का एक आदमी पच्छिम भाग गया था। वहाँ उसने पुड़िया बाँधना सीख लिया, कुछ दवाओं के नाम रट लिये और हकीम साहब बन बैठा। कुछ लोग यह भी कहते हैं—'पच्छिम-फच्छिम तो दूर, बंगाल की हद के बाहर ही कदम नहीं रक्खा। लेकिन हज्जाम का बच्चा है तो होशियार, फिर साल-भर एक विदेशी हकीम का गाँठ-मोट ढोता रहा—वहीं तक अकल की दौड़ है।'

सो दर्जी मुहल्ले का ही लड़का हो या हज्जाम का, फिलहाल अचकन पहने, घनी काली दाढ़ी के अन्दर अँगुली चलाते हुए जब अरबी-फारसी की बुकनी छोड़ता है, तो लोग-बाग अवाक् रह जाते हैं। अपनी बात शायद आप भी नहीं समझता; और इसी का क्या ठिकाना कि अरबी-फारसी ही बोलता है! गाँव के सीधे लोग, हकीम साहब का सिर हिला-हिलाकर बोलना सुनते हैं और दंग रह जाते हैं।

दूकान के बाहर का साइन बोर्ड हकीम साहब के व्यवसाय का एक अंग ही है। काली पटरी पर लाल हरूफ में उनका नाम लिखा है। एक तरफ हड्डियों के ढाँचे से एक दुबले आदमी की तसवीर, दूसरी तरफ एक हट्टा-कट्टा पहलवान। औरों की जाने दें, खुद हकीम साहब भी हर रोज दो-तीन बार उस साइन बोर्ड को देखते। जाने वे हरूफ स्वर्ग की दौलत हैं, देखकर जी नहीं भरता।

ईर्ष्यालु लोग हकीम साहब की बाबत तरह-तरह के किस्से सुनाते, पर रोग-दुःख में उनके पास दौड़े जाते। हकीम साहब कभी तो किसी को पानी पढ़कर देते, कभी हाजमा-पाचक और कभी जाने क्या मन्तर पढ़कर फूँक मार देते। कहते 'जाओ सब ठीक हो जायगा। सुरा या सीन पढ़कर तीन बार फूँक दिया, अब कोई खतरा नहीं!'

हकीम साहब को अचकन से जुदा शायद किसी ने कभी देखा हो। कभी शायद वह साफ रही हो, अब तेल और धूल लगते-लगते उसका जो रंग हो गया है उसे काला भी कह सकते हैं, मटमैला भी। लम्बे, ढीले कुरते पर काली छिदरिया, किनारे-किनारे लाल धागे का काम। हकीकत में वे लम्बे नहीं थे, लेकिन उस ढीले-ढाले पहनावे और कसी-कसाई छिदरिया से देखने में लम्बे लगते थे। धीरे-धीरे चलते, बातें जैसे गिन-गिनकर कहते। हाट के लोग उन्हें देखकर सम्मान से राह छोड़ देते। कहते, 'सलाम हकीम साहब!' वे भी गम्भीर होकर जवाब देते—'अस्सलाम वालेकूम' या 'रहमत उल्लाह', या 'बरकताहु।'

आज लेकिन नज्जू मियाँ को देखकर हकीम साहब की वह गम्भी-

रता जाती रही। लपककर दूकान से बाहर निकले।

"सलाम, मुखिया साहब, सलाम! अभी-अभी आपकी ही बा रही थीं। आइए, एक चिलम तम्बाकू पी जाइए।"

नज्जू मियाँ तो अवाक्! बात क्या है आखिर! हकीम साहब तो कभी किसी को बुलाकर बैठाते नहीं, तम्बाकू नहीं पिलाते। खैर! मन में कुछ खुशी ही हुई। बोला, "आज जरा जल्दी थी, हकीम साहब! लेकिन जब आपने तलब किया है तो टाल भी कैसे सकता हूँ?"

हकीम साहब के कमरे में एक बहुत बड़ी चौकी पड़ी थी। दीवाल से लगी खड़ी थीं दो आलमारियाँ। एक आलमारी का पल्ला टूटकर फाँक हो गया था। अन्दर की सजाई शीशियाँ दिखाई दे रही थीं। चौकी लगभग नंगी पड़ी थी। एक कोने में दीवार के पास कुछ दूर तक दरी पड़ी थी, दरी पर फर्श बिछा था—मैला। दो तकिये थे, एक बेत का पंखा। तकिये के पास पीतल के डब्बे में पान, सुपारी, जर्दा।

अन्दर ले जाकर हकीम साहब बोले, "आइए मुखिया साहब, बैठिए।"

नज्जू मियाँ चौकी के खाली हिस्से में बैठने जा रहा था। हकीम साहब ने कहा, "उधर क्यों! इधर आइए, इतमीनान से पाँव फैलाकर तकिये के सहारे बैठिए। आप लोग इज्जतदार आदमी हैं। भला आपको नंगी चौकी पर बैठने दे सकता हूँ। आप ही लोगों के लिए तो दरी जाजिम है।"

नज्जू मियाँ को शुरू में तो अचरज हुआ था। अब सन्देह हुआ। आखिर इतनी खातिर का मतलब क्या है? जो भी हो, वह चुपचाप बैठ गया। तकिये से टिककर हकीम साहब को जिज्ञासा भरी नजर से देखने लगा।

दो-एक बार खाँसकर हकीम साहब ने नाक झाड़ी। ढीले कुरते के हाथ से भली तरह नाक पोंछकर बोले, "एक चिलम तम्बाकू?"

मन में तो नज्जू मियाँ शंकित रहा। मुँह से बोला, "जैसी मर्जी आपकी।"

हकीम साहब ने आवाज दी, "केदार, अरे ओ केदार !"

धौंकते-धौंकते कंकाल-सार एक मूरत सामने आई—हकीम साहब का नौकर केदार। हर हुकुम बजाता, आलमारी में से दवा-दारू निकाला करता, बुलाहट होने पर दवा का बक्स माथे पर लिए हकीम साहब के पीछे-पीछे चलता। लोग कहा करते, 'हकीम साहब की दवा में करामात है, नहीं तो भला यह सींकिया पहलवान कब का हवा में उड़ गया होता।'

कहाँ का है यह केदार, किस जाति का है—कोई नहीं जानता। उसकी एक बहुत बड़ी खूबी थी कि बिना पूछे वह कुछ नहीं बोलता। और बोलता भी तो 'हाँ'-'ना' में ही खत्म कर देता। इसलिए वह हकीम साहब को बड़ा पसन्द था। लाख बक-झक करें, उसके बगैर उनका दो पल भी नहीं चलता।

केदार आकर हकीम साहब की तरफ ताकता रहा।

हकीम साहब बोले, "बेवकूफ की तरह खड़ा क्या है ! मुखिया जी के लिए एक चिलम तम्बाकू भर ला।"

फिर भी केदार ताकता ही रहा, कुछ बोला नहीं।

हकीम साहब जैसे फुफकार उठे, "सुन नहीं पाता ? जा, जल्दी तम्बाकू भर ला।"

केदार फिर भी आगा-पीछा ही करता रहा। हकीम ने कहा, "गूँगा हो गया तू ? अबे कुछ कहना है तो कह डाल।"

अब केदार की जुबान खुली। फिसफिसाकर पूछा, "कौन-सा हुक्का ?"

हकीम साहब की तो आँत तक में आग लग गई। शुबहा भी इसी बात का था। यह ठीक है कि नज्जू मियाँ को खुद बुलाया है, तम्बाकू पीने का आग्रह किया है; मगर वह एक किसान है, अपने हाथों हल जोतता है, हकीम साहब के जी में यह बात गड़ रही थी। हकीम साहब का खयाल था, केदार नारियल उठा लायेगा। मगर अब जब नज्जू

मियाँ के सामने ही बात निकल आई, तो बेचारे करें क्या ! बोले, "तेरे आज तक अकल नहीं आई ? छोटी-छोटी बात भी तुझे समझाकर ही कहनी पड़ेगी। देख नहीं रहा है कि मुखिया जी पधारे हैं ! जा, जरा ठीक से गड़गड़ा भर ला।"

केदार अन्दर चला गया। हकीम साहब ने खाँसकर गला साफ किया और बोले, "सच पूछिए मुखिया साहब, आप जैसे कुछ शरीफ लोग हैं कि इस इलाके में रहा जाता है, नहीं तो कमिये-किसानों की ही तो भरमार है।"

नज्जू मियाँ इस रहस्य को ठीक-ठीक समझ नहीं सका। वह दाढ़ी में अँगुली चलाने लगा। हकीम साहब बोले, "देखिए मुखिया जी, लाख हो, वाजिब बात जरूर बोलूँगा, चाहे जिसकी हो। मेरे पास रिआयत नहीं। उस रोज का किस्सा है, दवाई के लिए उस पार के कुछ लोग आये थे। पूछ रहे थे, 'इस इलाके के मुखिया कौन हैं ?' मैं ने आपका नाम लिया। कहने लगे, 'हाँ, नाम तो सुना है, इज्जतदार आदमी है।,"

मन-ही-मन नज्जू मियाँ को बड़ी खुशी हुई; मगर दिखाया कुछ ऐसा कि मानों यह कोई अनहोनी बात न हो। यह तो मालूम ही था कि वैसा मुखिया न तो पद्मा के इस पार है, न उस पार। सो दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोला, "आपकी बात, अपनी भी क्या बकत है ! यह तो आप-जैसे लोग हैं कि दूर-दराज के लोग जब-तब आ जाते हैं, मुझ-जैसे ग़रीब-गुरबों से जान-पहचान हो जाती है। दो-चार लोगों से जान-पहचान जो है, वह तो आप ही जैसों की दुआ की बरकत है।"

इतने में केदार गड़गड़ा भर लाया। चौकी पर उसे रखकर चिलम फूँकने लगा।

हकीम साहब बोले, "तो शुरू करें।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "ऐसा भी होता है ? आप जाने-माने आदमी हैं, बुजुर्ग हैं। आप दो-एक कश पहले ले लें, फिर अपनी बारी।"

हकीम साहब ने कहा, "नहीं-नहीं, एक तो आप मेहमान ठहरे, फिर

मुखिया। पहले आप शुरू करें, मैं बाद में।"

नज्जू मियाँ चाहता तो यही था, लेकिन भलमनसाहत में पीछे नहीं रहना चाहता। बोला, "यह दरगिज नहीं हो सकता। आप इलाके-भर के सरताज हैं, हम तो महज हुकुम के बन्दे हैं। आप पहले पी लें। आप से पहले हुक्का मैं ले सकता हूँ भला?"

हकीम साहब ने और कुछ नहीं कहा। कश खींचा और धुएँ का बादल उड़ाकर आँख मूँदकर आराम से कहा, 'आः।'

नज्जू मियाँ का खयाल था, हकीम साहब कुछ और आग्रह करेंगे और अबकी अगर आग्रह किया तो वह हुक्का थाम लेगा। लेकिन सो नहीं हुआ। जी जरा छोटा हो गया। मगर करना क्या था, जिद तो खुद उसी ने की थी। चुप हो रहा।

हकीम साहब ने जोर-जोर से कई कश खींचे। नाक-मुँह से धुआँ निकालते हुए बोले, "एक अर्ज है मुखियाजी। मेरा काम आपको कर ही देना पड़ेगा। 'नहीं' नहीं सुनूँगा।"

नज्जू मियाँ बोला, "फरमाएँ। आज तक आपकी कोई बात दुलखी भी है?"

दाढ़ी सहलाते हुए हकीम ने कहा, "दूर-दूर के गाँवों के लोग यहाँ आते हैं। हर की जुबान पर एक ही बात—'इलाके में मुखिया हैं तो नज्जू मियाँ।' उसी दिन की तो बात है, कुछ बाहर के लोग आये थे। नोआखाली या त्रिपुरा के थे। किसी की सुन ही नहीं रहे थे। अखीर में लोगों ने कहा, 'अच्छा, तो मुखिया नज्जू मियाँ को पंच बदा जाय। जो कह दें वे।' कहना था कि भीगी बिल्ली बन गये, चू न की।"

नज्जू मियाँ फूल उठा। अपनी तारीफ, और खुशी न हो! एक बार हुक्के की तरफ निगाह फेरी। 'अगर हकीम छोड़े तो दो कश में चिलम साफ कर दूँ।' कहा, "अपने तो निहायत मामूली आदमी हैं, आप लोगों की पनाह में हैं। चूँकि आप लोग औरों से जिकर किया करते हैं, इसी-लिए लोग नाम लेते हैं।"

अचानक हकीम साहब की नजर पड़ी, नज्जू मियाँ हुक्के की तरफ देख रहा है। जल्दी से हुक्का उसकी ओर बढ़ाकर कहा, "देखिए मैं भूल ही गया। आप सामने बैठे हैं और मैं ही पीता चला जा रहा हूँ। लीजिए।"

नज्जू मियाँ ने जोरों से कश खींचा। तम्बाकू तो चिलम में उतना था नहीं, नारियल के छिलके और टिकिए से ही भरा गया था। लहककर तुरत ठंडा हो गया। नाक-मुँह में धुआँ घुस जाने से वह खाँस उठा।

हकीम साहब को कैसा तो लगा—'निरा जंगली आदमी है यह तो। जरा ठहर-सुस्ता कर क्या पिएगा, मिला और एक ही कश में चिलम फूँक देने को तैयार हो गया।' लेकिन नज्जू मियाँ से काम निकालना था। अपनी खीझ पीकर हँसते-हँसते बोले, "जी, आप लोगों की दुआ से दस-बीस गाँव के लोग दवा-दारू के लिए खाकसार के पास आते हैं। मौके पर हम उनसे आप लोगों का जिक्र भी करते हैं। अपने मुखिया की इज्जत बढ़े तो अपनी ही बढ़ती समझिए। लेकिन जिसके पास लोग पहुँचते हैं, उसमें भी तो कुछ जौहर होना जरूरी है।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "बेशक। जरूरत पर हम सभी आपके पास दौड़े आते हैं। उस्ताद की दुआ से दिन-दिन आपकी कामयाबी भी बढ़ती जा रही है।"

हकीम की दाढ़ी की ओट में हँसी झाँक गई। कहा, "यह तो आप लोगों की नियामत है। आप लोगों से माल-मसाले मिल जाते हैं, इसी में मेरी कामयाबी है। आज आपको तकलीफ भी इसीलिए दी है। सुना, आपके नन्हें-नादान लड़के ने, जिसके अभी नाक से दूध बहता है, बीस गज लम्बे मगर को मार गिराया है। पहले तो एतबार नहीं आया। छोटा-सा बच्चा, इतना बड़ा मगर कैसे मारेगा? मगर फिर सोचा, बच्चा है तो क्या, है तो मुखिया जी का बेटा। बाप का बेटा, सरदार का घोड़ा—कहा भी तो है। बच्चा भी है तो किस बाप का! विषधर गेहुँअन।"

अपनी रसिकता से हकीम साहब आप ही 'हो-हो' हँस पड़े। गेंहुँअन

वाली बात नज्जू मियाँ को नहीं रुची, पर करे क्या, जब कि उसकी तारीफ में कही गई। सूखी हँसी हँसकर बोला, "जी, जबान पर तो कोई टैक्स लगता नहीं, जो जो चाहे कहे।"

हकीम साहब कुछ मायूस हो आये। नज्जू मियाँ से मगर का गुर्दा और कलेजा लेना था, इसी लिए ऐसी कदर-खातिर कर रहे थे। यह न होता तो ऐसे खेतिहरों से वह हिलना-मिलना कतई पसन्द नहीं करते। मायूसी से बोले, "तो क्या यह महज अफवाह है? आपके लड़के ने मगर नहीं मारा? जो ऐसी झूठी बातें फैलाते हैं, उन्हें किस दोजख में जगह मिलेगी, कौन जाने!"

नज्जू मियाँ हँस पड़ा, "बात बिलकुल गलत तो नहीं है और न बिलकुल ही सही है। मगर जरूर मारा गया है। लेकिन उसे अकेले मेरे लड़के ने नहीं मारा और वह उतना बड़ा नहीं था, जितना कि लोग उड़ा रहे हैं।"

हकीम साहब बोले, "बीस हाथ का न सही, दस हाथ का तो होगा। दस हाथ न सही, पाँच हाथ का तो होगा ही। मेरा मतलब उसी से हल हो जायगा। अरसे से मगर के कलेजे और गुर्दे की खोज में हूँ। कहीं मिल जाय, तो ऐसी एक दवा तैयार कर दूँ कि चालीस की बूढ़ी औरत के चेहरे पर पन्द्रह साल की जवान लड़की की चमक आ जाय; साठ के झुलफुल बूढ़े बीस के पट्ठे बन जायँ। मुखिया जी, मुझे उसका कलेजा और गुर्दा देना ही पड़ेगा।" उद्वेग और उत्तेजना से उसने नज्जू मियाँ का हाथ पकड़ लिया।

नज्जू मियाँ ने कहा, "भला हम मूरख लोग इतना क्या जानें! उसका नाखून और चमड़ा रखकर मगर को तो हमने फेंक दिया। अगर पता होता कि उससे ऐसी दवा भी बनती है, तो सारा मगर ही लाकर हाजिर कर देता।"

नाकामयाबी के गुस्से से हकीम साहब का पित्त तक जल उठा।— आखिर बेकार ही कम्बख्त की इतनी खातिरदारी की! खेतिहर, हल

जोतनेवाला ! मुखिया ही हुआ तो क्या, उसे भी कभी अपने फर्श पर बैठने की जगह मिल सकती थी ? जिसे 'तू' या बहुत हुआ तो 'तुम' कहा जा सकता है, उसी को अब तक 'आप-आप' करता रहा। और इसकी भी बुद्धि की बलिहारी ! मैंने भलमनसाहत से कह ही दिया फर्श पर बैठने को, तो क्या उसे बैठ ही जाना था ? इतनी अकल तो चाहिए।

हकीम के जी में आया कि कहे, 'चौकी ही उसके लिए बहुत थी, फर्श पर वह किस साहस से बैठ गया ?' मगर कहने का कुसूर तो अपना था। सो खोलकर कुछ कह न सका। एक तो 'लिख लोढ़ा पढ़ पत्थर,' फिर मुखिया, मुँह से पहले हाथ ही चल पड़ता है। कहीं एकाध थाप दे ही मारे तो इज्जत कहाँ रहेगी !

गुस्से को पीकर हकीम ने कहा, "जब उसे फेंक ही दिया तो क्या किया जाय। असगर मियाँ ने मुझे मगर देने का वादा किया है।"

एक तो चिकोटी काटकर हकीम की बात, उसमें असगर मियाँ का नाम। नज्जू भी क्या कम था। व्यंग से बोल उठा, "तो फिर देर काहे की हकीम साहब ? केदार से कह दें, इमामदिस्ता ले आये, दवा कूटना शुरू कर दें, हम गरीब रुखसत हों।"

मुश्किल से हकीम गुस्से को दबा सका। एकाएक नजर पड़ी कि नज्जू मियाँ फर्श पर पाँव रखकर बैठा है। हलवाहे के पैर धूप-वर्षा, पानी-कादो सहते-सहते कड़े पड़ गये थे। सोचा कम्बख्त की हिमाकत देखिए, घुटने-भर धूल लेकर फर्श पर बैठ गया है ! चट से कह उठा, "अब तो पैसों की कमी नहीं है, जूते क्यों नहीं पहनते ?"

सुनकर नज्जू मियाँ को इतनी हँसी आई, इतनी हँसी आई कि हकीम के व्यंग पर उसका ध्यान ही नहीं गया। हकीम तो उसकी हँसी से डर गया। किसी तरह अपने को रोककर नज्जू बोला, खेतिहर का बच्चा और पाँव में जूते ! खुदा ने आखिर पाँव किसलिए दिये हैं ? जूते का मजा भी नहीं मालूम। एक बार बहुत कहते-सुनते जूता खरीदा

था। जो फोले पाँवों में पड़े कि खुदा की पनाह! वह सब हम गरीबों के लिए नहीं, आप ही लोगों के लिए है।"

हँसते हँसते नज्जू मियाँ का मन तो प्रसन्न हो उठा, पर हकीम साहब का गुस्सा और बढ़ ही गया। उसे लगा, नज्जू मियाँ उसकी खिल्ली उड़ा रहा है। कठोर आवाज में कहा, "जूता पहनने में तकलीफ होती है तो भले आदमी के फर्श पर बैठने का शौक क्यों ? बैठना भी हो, तो कम-से-कम पाँव तो धो लिया जा सकता है।"

नज्जू मियाँ की हँसी सहसा थम गई, आँखें भक् से जल उठीं। दाँत पीस कर मुट्ठी सँभालते ही, हकीम की अन्तरात्मा काँप गई—कहीं नज्जू मियाँ टूट न पड़े। रसिकता की बेकार कोशिश करते हुए झटपट कह उठा, "मगर यहाँ तो पाँव धोनेवाली कोई नाजनीन नहीं मिल सकती। कहूँ केदार से कि पानी ले आये ?" और उसने आवाज दी "केदार !"

नज्जू मियाँ ने उधर कान ही नहीं दिया। तनकर खड़ा हो गया। चार हाथ का लम्बा जवान गुस्से से और भी लम्बा दीखने लगा। बड़ी मुश्किल से अपने गुस्से को पीकर अत्यन्त रूखे स्वर में कहा, "हम किसान के बच्चे भले आदमियों के रीति-रिवाज नहीं जानते। यह आप-जैसे भले मानसों का ही तरीका है कि घर बुलाकर किसी की तौहीन करें।"

जवाब का इन्तजार किये बिना वह लम्बी-लम्बी डगें भरता हुआ बाहर निकल गया। हकीम साहब ने चैन की साँस ली। जान-में-जान आई। जोर से फिर केदार को पुकारा। जैसे ही वह आया सारा गुबार उसी पर झाड़ने लगा—"फर्श को समेट क्यों नहीं दिया था ? हुक्के की बात उसके सामने क्यों उठाई ? कह क्यों नहीं दिया कि गड़गड़ा टूट गया है ?"

हकीम अनाप-शनाप बकता चला गया। केदार ने चुपचाप फर्श को समेटा और धूल झाड़ने लगा।

——तीन

धुलदी का बाजार बाजार-भर ही नहीं है, उस इलाके का जीवन-केन्द्र है। सौदा-पाती के लिए तो लोग आते ही हैं, गाँव के मुखिया-पंच भी आते हैं। खरीद-बिक्री के साथ-साथ गप्प-सड़ाके, खबरों की लेन-देन चलती रहती है। धान काटने के लिए मज़ूरे चाहिए, धुलदी जाइए, दो की जगह चार ले आइए। चरवाहा चाहिए, कमिया चाहिए, जो चाहिए, वहाँ से ले आइए। कितनी शादियों की बात वहीं तै पा गई। एक चिलम तम्बाकू, दो-चार बीड़ियाँ खर्च करने की जुर्रत हो तो बाघिन के दूध का भी ठिकाना मिल सकता है।

नज्जू मियाँ कमिये की खोज में आया था। हकीम के पल्ले पड़कर सुबह का सारा समय मिट्टी हो गया। तबीयत खट्टी हो गई। सुबह यहाँ वह इस तरह से चल रहा था, मानों लड़ाई जीतकर आया हो। सब वाह-वाह कर रहे थे, काना-फूसी चल रही थी—'दस साल के बच्चे ने मगर को मारा है, कोई मज़ाक है? ऐसे बाप का बेटा न हो तो यह मुमकिन है?'

हकीम ने सारा समय ही बर्बाद कर दिया। ऐसा लगा, बाज़ार के लोग उसका मजाक बना रहे हैं। बीच रास्ते से हनहनाता हुआ वह आगे बढ़ चला। दो-एक आदमी उसे कुछ कहने आये, तो जवाब नहीं मिला। लोगों ने कहना शुरू कर दिया—'बला से मुखिया है। एक बच्चे ने मगर क्या मारा, कुप्पा हो गये। इसीका इतना गुमान!, नज्जू मियाँ सीधे अपनी नाव पर पहुँचा। नाव घाट में बँधी थी। इदरिस बैठ कर नारियल पी रहा था और किसी का कहीं पता न था।

गुस्से से नज्जू मियाँ फूल रहा था। सामने इदरिस को देखकर उबल पड़ा, "रमजान कहाँ है? कमिये ठीक कर लिये गये?"

इदरिस ने एक और कश खींचकर कहा, "तुम्हारे ही इन्तजार में तो बैठा हूँ सरदार। कई कमिये आये थे, मजूरी की भी बातें कुछ-कुछ हो गईं। तुम नहीं थे इसी से पक्का नहीं किया। उन्होंने फिर आने को कहा है। रमजान तुम्हारी ही खोज में निकला है।"

इदरिस की बातों से नज्जू मियाँ के बदन में आग लग गई। बोला, "बड़ा शेर मारा है। सब कुछ अगर मुझे ही करना है तो तुम लोग फिर किस मर्ज की दवा हो ? आज कल एक तो यों ही किसान-कमिये कम मिलते हैं, तिस पर काम बहुत बढ़ गया है। सबको कमिये की जरूरत है। कमिये आये तो तुमने छोड़ कैसे दिया ?"

इदरिस बोला, "तै कर लेता और तुम्हें पसन्द नहीं आता तो ?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "बेजा कुछ करते हो तो मेरी परवा ही नहीं करते, जरूरी कामों में मेरी दुहाई देते हो। मेरा खयाल था, सब हो-हवा गया होगा, जाते ही नाव खोल दूँगा। लेकिन यहाँ तो कुछ भी नहीं हुआ। कम्बख्त रमजान कहाँ चला गया। बैल जैसा चेहरा, बुद्धि भी बैल ही जैसी।"

इदरिस नज्जू मियाँ के रग-रेशे खूब पहचानता था, सो उसने बात का जवाब घुमा कर दिया, "आखिर हुआ क्या है सरदार ? किसी से बतकही तो नहीं हुई ? हुकुम दो, फौरन उस साले की गर्दन उतार लाऊँ।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "हर बात में उकसा जरूर दोगे। मामूली-सी कोई काम दो तो करते नहीं बनता और बात बनानी हो तो तीस मार-खाँ। जाओ, अपनी ढफली में अपना राग अलापो।"

मगर इदरिस दब जाने वाला थोड़े ही था ! बोला, "इसी लिए तो हुकुम का इन्तजार था सरदार। कमिया नहीं मिला तो रमजान तुम्हारी तलाश में गया। अम्मा की भी फरमाइशें थीं, वह सब भी खरीद लेना था। तसबीह टूट गई है, कई दाने उसके लेने हैं। मालिक मियाँ ने हँसिया का हुकुम फरमाया है। जरूरी बात तो कहना ही भूल गया था।

अम्माजान कह रही थीं, उनके फिर बात उभर आई है। हकीम साहब से मालिश की कोई अच्छी-सी दवा लेनी थी। तुम तो वहाँ गये थे सरदार, दवा ले ली है क्या ?"

नज्जू मियाँ ने बारूद की तरह भभककर कहा, "हकीम साहब नहीं, तुम्हारा सर। कहीं से एक ठग आ पहुँचा है और तुम जैसे बेवकूफों के माथे हाथ फेर कर पैसे लूटता है।"

इदरिस को ताज्जुब हुआ। सरदार से हकीम की दोस्ती रही है। आज भी लोगों ने बताया, नज्जू मियाँ हकीम साहब के घर बैठ कर बातें कर रहा था। वह बोला, "कहते क्या हो सरदार, हकीम साहब की लोग इसीलिए तो इतनी कदर करते हैं कि तुम्हारे दोस्त हैं। खबर मिली है, आज भी सुबह तुम उनके फर्श पर बैठे-बैठे गुड़गुड़ी पीते रहे हो। और खुद उसे ठग और उजबक बताते हो!"

नज्जू मियाँ खुद भी शरमिंदा हुआ था। गाँव भर का वह सम्मानित आदमी ठहरा। लोग-बाग उससे राय मशविरा लेते हैं, फैसला कराते हैं। भला उसे बच्चों-जैसा चिल्ल पों मचाना शोभा दे सकता है ? वह हकीम के पास गया तो था। माँ की दवा लेने के खयाल से ही गया था। गुस्से में वह बात ही दिमाग से उतर गई। वह बोला, "तुम लोग बाल की खाल खींचने लगते हो, इसी पर गुस्सा आता है। किसी से दो बातें कीं, मान लो, तो क्या वह दोस्त हो गया ? रोग-दुख के समय जो भी मिल जाता है, उसी से दवा ली जाती है। हकीम से मैंने भी दो-एक बार दवा ली है। लेने से क्या हुआ, अपने वैदजी से उसकी हर्गिज तुलना नहीं हो सकती। अबकी वैदजी से ऐसी दवा लूँगा कि जिन्दगी में फिर कभी अम्मा के बात न हो। सुना है, मगर के कलेजे के तेल से गठिया हवा हो जाता है। एक मगर मिल जाय तो वैद-हकीम, किसी के दरवाजे सिर मारने की जरूरत ही न रह जाय।"

इतने में हाँफते हुए रमजान आया। बोला, "चलो मुखिया, जरा जल्दी चलो।"

रमजान को देखकर नज्जू मियाँ का बदन फिर लहक उठा, "अब तक तो हजरत जाने कहाँ गायब रहे, और आये तो हुकुम साथ लाये—जल्द चलो। कहाँ, किस भाड़ में जाना है ?"

दाँत निपोर कर रमजान हँसने लगा, "कैसी बात करते हो सरदार। मैं तो दौड़ा-दौड़ा बुलाने आया और तुम हो कि बिना समझे-बूझे लिहाड़ो लेने लगे।"

नज्जू मियाँ बोला, "जाने किस फिराक में नवाब साहब अब तक कहाँ-कहाँ का चक्कर काटते रहे। न काम न धन्धा। अब आये हैं तो माला पहना कर स्वागत करना पड़ेगा।"

रमजान बोला, "जो कह रहा हूँ पहले उसे तो सुन लो, बाद में जो चाहे सो कह लेना। यहाँ कुछ कमिये आये थे, सौदा पटा नहीं, सो मैं तुम्हारी खोज में निकला। इतने में देखा कि वे कमिये असगर मियाँ की नाव पर सवार हो गये।"

असगर के नाम ही से नज्जू मियाँ के एड़ी-चोटी आग लग गई। बोला, "अपनी तकदीर ! अपने लोग ही ऐसे हैं कि अपने कमियों को दुश्मन के घर भेज देते हैं। खुदा ने तुम्हें भैंस की तन्दुरुस्ती दी है, अकल भी भैंस ही की हो गई ? अरे बेवकूफ, इतना भी समझ में नहीं आया कि फसल अगर घर न आये तो तुम भी भूखों मरोगे ?"

मायूस होकर रमजान बोला, "तुमसे पार पाना मुश्किल है सरदार। हम तुम्हारे लिए जी-जान से खटते हैं और तुम हमें ही गाली गलौज देते हो। पहले मेरी बात तो सुन लो।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "कहो भो, कौन-सी ऐसी बात है ?"

रमजान जरा गम्भीर हो गया। इधर-उधर ताक कर फुसफुसा कर कहने लगा, "यहाँ एक पहुँचा हुआ फकीर आया है सरदार, कामिल फकीर।"

इतने गुस्से में भी नज्जू मियाँ हँसी न रोक सका। बोला, "फकीर आया है तो मेरा माथा मोल ले लिया है।"

कान पर हाथ रख कर रमजान ने कहा, "ऐसा न कहो सरदार। अली अल्लाह दरवेश मन की बात जानता है। उस पर ताने न कसो।"

नज्जू मियाँ बोला, "मान गया कि पहुँचा हुआ फकीर है। मगर उससे खेत से धान तो घर नहीं उठ आयेगा।"

कहते-कहते उसका गुस्सा फिर लौट आया, "तुम्हें कमिये ढूँढ़ने को कह गया तो एक हजरत तो नाव पर हुक्का पीते रहे, दूसरे फकीर-दरवेश की खोज में चक्कर काटते फिरे।"

रमजान बोला, "फकीर-दरवेश क्या नहीं कर सकता। तुम्हारी बातें फकीर को मालूम हैं। तलब किया है, जभी तो मैं दौड़ा आया हूँ।"

नज्जू मियाँ बोला, "दौड़े आये, सो ठीक किया। मेरा सर खरीद लिया। मगर इसका तो कुछ तै नहीं पाया कि खेत का धान कौन काटेगा?"

रमजान बोला, "हकीम की दुआ मिले तो बात-की-बात में वह भी हो जायगा। जो कमिये असगर मियाँ की नाव पर जा बैठे हैं, वही आ जायेंगे।"

होनी की कौन कह सकता है! मानो रमजान की सचाई साबित करने के लिए ही वे कमिये असगर मियाँ की नाव से उतर आये। उन्होंने बड़ी कड़ी मजदूरी माँगी, असगर ने कबूल नहीं की, जवाब दे दिया। मजूरे उखड़ गये। नज्जू मियाँ कमियों के लिए बेहाल तो हो ही रहा था, असगर से होड़ लेने की हविस भी हो आई। सो भाव-बट्टे की ज्यादा नौबत न आई, आसानी से पट गया।

रमजान कहने लगा, "देख ली फकीर की करामत! तुम पर निगाह अच्छी है। अली अल्लाह की दुआ से असम्भव सम्भव हो जाता है। पैसे देकर मजूरा रखना तो निहायत मामूली बात है।"

नज्जू मियाँ से और टालते न बना। कुछ सोचकर बोला, "असगर तो नम्बरी मक्खीचूस है। मजूरों की पटरी नहीं बैठी, इसीलिए सब लौट

आये, नहीं तो फकीर का जादू चलना मुश्किल था।"

रमजान ने अपने दोनों गालों को पीट लिया, "तौबा! तौबा!! ऐसा न कहो सरदार! पहुँचे हुए फकीर खुश होने पर जितना भला करते हैं, नाराज हों तो उतना ही नुकसान पहुँचा सकते हैं।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "अरे, अभी तो फकीर की बददुआ लगी नहीं, अभी से क्यों मारे डर के मरे जा रहे हो? जो अली अल्लाह हैं, वे भी कहीं इतनी जल्दी नाराज होते हैं?"

रमजान बोला, "उनकी बात कही नहीं जा सकती। कभी लाख खताएँ करो, बख्श देते हैं और कभी मामूली बात भी बर्दाश्त नहीं कर सकते।"

नज्जू मियाँ कहने लगा, "खैर, अब फकीर का कमाल मानना ही पड़ गया। पहली ही बार के दर्शन से तुम्हें इतनी भक्ति उमड़ पड़ी है।"

रमजान ने जवाब दिया, "मैंने जो अपनी आँखों देखा सरदार, तुमने देखा होता तो तुम भी पिघल पड़ते।"

कौतूहल से नज्जू मियाँ ने पूछा, "क्या देखा आखिर?"

रमजान बड़ी लम्बी बातें कह गया। उसमें से फिजूल और अतिरञ्जना को बाद कर दें तो यही होगा कि उसने नज्जू मियाँ की खोज में सारे बाजार की खाक छानी। इतने में पूरब कोने के बूढ़े बरगद के नीचे लोगों की भीड़ नजर आई। वह जगह ही एक तो किनारे पर है, फिर वहाँ रहता है नटों का अड्डा। मारे गन्दगी के कोई वहाँ जाना नहीं चाहता। भीड़ देखकर उत्सुकता हुई, माजरा क्या है? पास गया तो वहाँ एक झोंपड़ा नजर आया। चारों ओर की जगह साफ-सुथरी, लिपी-पुती। बीच में गेरुआ अलखल्ला पहने जपनमाज बिछाकर एक फकीर बैठा था। माथे पर हरी पगड़ी, हाथ में तसबीह, चेहरे पर साफ सफेद दाढ़ी। मुँह पर खेल रहे थे शान्त भाव। देखते ही मन भक्ति से भर जाय। बूढ़े-बच्चे, औरत-मर्दों की भीड़ घेरे थी; मगर उनका ध्यान तोड़ने का साहस किसी में न था। अखीर में मोती की माँ ने साहस बटोरा।

मोती की माँ को तो जानते ही हो सरदार, तीन काल गँवा कर चौथे पर पहुँची है। लड़के के घर से निकल जाने के बाद से दिमाग ठिकाने नहीं। उसने आगे बढ़कर कहा, "हुकुम हो तो एक अर्ज करूँ ?"

फकीर ने आँखें खोल दीं। उसे देखकर पूछा, "क्या पूछना है, अपने लड़के की बात ?"

भीड़ में एक लहर-सी खेल गई । फकीर एकदम नया है। इसके पहले इलाके में उसे कभी किसी ने नहीं देखा। वह जान कैसे गया कि मोती की माँ लड़के के खो जाने से पागल हो गई है ?

बुढ़िया ने झपट कर फकीर के पाँव पकड़ लिये । बोली, "बाबा, आपका अजाना क्या है ? मेहरबानी करके यह तो बता दो कि मेरा मोती है कहाँ ? वह जिन्दा तो है ? कब लौटेगा ? उसने शादी-ब्याह भी किया है या नहीं ? बाल-बच्चे कितने हैं ?"

फकीर ने अपने पैर हटा लिये—"पैर मत छुओ। अल्लाह का हुक्म है, बन्दे का पैर नहीं छूना चाहिए। आप मेरी माँ के बराबर हैं।"

मोती की माँ बोली, "टाल मत दो बाबा, तुम दरवेश हो, सब कुछ तुम्हें मालूम है। मुझे बता दो।"

फकीर ने कहा, "एक साथ इतने सवालों का जवाब भी दूँ तो कैसे ?"

एकाएक फकीर की आँखें मुँद गईं, बदन सख्त हो गया। बुढ़िया कुछ कहने जा रही थी। भीड़ में से किसी ने उसे फटकारा, "सूझता नहीं है, फकीर साहब ध्यान-मग्न हो गये हैं ।"

फकीर की हालत देखकर बुढ़िया भी सिटपिटा गई। वह चुपचाप ताकती रह गई।

जरा देर सकते का आलम रहा । अचानक 'सुभानअल्लाह' की चीख के साथ फकीर ने आँखें खोल दीं। खोई आँखों से एक बार चारों तरफ देखकर मोती की माँ से कहा, "तुमने अपने बेटे की बात पूछी थी न ? वह मजे में है। जल्द ही बीवी के साथ घर लौटेगा।"

बुढ़िया का मुखड़ा खिल पड़ा। पूछा, "कब, कब आयेगा बाबा?"

फकीर ने फिर कोई जवाब नहीं दिया। एक कोने में एक बूढ़ा आदमी बड़ी देर से फकीर की निगाहों में आने की जी तोड़ कोशिश कर रहा था। उसे देखकर फकीर ने पूछा, "तुम्हें कुछ कहना है बाबा?"

बूढ़ा जब तक कुछ कहे, मोती की माँ बोल उठी, "पहले मेरी बातों का जवाब दो, फकीर साहब।"

फकीर ने फिर भी उसको कोई जवाब नहीं दिया। भीड़ से कहने लगा, "मेरे पीर मुर्शिद का हुक्म है कि मैं धुलदी में रहूँ। अगर अल्लाह का रहम हुआ तो दो-चार को हिदायत भी दे सकता हूँ।"

बुढ़िया फिर बोल उठी, "मेरी बात का जवाब नहीं दिया बाबा!"

अबकी फकीर ने कहा, "किसी की बात का जवाब कौन दे सकता है माँ! खुदा ताला की दया से कभी-कभी आँखों का पर्दा हट जाता है, उसमें भविष्य की कुछ झाँकियाँ देख लेता हूँ। जो इसके लिए नाछोड़ बन्दा बन जाते हैं, अल्लाहताला उनको सजा देते हैं?"

फकीर के गले की आवाज गूँज उठी। यों मोती की माँ सहज ही दबने वाली औरत न थी, मगर उसे भी डर लगा और वह भीड़ में जा मिली।

थोड़ी देर फिर सन्नाटा रहा। अचानक रिरिया कर हमदू मियाँ बोल पड़ा। दुबला-पतला आदमी। चेहरे का चमड़ा ऐसा सिकुड़ गया था, मानो कभी सही था ही नहीं। रो-रोकर उसने अपना दुखड़ा कहना शुरू किया। छः-छ तगड़े जवान लड़के थे उसके। आज कोई चिराग जलाने वाला भी नहीं रहा। फकीर के सामने पेट के बल लम्बा लेट गया। कपाल ठोंक कर बोला, "मिहरबानी करके अगर कोई अच्छी दवा दें। फिर बाल-बच्चों की किलकारी से घर हँस उठे।"

भीड़ में से दबी हँसी का फुहारा छूटा। एक नौजवान ने ताना-कशी की, "लड़का चाहिए और इस उमर में! बीवी है? सात-सात बीवियों को तो खा बैठे, अब तुम्हारे जबड़े में बेटी कौन देगा?"

हमदू मियाँ ने निहोरा किया, "तुम इनकी बातों में न आना बाबा। मुझे दवाई दो मैं नई शादी करूँगा।"

मोती की माँ मुँह बिदका कर बोली, "हुँ:, नई शादी करेंगे। मौत की माँद में पाँव लटका कर बैठे हैं, नई शादी की बात करते शर्म नहीं आती।"

हमदू जोर से बोल उठा, "तुम्हें इसका सिरदर्द कैसा? मेरी खुशी, मैं हजार ब्याह करूँगा, तुम्हारा क्या?"

फकीर की तरफ ताककर बोला, "इनके कहे का खयाल न करना। मेरी उम्र ज्यादा नहीं, महज दो बीस और दस साल की है। दुख-शोक से दिल टूट गया है, धूप-पानी में बदन की ऐसी गत हो गई है, देखने में ही मैं बूढ़ा लगता हूँ। तुम दया करके दवा दो। आज के ये गये-बीते छोकरे मेरे सामने खड़े भी नहीं हो सकते।"

मोती की माँ अवाक् ताकती रह गई। कहा, "तुमने तो गजब कर दिया हमदू चाचा। अगर तुम्हारी उमर दो बीस और दस की है, तो उस हिसाब से मेरा तो अभी जन्म ही नहीं हुआ है। आज की बात है, मेरी शादी के ही वक्त तुम साठ के लगभग थे।"

भीड़ में से किसी ने ताईद की। बोला, "पचास की उम्र तो मेरी है। मेरा खयाल है, जब से होश है, तब से हमदू चाचा को ऐसा ही देखता आ रहा हूँ।"

हमदू खीझ गया, "मेरी उम्र चाहे पचास हो, चाहे साठ, तुम्हारा क्या? मेरी इच्छा है, मैं शादी करूँगा, एक बार, सौ बार, हजार बार करूँगा।"

भीड़ में से कोई बोल उठा, "हमें तो इतना ही मालूम है कि पाँच से ज्यादा बीबियाँ की नहीं जा सकतीं। तुम आखिर किस कानून से हजार बीवियाँ करना चाहते हो?"

फकीर ने सुर्ख आँखों से ताका। सब लोग चुप हो गये। सबको सुना कर फकीर ने कहा, "हमदू मियाँ, बूढ़े को जवान बनाने की दवा

तो है, पर उसमें खर्च बहुत है।"

हमदू मियाँ की आँखें खुशी से चमक उठीं। बोला, "जो भी लगे, जितना भी लगे, मैं दूँगा। हमें वह दवा बता-भर दो। जरूरत पड़ेगी, जमीन-जगह बेच डालूँगा। गई जवानी लौट आये और गोद में एक चाँद का टुकड़ा आ जाय तो जगह-जमीन तो दुबारा आ जायगी।"

फकीर ने कहा, "अगर सचमुच ही तुम्हें दवा चाहिए तो सनीचर को दिन-भर उपवास रक्खो और बाद मगरिब के मुझसे मिलो। दवा मैं दूँगा।"

भीड़ अब दो हिस्सों में बँट गई। नौजवानों की जमात बिगड़ उठी। अगर वहाँ बुजुर्ग लोग नहीं होते, तो वे फकीर को परेशान भी कर सकते थे। मगर बूढ़ों में भक्ति बढ़ गई! ऐं हमदू मियाँ जैसे चुसके आम, और सरकन्डे में भी नई जवानी-निग्वर सकती है? कौन जाने? फकीर-दरवेश की माया ही और है! जवानी के सुनहले दिन लौटाने के लिए आदमी क्या नहीं दे सकता।

नौजवान लोग वहाँ से खिसक पड़े। बुड्ढों और औरतों ने फकीर को घेर लिया। कोई खाविन्द का मन अपनी ओर खींचने का तावीज माँगने लगी, कोई लड़का। किसी ने भूत-प्रेत से बचने की तरकीब पूछी। फकीर का देखते-ही-देखते चल निकला। मगर वह था सयाना। दवा, तावीज, जो भी देता, कहता यही कि सब अपने ईमान पर है। भक्ति होगी तो फलेगा, नहीं तो नहीं। ऐसे में कोई मुझको दोष न दे।

——चार

रमजान की तकरीर के बाद नज्जू मियाँ जरा देर चुप हो रहा। अपनी दाढ़ी सहलाते हुए कहा, "फकीर सच्चा है या झूठा, यह कहना

कठिन है। मोती की माँ का किस्सा हर कोई जानता है। हो सकता है, फकीर ने सुन लिया हो। मोती अभी तक लौटा तो नहीं है। और उसने हमदू से जो कहा, उसे तो सुनकर भी नफरत ही होती है।"

रमजान बोला, "ऐसा न कहो सरदार। फकीरों की करामात कौन नहीं जानता। वे मन की जानते हैं। भक्ति का ईनाम और नफरत की सजा दे सकते हैं। कमियोंवाली जो घटना तुम्हारे साथ घट चुकी, उससे तो हाथोंहाथ सबूत मिल ही चुका।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "बगला आँधी से उड़ता है और जौहर फकीर का बढ़ता है। खैर, मैं फकीरों की हेठी नहीं करता, सब खुदा के बन्दे हैं। कौन जाने किसमें क्या कमाल छिपा पड़ा है।"

रमजान ने कहा, "मैं तो कह चुका हूँ कि फकीर ने याद फरमाया है। जभी तो मैं दौड़ा आया हूँ।"

नज्जू मियाँ बोला, "बहुत हो चुका। अब मोदी की दूकान से काला जीरा और सुई-धागा ले आओ।"

रमजान चला गया। नज्जू मियाँ के जी में आया, फकीर से भेंट ही कर लूँ, तो अपना क्या बिगड़ता है? अगर ठग ही निकला, तो मेरा क्या कर लेगा? और कहीं सच्चा हो, तो उसकी दुआ का लाभ हो सकता है।

अब तक इदरिस मुँह खोले मानों रमजान की बातों को पी रहा था। अब मौका पाकर बोल उठा, "फकीर-दरवेश के पास दवाइयाँ बहुत रहती हैं। झाड़-फूँक से भी वे बहुत-सी बीमारियाँ मार भगाते हैं। हकीम से तो आपने अम्माजान की दवाई नहीं ली। शायद फकीर उसकी कोई और तरकीब निकाल दे।"

नज्जू मियाँ को भी बात जँच गई। सोचा, देख ही लूँ जरा।

फकीर मानो नज्जू मियाँ का ही इन्तजार कर रहा था। जाते ही खड़े होकर उसकी आवभगत की, "आइए मुखिया साहब, आप ही की चर्चा हो रही थी।"

भीड़ अभी भी खड़ी थी। फकीर ने कहा, "अब आप लोग जाइए। मुझे मुखिया से कुछ जरूरी मशविरा करना है।"

नज्जू मियाँ के मन का धोखा जाता रहा। नः, फकीर को आदमी की पहचान है। जो खुद सच्चा होता है, वही सच्चे की कदर जानता है। यहाँ बाजार लगा है, भीड़ भरी है। वहाँ तो असगर मियाँ तमाम डोलता फिर रहा है। मगर फकीर ने और किसी को तो नहीं बुलाया, बुलाया है मुझी को।

फकीर ने कहा, "खड़े क्यों हो मुखियाजी, आइए। भीड़ की तरफ देखकर कहा, "तुम लोग अभी भी खड़े हो?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "आपके जौहर के किस्से बहुत सुने हैं। अब मुझ पर मेहरबानी करनी होगी।"

फकीर हँसा, "आप जैसे अक्लमंद के मुँह से यह क्या सुन रहा हूँ मैं? हम सभी खुदा के बन्दे हैं, सब उसी की दया के भिखारी हैं। आदमी आदमी पर कैसे मेहरबानी कर सकता है?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "आप बजा फरमाते हैं। लेकिन जो अल्लाह के प्यारे होते हैं, उनकी दुआ में असर होता है। दया न सही, दुआ ही कीजिए।"

फकीर ने कहा, "आप दर्जनों गाँव के लोगों से रात-दिन व्यवहार करते हैं, बातों से आपको कौन जीत सकता है? दुआ जरूर करूँगा, मगर इस गुनहगार की दुआ खुदा बन्द को कबूल भी होगी या नहीं, खुदा ही जानें। क्या दुआ चाहिए?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "यही कि बाल-बच्चों के साथ सुख से रह सकूँ, मान-इज्जत से जिन्दगी कट जाय और मरते समय शान्ति से आँखें मूँद सकूँ।"

फकीर ने कहा, "अगर दुआ ही माँगते हो तो सबसे बड़ी दुआ यही है कि खुदा तुम्हारे मन में शान्ति दें। मनुष्य की यह खासियत है कि वह जितना ही पाता है, उतनी ही ज्यादा ख्वाहिश करता है। इसी में

अशान्ति है। खुदा तुम्हारे मन को शान्त करें, शान्ति दें।"

नज्जू मियाँ पिघल गया। बोला, "आपने जिन्दगी का सही माने समझा है। आपकी दुआ से मेरे सारे दुख दूर हो जायँगे।"

फकीर फिर कहने लगा, "मंगल और अमंगल क्या होता है, दुख-सुख क्या है—सब खुदा की मर्जी है। गुस्सा, हिंसा और डर, जब तक इन तीन साँपों को मार नहीं भगाते, अशान्ति जा नहीं सकती।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "ये बहुत बड़ी बातें हैं। मेरे लिए आप खास दुआ करें।"

फकीर ने कहा, "शान्ति पा सको, इससे बड़ी दुआ और क्या है? तुम्हें फिक्र बहुत है। मन में जहर भर गया है। जब तक मन का वह जहर नहीं जाता, शान्ति कैसे मिल सकती है? कभी जो तुम्हारा जिगरी दोस्त था, आज वही जानी दुश्मन बन गया है। यह दुश्मनी भूल सकोगे? अल्लाह का हुक्म है कि दुश्मन को दोस्त बनाओ और इधर तुमने दोस्त को दुश्मन बना रखा है। तुम्हें बच्चे की फिक्र पड़ी है, माँ की फिक्र पड़ी है। फिक्र से क्या होना है? बिना अल्लाह के हुक्म के किसी का एक बाल भी नहीं गिर सकता। उस अल्लाह पर भरोसा न करके तुम इतनी फिक्र क्यों करते हो?"

बाद की बातें नज्जू मियाँ के कानों तक नहीं पहुँचीं। दोस्त दुश्मन बन गया है, यही सुनकर उसका दिमाग गरम हो गया। कहा, "फकीर साहब, आप ठहरे दरवेश। दुनियादारी क्या होती है, नहीं जानते। दोस्त आसानी से दुश्मन नहीं बनता। और जब बन जाता है, तो टूटी हुई मुहब्बत फिर जुड़ नहीं सकती। आप असगर को पहचानते नहीं हैं, इसी-लिए उसे दोस्त बनाने को कह रहे हैं। जानते होते तो ऐसी बात नहीं कहते।"

फकीर ने कहा, "वही अर्ज तो मैंने किया। मन से हिंसा को भगाना पड़ेगा, नहीं तो हजारों फकीरों की दुआ क्यों न मिले, कुछ नहीं होने का।"

नज्जू मियाँ ने कहा—"खैर, ये बातें फिर होंगी। आज तो मैं एक

दवाई के लिए आया हूँ। मेरी बूढ़ी माँ गठिया से बड़ी तकलीफ में है। कोई दवा दीजिए।"

फकीर बोला, "फकीर के पास दवा कहाँ ?"

नज्जू मियाँ जिद पकड़ बैठा, "मैंने सुना है। आपकी दवा या तावीज से कठिन-से-कठिन बीमारियाँ छू-मन्तर हो जाती हैं। यह गठिया भला क्या है ?"

फकीर बोला, "अच्छा, तावीज कभी और दूँगा। अभी तो इबादत का समय हो गया। आज तो अब...."

नज्जू मियाँ ने कहा, "मैं यों ही नहीं आया, आपने बुलवा भेजा था। क्यों बुलाया था, यह बिना बताये ही विदा ?"

फकीर ने कोई जवाब नहीं दिया। अन्दर घुस गया। चेलों ने इशारे से बताया, "फकीर साहब अब बात नहीं करेंगे। अब आज तो वापस जायँ।"

नज्जू मियाँ को गुस्सा आया, डर भी लगा। कौन जाने, फकीर-दरवेश की कब क्या मर्जी होती है। हुज्जत से फायदा क्या। कोई बददुआ दे बैठे तो मुसीबत। वह जाने को ही था कि देखा, दोनों हाथों से भीड़ को चीरता हुआ असगर मियाँ आ रहा है। गुस्से से आँखें सुर्ख हो आई हैं, नथुने और कपाल की शिराएँ फूल उठी हैं।

नज्जू मियाँ पर जो नजर पड़ गई, सो उसका गुस्सा मानो और बढ़ गया। धीरे-धीरे कहा, "तुम आखिर यहाँ तक गिर गये हो कि मेरी बुराई के लिए झाड़-फूँक तक करना शुरू कर दिया !"

नज्जू मियाँ गुस्से से कठोर हो गया। बोला, "मुँह सँभालकर बातें करो, वर्ना...."

असगर ने कहा, "वर्ना क्या ? मेरी बुराई की कोई कोशिश तो तुमने उठा नहीं रक्खी; मगर फकीर-वकीर तक उतर आओगे, यह नहीं सोच सकता था।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "झूठ की भी कोई हद होती है....।"

असगर ने कहा, "यह झूठ है, झूठ ? बाजार-भर के लोग जानते हैं कि तुमने फकीर के पास धरना दिया है। तुम्हारा रमजान तो सब से यही कहता फिर रहा है कि मेरे माथे पर अब बिजली गिरेगी।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "सब फिजूल की बातें हैं।"

असगर ने कहा, "सब फिजूल ही है तो फकीर के अड्डे पर कर क्या रहे हो ?"

"तुम्हें इसकी कैफियत देनी पड़ेगी क्या ? नज्जू मियाँ" असगर ने कहा, "तुम्हें अगर साफ बात भी बताने में एतराज है, तो फकीर से ही पूछ देखूँगा।"

नज्जू मियाँ व्यंग की हँसी हँस कर बोला, "फिर वही करो, जाओ फकीर के पास।"

"जरूर जाऊँगा," असगर ने कहा।

नज्जू मियाँ तीखी हँसी हँस पड़ा। फकीर ने खुद उसे बुलवा भेजा, सब को हटाकर उससे बातें कीं, फिर भी इबादत के समय नहीं रहने दिया। ऐसे में असगर अगर उसे जाकर तंग करेगा तो वह जरूर बद-दुआ देगा।

नज्जू मियाँ की हँसी से असगर जरा देर को थम गया। घूरकर ताका। कुछ कहा नहीं, लेकिन और किसी के रोकने से पहले ही पर्दा खिसका कर अन्दर दाखिल हो गया।

उत्सुकता से नज्जू मियाँ बाहर खड़ा रहा कि फकीर कहता क्या है। लेकिन कहाँ का गाली-गलौज, कहाँ की बददुआ। नज्जू मियाँ ने सुना, फकीर आदर से असगर को बिठा रहा है। क्रोध से अन्धा होकर नज्जू मियाँ भी अन्दर पिल पड़ा। फकीर ने अचरज से उसे देखा। बोला, "तुम अभी यहीं हो नज्जू मियाँ ? कुछ कहना है ?"

फकीर की बात से उसके गुस्से की आग में जैसे घी के छींटे पड़ गये। मुझे रुखसत करके असगर से राय मशविरा ! गुस्से से थरथर काँपते हुए कहा, "झूला पहनकर फकीर तो बन बैठे हैं, मगर पेट के

अन्दर शैतानी किलबिला रही है।"

गुस्से से वह हाँफने लगा। दाँत पीस कर बोला, "दाँव खेलने को और कोई नहीं मिला? इसीलिए मुझे जाने को कह दिया था! मेरे पेट से बातें निकाल कर मेरे दुश्मन को लगाने की चाल? तुम जैसे चालबाज मैंने बहुत देखे हैं और चालबाजी की दवा भी मैं जानता हूँ।"

फकीर किंकर्त्तव्य विमूढ़-सा उसकी ओर देखता रहा, "तुम्हें हो क्या गया है नज्जू मियाँ?"

असगर बैठा था। नज्जू मियाँ की बातें सुनकर उठ खड़ा हुआ। लहमे के लिए दोनों आमने-सामने हुए, दोनों का लम्बा-चौड़ा बदन, सख्त, मजबूत-केवल कनपटी के ऊपर बालों में सफेदी देखने से पता चल रहा था कि उनकी उमर हुई है।

असगर कुछ कहने जा रहा था। फकीर ने उसे रोका और शान्त स्वर से कहा, "हुआ क्या है नज्जू मियाँ, इतना गुस्सा क्यों?"

फकीर की शान्त बातों से वह पागल-सा हो उठा। मुँह चिढ़ा कर कहा, "क्या हुआ नज्जू मियाँ! इतना गुस्सा क्यों! बड़े युधिष्ठिर आये हैं, धरम के बेटे! इन्हें कुछ पता नहीं है? मैं पूछता हूँ, फकीर के बच्चे, असगर मियाँ के साथ बैठकर टोटका क्या कर रहे थे?"

असगर कुछ कहने जा रहा था। फकीर ने रोककर कहा, "मैं तो पहले ही कह चुका हूँ, खुद से बढ़कर दूसरा दुश्मन नहीं। अगर मन को नहीं मना सके, तो उसी की आग में जलकर खत्म हो जाओगे।"

नज्जू मियाँ उबल पड़ा, "इतनी हिमाकत हो गई! गाली देना तक शुरू कर दिया? जमाऊँ दो...."

नज्जू मियाँ के चिल्लाने से भीड़ फिर बटुर आई। धक्कम-धुक्की से सब अन्दर ही जा पहुँचे लगभग। एक दबा शोर उठा। नज्जू मियाँ की ओर के लोग हमले को आमादा। देखा देखी असगर मियाँ के लोग भी तन बैठे। ऐसा लगा, मारपीट होकर ही रहेगी।

एक-ब-एक शोरोगुल को दबाते हुए फकीर की आवाज सुनाई दी। वह कुछ पढ़ रहा था। दुआ हो शायद-मंतर-तंतर भी हो सकता है। कोई कुछ समझ नहीं सका, सो सब चुप हो रहे। गम्भीर स्वर की तरंग उठने लगी, अरबी ध्वनि की मंद्रता मन को उदास किये दे रही थी। फकीर पढ़ता ही चला जा रहा था और काँपता जा रहा था उसका शरीर। आँखें बन्द थीं।

फकीर ने अचानक आँखें खोलीं। खड़े होकर दोनों हाथ उठाये और चिल्लाया—"अब भी सब यहीं हो? हट जाओ, यहाँ से चले जाओ! हाय रे बेवकूफ नज्जू, तूने दोस्त को दुश्मन बनाया और जिन्दगी की आखिरी मंजिल मारने के वक्त यह नया टंटा! ईशाण कोण में आँधी का आभास है, नदी का पानी फुफकार रहा है, तूफान में नौका मतवाले-सी डोल रही है, काला मेघ बाज-जैसा झपट्टा मारने को है—आफत के उस दिन तुम्हें कौन बचायेगा? जाओ, सब कुछ झूठा है। दो दिन की दुनिया, दो दिन की जिन्दगी और उसी के लिए इतना झगड़ा-फिसाद, हँगामा! रहम कर, अल्लाह, रहम कर। गुनहगार बन्दे का गुनाह माफ कर दे।"

फकीर बेहोश होकर गिर पड़ा। चेले दौड़ आये। सबको वहाँ से हट जाने को कहा।

——पाँच

लौटते समय नज्जू मियाँ ने साथ के लोगों से कहा, "खबरदार, अम्माजान को यह सब मालूम न हो।"

रमजान बोला, "अगर वह पूछ बैठें?"

नज्जू मियाँ बोला, "तुम लोग फिस-फिस न करो तो पूछने की नौबत ही क्यों आयेगी ?"

रमजान बोला, "तुम फिकर मत करो सरदार ! इस रमजान के मुँह से चूँ नहीं निकलने का।"

रमजान ने चूँ तो सच ही नहीं किया, पर उसकी बात न बोलने की कोशिश इतनी साफ झलकने लगी कि आयशा से कहीं कम होशियार लोगों की भी निगाह से नहीं बच सकती थी। इदरिस यों बोलता तो बहुत कम ही है, पर उसका भी चेहरा जैसे लटक गया। आयशा ताड़ गई; हो न हो, कोई बात हुई है।

नज्जू मियाँ को पूछने से कोई अंजाम नहीं निकला। जो पूछती जवाब उसी का देता, पर जो जानना चाहती थी, उसका पता न चला। इदरिस से भी पूछा, मगर सदा की तरह वह 'हुँ-हाँ' करके ही रह गया। जवाब देते-देते ही उसे अचानक याद आ गया कि वह जाल डाल आया है। उठा न ले तो उलझ जा सकता है, फट जा सकता है।

मन-ही-मन आयशा बोली, 'मुझे धोखे में रखा जा रहा है। खैर, देख लूँगी मैं।'

उस दिन सबेरे बारिश होती रही। दोपहर को धूप निकली। भादों के अखीर की धूप, ताड़ पकाने वाली धूप। उमस से बुरा हाल। हो हाल बुरा, धूप देखकर आयशा ने सुखाने के लिए अचार निकलवाया। आँगन में सबको रखवा कर हिफाजत से ढाँक-ढूँक कर ओसारे पर जरा निश्चिन्त होकर बैठी। सरौते से सुपारी काटते-काटते अचानक याद आ गया, उस दिन हाट में क्या वाकया हुआ, इसका तो पता ही नहीं चला। कुलसुम से कहा, "जरा रमजान को बुला।"

काँपते-काँपते रमजान आया, जैसे बलि का बकरा हो। पूछा, "मेरी बुलाहट क्यों हुई है अम्माजान ?"

आयशा ने एक बार तीखी निगाहों से उसे देखा और फिर सुपारी काटने लगी।

रमजान की परेशानी बढ़ने लगी। किसी तरह यहाँ से भाग पाऊँ तो अच्छा हो। डरते-डरते उसने कहा, "अम्माजान ?"

आयशा ने पूछा, "बता तो क्या हुआ है ?"

रमजान बोला, "मैं समझ नहीं सका, क्या पूछ रही हो।"

आयशा बोली, "समझने की बात नहीं है। धुलदी में क्या वाकया हुआ, खोलकर मुझे बता।"

रमजान का चेहरा उतर गया। उसने कुछ कहा नहीं। टुकुर-टुकुर आयशा की ओर ताकने लगा।

आयशा ने कहा, "गूँगा हो गया ? बोल नहीं सकता ?"

रमजान बोला, "धुलदी में क्या होगा!"

आयशा बोली, "मुझसे उड़ने की कोशिश मत कर। तुम्हारे चेहरों से मैं सब समझ सकती हूँ। वहाँ जरूर ही कुछ हुआ है, नहीं तो नज्जू ही क्यों मुँह छिपाता फिरेगा, और तेरे जैसे बक्की के मुँह में ही ताले क्यों पड़ जायँगे ?"

रमजान ने कहा, "होगा क्या भला! खरीद-बिक्री की, कमिये ठीक किये और लौट आये। मेरी बातों का एतबार न हो तो मुखिया से पूछ लो!"

आयशा ने कहा, "यह चोर का गवाह गिरहकट। मैं पूछती हूँ कुछ हुआ ही नहीं है तो यह शकल क्यों बन गई है ? किसने तुम्हारी खड़ी फसल पर हल चला दिया है ?"

रमजान ने बस एक ही बात कही, "एतबार न हो, तो मुखिया से पूछ लो।"

आयशा बिगड़ गई। बोली, "खैर, वहाँ कुछ नहीं हुआ। तुम लोग हाट बाजार करके लौट आये। मगर मेरी गठिया की दवा की बात याद नहीं रही ?"

रमजान ने पूछा, "मुखिया दवा नहीं ले आये ? हकीम के पास गये तो थे। बातें भी की थीं। फिर दवा कैसे नहीं लाये ?"

आयशा बोली, "हकीम के पास गया था, मगर दवा नहीं लाया। पूछने से कहता है, 'हकीम क्या है, पूरा ठग है।' उससे झगड़ तो नहीं आया ?"

रमजान बोल उठा, "नहीं-नहीं, हकीम से तो झड़प नहीं हुई।"

आयशा बोली, "खैर हकीम से नहीं, फिर किससे हुई ?"

रमजान ने रुक-रुककर कहा, "नहीं-नहीं, किसी से नहीं।"

आयशा ने धमकाकर कहा, "ज्यादा चालाकी मत कर। झटपट बता दे, नहीं तो कहे देती हूँ अच्छा न होगा।"

इतने पर भी रमजान को चुप पाकर आयशा का क्रोध और भड़क उठा।

"अल्लाह ने तुझको बदन-ही-बदन दिया है, अकल नहीं दी। अगर भला चाहता है तो जल्दी बता दे कि नज्जू ने किससे झगड़ा किया है और क्यों ?"

रमजान रुआँसा-सा होकर बोला, "मुखिया की बात न रक्खूँगा तो मेरी जान जायगी।"

आयशा जरा रुककर बोली, "तू डर मत, नज्जू तुझे कुछ न कहेगा। मैं मना कर दूँगी।"

लाचार रमजान धीरे-धीरे सारी बातें उगल बैठा। सुनकर आयशा गुमसुम बैठी रही। फिर कहने लगी, "यह नज्जू और असगर का झगड़ा कभी मिटेगा नहीं ?"

थोड़ी देर बाद पूछा, "फकीर क्या सच ही पहुँचा हुआ है ?"

अब जाकर रमजान की जबान खुली। फकीर के कमाल सुनाने के लिए उसका जी छटपटा रहा था। मुखिया के डर से जबान बन्द थी। आयशा का आश्वासन पाकर कहना शुरू कर दिया। यों ही तो वह भक्ति से गद्‌गद था, आयशा को समझाने के लिए वह भक्ति और भी अतिरंजित हो गई।

सारी बातें सुन चुकने के बाद आयशा ने नज्जू को बुलवा भेजा।

कहा, "बूढ़े हो चले, तुम्हें अकल नहीं आई ? असगर से तो ठनी ही रहती है, उससे पेट नहीं भरा तो अब फकीर-दरवेश से उलझ पड़े ?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "तुमसे ऐसी बेसिर-पैर की बातें कहीं किसने ? रमजान ने कहा होगा ? उससे बारहा कहा कि फजूल की बातें मत कहा करो। कम्बख्त को पीटकर दुरुस्त कर दूँगा।"

आयशा ने कहा, "रमजान पर गुस्सा करना बेकार है। मैं कहे देती हूँ, उसके बदन पर हाथ हर्गिज मत लगाना। तुम्हारी करतूतें छिपी थोड़े रहती हैं ? तुम्हें यह जानने की क्या पड़ी है कि कहा किसने। बात सही है या नहीं, मैं तुमसे यह जानना चाहती हूँ।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "मामूली बतकही भर हुई थी। तुम्हें यह सुना कर परेशान करने की क्या जरूरत थी ? कहीं से एक ढोंगी ने आकर डेरा डाल दिया है और सारी दुनिया उसके पीछे पागल है।"

"तुमसे मैं तंग आ गई। गुस्से से ही तो यह दुर्गत है आज, फिर भी गुस्सा पीने की अकल नहीं उपजी। फकीर पहुँचा हुआ है कि ढोंगी है, तुम्हें क्या ? तुम उससे झगड़ने क्यों गये ?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "मैं कबूल करता हूँ कि झगड़ना अच्छा नहीं हुआ, पर जब फकीर ने असगर को अन्दर बुलाकर बिठाला तो मेरे दिमाग पर खून चढ़ गया। मैं अपने को रोक नहीं सका।"

"वही तो कहती हूँ बेटे ! जानते तो हो ही कि तुम्हारा मिजाज गरम है। तुम्हें अपने को दबाना चाहिए, सब्र सीखना चाहिए। फकीर की बददुआ से बुरा होता है।"

नज्जू मियाँ एतराज कर रहा था। रोककर आयशा बोल उठी, "खुदा जानें किसमें क्या है। जब फकीर ने आँधी का इशारा किया है, तो उसे खुश करने के पहले तुम्हें नाव लेकर नहीं जाने दूँगी। सर्वनाशी नदी यों ही कितनों को बर्बाद किये देती है, तुम्हारे साथ तो फकीर की बददुआ है।"

नज्जू मियाँ ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "और चाहे जो हुक्म दो

अम्माँ, सिर आँखों पर। नदी में जाना मत रोको। उस पार नया चौर निकला है। जमीन क्या है, सोना है। मैं न जाऊँगा तो औरों के कब्जे में चली जायगी। मैं तो कल ही जाने की सोच रहा था।"

आयशा ने आदेश के स्वर में कहा, "जान बड़ी है या जमीन ? तुम भादों की भरी नदी में हर्गिज नहीं जा सकते।"

नज्जू मियाँ बोला, "तो इतना बड़ा चौर हाथ से जाने दूँगा ? लोग क्या कहेंगे ? एक बार अगर लोग यह जान लें कि नज्जू मियाँ में अब वह पुरानी ताकत नहीं रह गई, नई जमीन दखल करने की हिम्मत नहीं है, तो लोग पुरानी जमीन पर भी धावा बोल देंगे। तुम्हारी क्या ख्वाहिश है कि मालिक दर-दर का भिखारी बने ?"

आयशा ने कहा, "बतंगड़ बनाना तो खूब सीख लिया है। नई जमीन दखल न करो तो पुरानी से बेदखली का सवाल कहाँ आता है ? और अगर नई जमीन की इतनी ही ललक है तो इदरिस और रमजान को भेज दो। करें जाकर दखल।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "नई जमीन दखल करने के लिए इदरिस और रमजान को भेजूँगा ?"

"भेजने में क्या हर्ज है ? पुराने आदमी हैं, विश्वासी हैं।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "विश्वासी होने में क्या शक है ! मगर रमजान तो पूरा बछिया का ताऊ है। समझता है ताकत से ही सारा कुछ कर लूँगा। और इदरिस ? उसे तो गूँगा ही कह लो। इन्हें भेज कर जमीन की तो खुदा जानें, हाँ, दो-चार सर जरूर टूटेंगे और मुकदमे में ही अपनी कचूमर निकल जायगी।"

आयशा बोली, "सो चाहे जो हो, तुम्हें तो मैं भरी नदी में हागज न जाने दूँगी।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "इतनी अक्लमन्द होकर तुम ऐसी बातें करती हो अम्मा ? अल्लाह का हुक्म तोड़ कौन सकता है ? अगर डूबना ही अपनी तकदीर में लिखा है, तो घुटने-भर पानी में भी डूब सकता हूँ।

और खुदा की मर्जी न हो, तो लाख आँधी-पानी में भी बाल बाँका न होगा। अल्लाह पर भरोसा करके मुझे जाने की इजाजत दो।"

रमजान दौड़ा आया, "तुम तो सरदार गये नहीं। असगर मियाँ जमात लेकर नई जमीन दखल करने को रवाना हो गया।"

नज्जू मियाँ का शरीर सख्त हो आया। माँ की ओर देखकर बोला, "अब भी तुम्हें एतराज है अम्मा ? तुम क्या चाहती हो कि तुम्हारा मालिक असगर के बाल-बच्चों के आगे सिर नवा कर रहे ?"

आयशा ने आखिरी कोशिश की, "उँह, मालिक की तो तुम्हें बेहद फिक्र है ! कब से कह रही हूँ कि वह सयाना हो रहा है, उसकी शादी कर दो। मैं जरा नई बहू की मुराद पूरी कर लूँ। मगर तुम तो उधर कभी कान ही नहीं देते।"

इतनी परेशानी में भी नज्जू मियाँ हँस पड़ा।

"शादी ? मालिक की ? अभी दस साल का भी तो नहीं। इतनी फिक्र पड़ गई उसकी शादी की ?"

"दस का क्यों नहीं हुआ होगा। जब मैं आई थी तो तुम्हारे अब्बा की क्या उमर थी ? नः, यह उज्र मैं नहीं सुनने की। उसकी शादी करनी ही पड़ेगी।"

"ब्याह कुछ हँसी-खेल तो नहीं। दस लोगों को बुलाना है, खान-पान है। यह कम खर्च में थोड़े ही होने को है। इसी से तो कहता हूँ कि नई जमीन पर कब्जा हो जाय। अगले साल फागुन में मालिक की शादी कर दूँगा।"

"अगले फागुन में ! उसको तो अभी डेढ़ साल है। अबकी फागुन में न बन पड़े तो सावन तक तो मैं किसी तरह सब्र कर सकती हूँ, इससे ज्यादा नहीं। आखिर तुम्हारा इरादा क्या है कि बुढ़िया अम्मा चल बसे, तब लड़के की शादी रचाओ ?"

"तुम जो हुक्म दोगी, वही करूँगा। अभी तो मुझे जाने दो।"

मालिक के ब्याह के जिक्र में आयशा फकीर की बात भूल बैठी थी।

अचानक याद आ गई। बोली "खैर, जाने के पहले धुलदी जाकर फकीर को खुश कर लो।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "फकीर की इजाजत के लिए रुके रहने से जमीन तो नहीं रुकी रहेगी; चौंर पर दूसरों का दखल जम जायगा। आखिर एक ढोंगी की बात पर तुम्हें इतनी फिक्र क्यों हो गई ?"

आयशा ने कहा, "जीभ पर लगाम नहीं है, इसी का तो यह अंजाम है कि इतना भुगत रहे हो। माना कि फकीर ढोंगी है। लेकिन अगर उसी पर मुझे विश्वास है तो मेरी खातिर उसका सम्मान तुम्हें करना चाहिये।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "मुझे माफ करो अम्मा, कुसूर हो गया। फकीर से मैं बाद में माफी माँग लूँगा। चौंर दखल कर लूँ, तब एक दिन फकीर को दावत दूँगा या मौलूद का इंतजाम करूँगा।"

मौलूद के नाम से आयशा खुश हो गई। बोली, "खैर, वैसा ही करो। मगर खबरदार, नदी में चलते हुए बेवकूफी मत कर बैठना।"

नज्जू मियाँ ने कहा,—"भादों बीत चला। नदी की धारा धीमी पड़ गई है। नये चौंर जगे हैं, हवा में नमी आ गई है। अब आँधी का मौका नहीं रहा। तुम फिक्र मत करो।"

आयशा बोली, "इस राक्षसी नदी पर एतबार नहीं।"

——छः

चौंर के लिए झगड़ा-झंझट नहीं हुआ। नज्जू मियाँ ने जाकर देखा, जो नई जमीन निकली है, वह कल्पना के परे है। जहाँ तक आँखें जाती हैं, काँस का जंगल फैला है। हरे गलीचे पर सफेद फूलों की बहार। असगर की जमात पच्छिम के चौंर पर कब्जा कर रही थी। नज्जू मियाँ को उसने खबर भजवा ई कि मुझे कोई भी चौंर मिल जाय मैं उसी में सन्तुष्ट हूँ।

नज्जू मियाँ ने पूरब के चौंर पर कब्जा जमाया। पच्छिम वाले पर भी दावा करने का इरादा उसका हुआ, पर वशीर ने बताया, "मुखियाजी, मैं बूढ़ा हो गया। चार बीस की उमर हुई। इस राक्षसी नदी के मैंने बहुत तमाशे देखे। पच्छिम का चौंर साबित नहीं रहता, साल-दो साल में धार से कट जाता है और पूरब वाला बीस साल में भी नहीं कटता।"

नज्जू मियाँ ने सोचा, ठीक ही है। नाहक ही असगर से झगड़ा मोल लेने से क्या लाभ ? असगर से भेंट भी हुई दो-एक बार। नज्जू ने कहा, "तुमने पच्छिम का चौंर लिया, ठीक है, ले लो। पूरब का मेरा रहा। खूँटे से हद बाँध दी है। इधर निगाह मत डालना।"

असगर बोला, "यह तुम्हें मालूम है कि औरों की चीज पर नजर डालने की मुझे आदत ही नहीं।"

बात बढ़ जाती शायद, पर बूढ़े वशीर ने बीच में पड़कर कहा, "सरदार, पच्छिम की हद तो खींच दी गई है, पूरब की रह गई है। उधर नजर न डाली जाय तो आगे गोलमाल हो सकता है।"

नज्जू मियाँ को कुछ कहने का मौका न देकर लोगों को बुलाकर वशीर उसे चौंर के पूरब ले गया। असगर और नज्जू की आँखें मिलीं, लहमे को एक आग खेल गई, मगर दोनों अपनी-अपनी ओर चल दिये।

जमीन की बन्दोबस्ती में लभभग सात दिन निकल गये। रमजान रोज नज्जू मियाँ को याद दिला जाता, "अम्मा को महज दो रात रहने की कह आये हो। घबरा रही होगी बेचारी।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "चारा क्या है ? काम खत्म किये बिना तो जाया नहीं जा सकता। अम्मा को खबर भिजवा दी गई है कि हम सब राजी-खुशी हैं। घबराने की बात नहीं है।"

लौटकर आते ही आयशा नज्जू मियाँ के सिर पर सवार हो गई कि फकीर को बुला कर मौलूद कर ही डालो।

नज्जू मियाँ ने कहा, "थोड़ा और रुक जाओ अम्मा। आश्विन आ

पड़ा है। नई फसल घर ले आने दो। बस दस दिन और, सिर्फ दस दिन। खेत का काम चुक जाये, मैं जाकर फकीर को न्योता दे आऊँगा।"

आयशा रोज याद दिलाती, रमजान और इदरिस भी आयशा का साथ देते। आखिर एक दिन नज्जू मियाँ ने कहा, "खेत का काम लगभग खत्म हो आया है। कल पैठ का दिन है, मैं धुलदी जाऊँगा।"

धुलदी में नज्जू फकीर की खोज में बूढ़े बरगद की ओर चल पड़ा। बरगद की शकल ही बदल गई थी। पिछली बार महज़ एक झोंपड़ा देख गया था, अब वहाँ बड़ा-सा घर खड़ा था। नये बाँसों का घेरा झक-मक कर रहा था। ऊपर बड़ा-सा निशान उड़ रहा था।

जरा देर उसने आगा-पीछा किया, फिर अन्दर धँसा। कमरे के अन्दर सब कहीं चटाई बिछी थी। दस-बारह लड़के जो कि तालिबेइल्म होंगे, हिल-हिलकर कुछ पढ़ रहे थे। एक कोने में पीतल के एक आतिश-दान में धूप-लोहबान जल रहा था। भीनी गंध से कमरा महँमहा रहा था।

नज्जू मियाँ को देखकर लड़के और भी जोर-जोर से पढ़ने लगे। नज्जू मियाँ ने पूछा, "फकीर साहब हैं? उनसे मुलाकात हो सकती है?"

लड़के पढ़ते ही जा रहे थे, जैसे उसकी बातें सुनी ही न हों। उसने जरा जोर से पूछा, "फकीर साहब से अभी भेंट हो सकेगी?"

लड़कों ने फिर भी कोई जवाब नहीं दिया। कोने का दरवाजा खोल कर एक जवान निकला, पूछा, "क्या चाहते हैं आप?"

नज्जू बोला, "मैं उनकी जियारत को आया हूँ। आप मेहरबानी करके इतनी खबर कर दें कि रहीमपुर के नज्जू मियाँ आये हैं।"

उस जवान ने कहा, "वे तो अभी ध्यान में बैठे हैं; मुलाकात नहीं हो सकती। घंटे-भर बाद लौट कर आयें तो भेंट हो जायगी।"

केवल मुलाकात करने के लिए ही वह उतनी दूर आया था। कौन फिर इतनी दूर आता है। न हो तो यहीं इन्तजार किया जाय। सो वह एक ओर बैठ कर लड़कों का पढ़ना सुनने लगा। बड़ी देर तक ध्यान

से सुनने के बाद पता चला, वे किसी सिपारे को बार-बार आवृत्ति कर रहे हैं।

बगल के लड़के से पूछा, "क्या पढ़ रहे हो भैया ?"

लड़के ने अचरज से कहा, "कुरान पढ़ रहा हूँ। इतना भी नहीं समझते आप ?"

नज्जू मियाँ बोला, "हम अपढ़-गँवार भला कुरान-शरीफ को क्या जानें ? क्या पढ़ रहे हो, बताओ !"

छात्र और भी अचरज में पड़ा, "बता तो दिया कि कुरान पढ़ रहा हूँ। फिर क्या पूछते हैं ?"

वह बोला, "यह तो समझ गया कि कुरान पढ़ रहे हो। मगर हम जाहिल उसके मानी कैसे समझें। जो सिपारा पढ़ रहे हो, उसका मतलब समझा दो भैया मेरे !"

छात्र ने कहा, "माने ? कुरान शरीफ के माने ? खुदा का कलाम है, याद कर रहा हूँ। माने की कौन सोचता है।"

नज्जू मियाँ कुछ कहने जा रहा था कि वह युवक अन्दर से निकला। नज्जू मियाँ से कहा, "फकीर साहब ने तलब फरमाया है। आपका नसीब अच्छा है। कभी-कभी तो घंटों नहीं उठते।"

नज्जू मियाँ चुपचाप उसके पीछे हो लिया। पेड़ के एक साफ-सुथरे कोटर में फकीर बैठा था। चारों तरफ तकिये। एक से टिक कर वह बैठा था।

नज्जू मियाँ की ओर एक तकिया बढ़ाते हुए बोला, "अच्छा, नज्जू मियाँ ! किस इरादे से ?"

"हुजूर क' जियारत को आया हूँ।"

फकीर ने कहा, "तुम मेरे पास आये हो ? ताज्जुब है ! याद है, तुमने कहा था कि ढोंगी से तुम्हारा कोई वास्ता नहीं ?"

नज्जू मियाँ बोला, "गुस्ताखी माफ फरमायें फकीर साहब। मैं नादान आदमी, क्या कहते क्या कह गया हूँ। आप लोग अलीअल्लाह हैं।

आप भी मुआफी न दें, तो हम लोग जिन्दा कैसे रह सकते हैं ?"

फकीर बोला, "मैं नाराज नहीं हूँ नज्जू मियाँ। खुदा सब जानता है कि कौन सच्चा है और कौन ढोंगी। बहुत बार हम खुद अपने-आपको नहीं समझ पाते। नतीजा यह होता है कि औरों को धोखा देते हैं, खुद धोखा खाते हैं।

नज्जू मियाँ बोला, "खुदा के लिए माफ कर दें फकीर साहब, मुझे और शरमिन्दा न करें।"

फकीर ने कहा, "यकीन मानो, मुझे तुमसे कतई नाराजगी नहीं।"

"तो फिर दया करके ग़रीब की दावत कबूल फरमायें, हम गाँव के जाहिल-गँवार खेतिहर हैं। दो दिन हमें नसीहत देंगे तो अल्लाह खुश होगा। मुझे बतायें कि आपने मेरी खता बख्श दी और मेरे यहाँ चल-कर मिलाद सुनाइए ?"

"मुझे तो कोई एतराज नहीं, मगर यहाँ के लोग राजी हो जायँ। दस-पाँच घर मुरीद हैं, कुछ शागिर्द तालिबेइल्म हैं, उन्हें छोड़कर कैसे जाऊँ ?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "यह सब हम नहीं सुनने के। इन्हें तो हर वक्त आपके दर्शनों का मौका है। हम दूर गाँव के हैं, हम पर रहम नहीं करेंगे तो काम कैसे चलेगा। एक तो इस इलाके में फकीर-दरवेश आते ही नहीं के बराबर हैं। आपने मेहरबानी की है, तो इतनी तकलीफ आपको उठानी पड़ेगी।"

फकीर बोला, "नहीं ही मानोगे तो जाना ही पड़ेगा। मगर अगले माह कोई तारीख ठीक करनी होगी।"

"दिन-तारीख तो आज ही तै कर लीजिए। देर से क्या फायदा ?"

आखिर यह तै पाया कि अगली पूर्णिमा को फकीर साहब रहीमपुर पधारेंगे।

नज्जू मियाँ बोला, "दिन तो खासा तै पाया। कातिक की पुनमासी। रात-भर दिन-जैसा उजाला रहेगा।"

नज्जू मियाँ के यहाँ तैयारियाँ शुरू हो गईं। किसे न्योता देना है, कौन-सा काम किसके जिम्मे रहेगा, यह सब पहले से ठीक किये बिना बड़ी गड़बड़ी हो जाती है। आयशा की सलाह से ही नज्जू सब कुछ कर रहा था। न्योते की बाबत पूछा तो आयशा बोली, "न्योता गाँव-भर को देना है। कोई नहीं छूट सकता, चाहे हिन्दू हो, चाहे मुसलमान।"

नज्जू ने पूछा, "असगर को भी?"

आयशा ने कहा, "इसमें भी कोई शुबहा है? घर में एक शुभ कारज होगा, अल्लाह का नाम होगा, बाज़ होगा। जाने कितनों को बुला रहे हो। ऐसे में गाँव का एक जाना-माना आदमी छूट जाय तो कैसे चलेगा? आना-न-आना उनकी इच्छा पर है, दावत सबकी रहेगी।"

नज्जू मियाँ मान गया। किसी को खत से न्योता गया. किसी को आदमी के हाथ खबर भेजी गई, कहीं-कहीं नज्जू मियाँ खुद गया। जिस दिन वह असगर के घर गया, असगर मौजूद न था। घर के लोग नज्जू मियाँ को वहाँ देखकर दंग रह गये। नज्जू बोला, "धुलदी के फकीर साहब मिलाद महफिल में आ रहे हैं। मालिक से कहना, मैं उन्हें दावत देने आया था।"

और कातिक की पुनमासी आ पहुँची। सुबह से आयशा खिलाने-पिलाने की तैयारी में जुट गई। चार-पाँच सौ आदमी की दावत, एक इलाही कांड कहिए! ढेरों तो काटे गये केले के पत्ते, इतनों के लिए बरतन कहाँ से लाये जाते?

बेचारा मालिक तो अवाक् था। आयशा से पूछा, "दादी, यह दावत काहे की है?"

आयशा ने कहा, "तुम्हारी शादी है, खान-पान नहीं होगा?"

औरतें हँस पड़ीं। मालिक शरम से भाग गया।

दोपहर के आस-पास फकीर की नाव घाट पर आ लगी। बहुत बड़ी नाव, मस्तूल में चाँद-तारा वाला निशान। नज्जू उन्हें आदर के साथ लिवाने गया। बोला, "रहीमपुर में हुजूर के मुबारक कदम पड़े, इस

मेहरबानी के लिए हम सभी शुक्रगुजार हैं। ग़रीब के यहाँ खातिरदारी में कमी-खामी होगा, उसके लिए पहले से ही माफी माँग लेता हूँ।"

फकीर नाव से नीचे उतरा। आज पहनावे में गेरुए अलखल्ला की जगह पाजामा और सफेद ढीला कुरता, ऊपर काली छिदरिया जिसके किनारे लाल धागे का काम। सिर पर सब्ज पाग।

फकीर बोला, "अल्लाहताला तुम्हारी खैर करें, खुदा हाफिज।"

असगर बोला, "अस्सलाम वालेकुम।"

फकीर ने जवाब दिया, "वालेकुम अस्सलाम या रहमतुल्ला या बरकताहु।"

असगर ने कहा, "आपके ही पास जा रहा था। मुझे एक जरूरी काम से बाहर जाना पड़ रहा है। मिलाद शरीफ में शामिल न हो सकूँगा। गुस्ताखी माफ फरमायें।"

मिलाद की मजलिस में फकीर सादर बिठाया गया। दरी-जाजिम। कोने में फकीर साहब के लिए तकिया। दोनों तरफ इतरदान-गुलाबपाश, सामने अगर-बत्ती, धूप-लोहबान।

फकीर ने कुरान की आयतें शुरू कीं। गम्भीर आवाज में अरबी छंद की मंद गति और गहरी हो उठी। फकीर एक-एक आयत पढ़ता, उसके शागिर्द उसे दुहराते। क्या पढ़ा जा रहा है, कोई नहीं समझता। बस इतना ही काफी था कि खुदा का कलाम है। लोग भक्ति से गद्‌गद थे।

कुरान की तलावत के बाद वाज़ शुरू हुआ। दुनिया की सृष्टि से लेकर हजरत मुहम्मद के जन्म तक की कहानी फकीर सुनाने लगा। अरबी-फारसी के शब्दों की बहार—बीच-बीच में कविताओं की आवृत्ति, मानी समझना मुश्किल। खुदा की कुदरत और सृष्टि के पहले रात-दिन का वर्णन खत्म करके फकीर ने इबलिस की कहानी शुरू की।

"इबलिस फरिश्तों का सरताज था, लेकिन गरूर अहंकार से वह गिर गया। खुदा ने मिट्टी से गढ़ कर आदम को तैयार किया, उस

पुतले में रूह फूँकी और इबलिस से कहा, 'आदम को सलाम करो।' इबलिस तन गया, मैं आग का बना हूँ और आदम मिट्टी का लोंदा है। मैं उसे सलाम क्यों करूँ? हुक्म उदूली के इस कसूर पर इबलिस बहिश्त से निकाल दिया गया। निकाले जाने पर उसने आदम को भटकाने की कारसाजी शुरू की।"

"शैतान के कारनामे से आदम और हव्वा बहिश्त से निकाल दिये गये। गुजरान (जीविका) के लिए आदमजाद को एड़ी-चोटी का पसीना एक करना होगा और हव्वा की लड़कियाँ नाकामिले बर्दाश्त तकलीफ से कलेजे का लहू पानी बनाकर धरती पर नई जिन्दगी को पैदा करेंगी —दोनों को यही सजा मिली।"

"इब्राहिम की भक्ति की मिसाल नहीं मिलती। वह अपने लख्ते जिगर की कुर्बानी से भी न हिचकिचाया। सदियाँ बीतीं, खुदा के बन्दे साधु महापुरुष, नबी, पैगंबरों ने उनके हुक्म की तामील में बेहद तकलीफें उठाईं। नूह, मूसा, ईसा तथा और जाने कितने पैगम्बरों ने नित्य नये ढंग से पृथ्वी पर खुदा के पैगाम को पहुँचाया। आचार बदलते रहे हैं, विचार बदलते रहे हैं, देश-विदेशों का इतिहास बदलता रहा है, मगर खुदा का हुक्म नहीं बदला। इन सभी रद्दो-बदल के बीच बार-बार खुदा की वाणी गूँजती रही है और उसी शाश्वत वाणी के लिए अरब की मरुभूमि में हजरत मुहम्मद का आविर्भाव हुआ। हजरत मुहम्मद कोई नया पैगाम लेकर नहीं आये, उनके कंठ से वही चिर-पुरातन सत्य ही ध्वनित हुआ—केवल नये ढंग से। फर्क इतना ही है कि हजरत के बाद वह वाणी नहीं बदली, तेरह सौ साल गुजर गये, कुरान की एक भी आयत में कोई हेरफेर नहीं हुआ।"

हजरत की जयगाथा गाते हुए दरूद पढ़ने के लिए फकीर उठ खड़ा हुआ। फकीर के साथ-साथ सभी लोग खड़े हो गये। सभी दरूद की आवृत्ति करने लगे। किसी की आवाज महीन थी, किसी की मोटी, किसी की मीठी, किसी की कर्कश, मगर सबके हृदय में आशा एक ही

थी कि अल्लाह का कलाम फिर जाहिर हुआ है, अब धरती की कोई ताकत उसे बिगाड़ नहीं सकती।

दरूद के बाद बैठ कर फकीर ने कयामत के दिन का किस्सा उठाया। उस दिन आसमान में सातों सूरज जल उठेंगे, आकाश काँसे की थाली-सा लहक उठेगा, आग की लपटों से पृथ्वी झुलस जायगी। हरियाली का कहीं नामोनिशान न रहेगा। खुदा विचार के लिए बैठेंगे। युग-युगान्तर के लोग हाथ बाँधकर उनके विचार-आसन के सामने खड़े होंगे। गुनहगार भय से थरथर काँपते रहेंगे, निष्ठावान और बेगुनाहों को भी भरोसा न होगा। धनवालों का सोना-चाँदी उस दिन बिच्छू बन कर उनको काटेगा; जो थोड़ा-सा दान-खैरात किया होगा, वहीं आकर उस जबर्दस्त जलन में उसके माथे पर छाँह करेगा। सारे नबी और पैगम्बर अपनी उम्मत के लिए खुदा के दरगाह में मन्नत करेंगे और अन्तिम नबी, अल्लाह के हबीब सारी दुनिया के लिए नजात की भीख माँगेंगे।

सब कोई फिर खड़े होकर दरूद पढ़ने लगे—

"खुदा के प्यारे, मनुष्य के मित्र हजरत मुहम्मद की वाणी सारी पृथ्वी पर फैले, सबके हृदय में शान्ति हो।"

फकीर ने मोनाजात शुरू किया—

"सब पर खुदा का रहम-बरसे। सब को सुख, स्वच्छन्दता और आराम मिले, अखीर में सभी नजात पायें।"

——सात

मिलाद खत्म हो जाने पर भी बड़ी देर तक लोगों की जबान से कोई बात नहीं निकली। एक बूढ़ा आदमी फकीर के सामने आकर

बोला, "बाबा, मैं गुनहगार हूँ, मुझ पर रहम करो, मेरे गुनाहों को माफ कर दो।"

फकीर ने उसके सर पर हाथ रखकर कहा, "अल्लाह मेहरबान हैं। वे तुम्हारे सारे गुनाह माफ कर देंगे। तुम्हें क्या तकलीफ है?"

बुड्ढे ने कहा, "आँख की जोत मंद पड़ गई है। पहले-जैसा देख नहीं पाता हूँ मैं।"

फकीर ने कहा, "खुदा ने तुम्हें बड़ी लम्बी उमर दी है। जवानी वाली जोत कैसे रह सकती है?"

एक दूसरे ने आकर कहा, "उसकी लड़की पर कुछ आता है। जिन्दगी मुहाल हो गई है। जब वह दशा आती है तो आँखों से उसे देखा नहीं जाता। लोट कर चीखती रहती है, हाथ-पाँव पटकती रहती है। जब चीखना-तड़पना बन्द हो जाता है, तो मुँह फेन से भर जाता है, दाँती बैठ जाती है, बदन तन जाता है। कभी-कभी तो दिन रात एक सी बेहोश पड़ी रहती है।"

फकीर ने पूछा, "और भी कुछ खास लच्छन हैं?"

बूढ़े ने कहा, "और तो खास कुछ नहीं है। जवान लड़की है, कोई रोग-बला नहीं, फिर भी सूखकर काँटा हुई जा रही है।"

फकीर बोला, "बिना देखे तो ठीक-ठीक कह सकना मुश्किल है, पर लगता है कि उस पर जिन आता है।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "इत्ते में तुम अपनी लड़की को यहाँ ले आओ। अम्माजान और दूसरी औरतें इस बीच फकीर साहब की कदमबोसी कर लेंगी।"

नज्जू मियाँ फकीर को अन्दर लिवा गया। लम्बी घूँघट काढ़कर आयशा ने फकीर को सलाम किया। फकीर बोला, "मुझसे क्या शरमाना माँ, मैं तो तुम्हारे बेटे जैसा हूँ।"

आयशा मालिक को सामने ले आई। बोली, "फकीर साहब को सलाम करो।" फकीर से कहा—"मेरा पोता है, बुढ़ापे का आखिरी

भरोसा। दुआ दीजिए।"

मालिक की ओर ताकते हुए फकीर ने पूछा, "इसके माँ नहीं है?"

आयशा का मुँह अँधेरा हो आया। सिर झुकाये बोली, "नहीं।"

फकीर ने खींच कर मालिक को गोद में बिठा लिया। बोला, "खुदा के रसूल भी तुम्हारे-जैसे यतीम थे। अल्लाह तुम्हारा भला करेंगे।" फकीर ने उसका सिर और पीठ सहलाई।

आयशा के मन का बोझ हलका हो गया। भर मुँह हँसकर बोली, "एक हविस है, मरने के पहले मालिक की बहू को देख जाऊँ, लेकिन मेरा बेटा इस पर खयाल ही नहीं करता, खामखा देर किये जा रहा है।"

फकीर ने हँस कर कहा, "शादी जरूर होगी। ऐसी जल्दी क्या है? दुधमुँहा बच्चा तो है। अभी ब्याह को क्या समझेगा?"

आयशा बोली, "दस साल पूरा हो चला। इस उम्र में तो बहुतों की शादी होती है।"

फकीर ने कहा, "वह जमाना लद गया। अब उमर से पहले ब्याहना अच्छा नहीं है। तुम्हें मालूम होगा कि इस्लाम के शुरू के दिनों में भी नाबालिगों की शादी की मनाही थी।"

सिर हिला कर आयशा बोली, "सो हम नहीं जानते। सदा से देखती यही आई हूँ कि नौ-दस साल के लड़के-लड़की की शादी होती है। घर में नन्ही बहू के आने से दादा-दादी को खुशी होती है। हम गिरस्थ हैं। कम उमर की बहू न आये तो घर के काम-धन्धे कैसे जानेगी! नः, सयानी बहू लाकर हमारा काम नहीं चल सकता।"

इतने में इब्राहिम अपनी लड़की को लेकर आ पहुँचा। पंद्रह-सोलह की होगी उम्र। भय से भरी हुई दो बड़ी-बड़ी आँखें, दुबला शरीर, लेकिन छाती पर दोनों स्तन भार से मानो टूटे पड़ रहे थे। मुँह सूखा-सूखा, रंग फीका, पर आँखें जल रही थीं। वैसी ही आँखें, जैसी डरे जानवर की होती हैं। अपने बाप के पीछे-पीछे इस तरह आई मानों काठ का पुतला हो। फकीर को सलाम करके जमीन पर बैठ गयी। इब्राहिम

ने कहा, "यही अभागिन है।"

लड़की के कपाल पर हाथ रखकर फकीर ने पूछा, "तुम्हें डर किस बात का है बिट्टो ? क्या तकलीफ है, बोलो ?"

फकीर के छूने से वह सिहर उठी। जरा देर चुप रही, फिर बोली, "मुझे भूत ने पकड़ लिया है। एक दिन नदी से पानी भर कर घर आ रही थी। अचानक बाँसों के घने झुरमुट में काली-कलूटी एक नंगी मूरत नजर आई। दोनों आँखें बेतरह जल रही थीं, गोया मुझे झुलसा देंगी। मुझे याद भी नहीं कि मैं घर कैसे पहुँची। लेकिन अम्मी ने बताया, अँगना में पैर रखते ही चीख कर मैं बेहोश हो गई थी। उसी रोज से अँधेरा होते ही वह मूर्ति मेरे सामने आकर खड़ी हो जाती है। अकेले रहते डर लगता है।"

कहते-कहते उसका स्वर ऊँचा होने लगा। हाथ-पाँव सख्त हो गये, मुँह से फेन छूटने लगा। चिल्लाकर कहने लगी, "वह देखिए, वहाँ-वहाँ खड़ा है, मेरी ओर ताक रहा है। उसे न हया है, न शर्म। इतने लोग यहाँ हैं और वह नंगा ही नाच रहा है। वह अभी मुझे खा जायगा। मुझे बचाओ, उससे मुझे बचाओ।" जिबह की गई मुर्गी की तरह वह जरा देर तड़पती रही, फिर बेहोश हो गई।

फकीर ने नब्ज टटोली। आँख की पलकें पलटकर देखीं। देखा, पुतलियाँ तनी हैं, नाड़ी तेज चल रही है, बेढंगी।

फकीर ने कहा, "एक बरतन में पानी और थोड़ी-सी हल्दी ले आओ।"

पानी के छींटे बार-बार उसकी आँखों पर दिये। आग पर रखकर हल्दी का धुआँ उसकी नाक तक पहुँचाया। बेहोशी में भी वह धुएँ के पास से हट जाने की कोशिश करती रही; मगर फकीर ने हटने नहीं दिया। रस्सी के एक टुकड़े से फकीर ने उसे मारना शुरू किया। थोड़ी देर में वह होश में आ गई। चीख उठी, "मत मारो, मुझे मारो मत।"

उपस्थित लोगों से फकीर ने कहा, "यह खुद लड़की नहीं बोल रही है। उसके मुँह से जिन बोल रहा है। जब तक वह छोड़ भागने को राजी नहीं होता, मैं रिहाई देनेवाला नहीं।"

जली हल्दी की बू और मार सही नहीं जा रही थी। वह गिड़गिड़ा कर बोली, "मुझे ज्यादा तकलीफ न दो।"

फकीर बोला, "अब कम्बख्त को काबू में ले आया हूँ।"

रस्सी दूसरे को थमा कर मारने को कहा। खुद पानी लेकर जाने क्या मन्तर पढ़ने लगा। सात बार पानी को फूँककर कुछ तो उसके माथे पर छिड़का, कुछ मुँह में डाल दिया।

लड़की के सिर पर हाथ रखकर फकीर ने कड़क कर पूछा, "ठीक बता, अब तू इसे सदा के लिए छोड़ भागेगा?"

नाक से कुछ अजीब आवाज में लड़की ने कहा, "तुम जो भी कहोगे, मैं करूँगा।"

साथ के आदमी से फकीर ने कहा, "और जोर से मारो।" अपने चिल्लाकर बोला, "मैं तुम्हें इतनी आसानी से नहीं छोड़ दूँगा। जाने का सबूत देना पड़ेगा। इस पानी भरे घड़े को दाँत से थाम कर सात डग चल कर दिखाना होगा।"

लड़की उठ खड़ी हुई। दाँत से कलसी को थामा और सात डग चली गई, फिर बेहोश होकर चारों खाने चित्त जा रही। घड़े का पानी बिखर गया। उसी कादो-पानी में वह पड़ी रही।

फकीर बोला, "अल्लाह का शुक्र, जिन छोड़ भागा। अब कभी इसे तंग नहीं करेगा।"

इब्राहिम को अकेले में एक तरफ ले जाकर कहा, "जल्दी से अपनी बिटिया की शादी कर दो। सयानी हो गई। उसे अब पति के शासन और आदर की जरूरत है। देर मत करो।"

सब फकीर की ओर देखते रह गये। भक्ति बढ़ गई। आयशा से उसने कहा, "फिक्र मत करो माँ, अल्लाह मेहरबान हैं, तुम्हारा भंडार वे

सोने के धान से भर देंगे।"

आधी रात तक खान-पान का हो-हल्ला रहा। सारे गाँव की जबान पर नज्जू मियाँ की तारीफ थी। किसी ने अपनी जिन्दगी में गाँव में इतनी बड़ी दावत नहीं देखी।

——आठ

सर्दी गई, बसन्त बीता, अब आया ग्रीष्म का प्रचंड प्रताप। वैशाख बीत चला, फिर भी आसमान में बादल की रेखा न दीखी। गले ताँबे-सी सूरज की रोशनी धरती पर बरस रही थी। सूखी माटी पानी के लिए रो रही थी। घास झुलस गई थी। गाछ के पत्ते जल गये, निःश्वास-भर भी हवा नहीं। चारो ओर धू-धू।

आँखें झुलसाने वाली धूप में दुबली पद्मा के पार का किनारा नहीं देखा जा सकता। भादों की पद्मा आज ऐसी हो गई है, यह कौन कहेगा! भादों में नदी की भरी जवानी। आज जवानी की आखिरी मंजिल में उभरी हुई पंजर की हड्डियों जैसे जहाँ-तहाँ चौर उग आये हैं। इस्पात की तरह पालिश किया हुआ आसमान, वैसा ही चिकना नदी का पानी। नदी से ऊपर आसमान में और आसमान से नदी में चारों तरफ धूप और गर्मी छिटकी पड़ रही थी!

नौ भी नहीं बजे थे, पर धूप में बाहर निकलना कठिन था। जहाँ भी छाँह थोड़ी-सी मिली, दुबक कर पशु-पंछी धौंक रहे थे। इस कदर गर्मी कि पेड़ के पत्ते तक नहीं हिल रहे थे। चारों ओर सन्नाटा, मानों धरती-आकाश सब आग के परदे से ढँका पड़ा हो।

नज्जू मियाँ घर से बाहर निकला। माथे पर हाथ रख कर बोला. "यह तो ताड़ पकाने वाली धूप है भादों की। इतने सबेरे इतनी गर्मी पड़ेगी, किसे मालूम था। यह आसमान क्या, जलती हुई भट्ठी है!"

रमजान ने कहा, "मैंने तो पहले ही कहा था सरदार, तुम्हें यकीन नहीं आया। दो बीस की उमर हुई अपनी, जनम से आज तक ऐसी गर्मी नहीं देखी।"

नज्जू मियाँ बोला, "यह तुम्हारा खयाल-भर है। हर साल यही लगता है कि ऐसी गर्मी पहले कभी नहीं पड़ी।"

घर से बाहर आते हुए इदरिस ने नज्जू मियाँ का कहना सुना। बोला, "रमजान ठीक ही कह रहा है मुखिया। इस बार सब जुदा ही लगता है। ऐसी असह्य तो पड़ रही है गर्मी, तिस पर हवा नाम को नहीं। आसार अच्छे नहीं दीखते।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "तो बेजा क्या है? इस साल अंधड़-तूफान नहीं आया, यह तो अच्छा ही है। बीते साल तो आँधियों के मारे सारे काम ही ठप् पड़ गये। गनीमत है कि अबकी वैसा नहीं हुआ।"

इदरिस ने कहा, "यह भी अच्छा नहीं। अंधड़-तूफान के मौसम में अंधड़-तूफान का न आना अच्छा लक्षण नहीं। आँधियों का ताँता टूट जाय तो निश्चिन्त अपने काम में लगा जा सकता है। इस साल न तो आँधी के आसार हैं, न पानी के।"

नज्जू मियाँ ने हँसकर बात को उड़ा देना चाहा। कहा, "तुम तो नाहक ही डर रहे हो। अभी तो वैशाख बीत रहा है, सारा जेठ तो बाकी ही पड़ा है। आसाढ़ आने दो, बारिश भी होगी। पद्मा में पानी बढ़ने लगा है, देखा नहीं?"

इदरिस बोला, "खुदा मालिक, मगर फिर भी मुझे डर लग रहा है। अब्बा से मैंने सुना है, बीस एक साल पहले एक बार वैशाख में एक दिन को भी आँधी नहीं आई, आकाश में बूँद-भर मेघ नहीं आया। और अखीर में जब मेघ उतरा तो ऐसा तूफान आया, ऐसा तूफान आया कि सारा इलाका बह गया।"

नज्जू मियाँ बोला, "होनी होकर रहती है। इतना सोचने से क्या होता है। क्यों रमजू, नाव तैयार है?"

इदरिस ने पूछा—"नाव से कहाँ जाना है ?"

नज्जू मियाँ ने जरा उखड़ कर कहा, "तुम्हारी अक्ल क्या मारी गई है ? होश भी है, आज चाँद का दसवाँ दिन है। पुनमासी के दिन जमींदार का दीवान धुलदी आयेगा। साल तमामी पर रुपया न देने से मालगुजारी कैसे वसूल होगी ? तमादी हो गई तो जर्मान जब्त नहीं हो जायगी ?"

"आज पद्मा पार का इरादा छोड़ ही दो तो क्या हो। पूँजी में से मालगुजारी की रकम चुका दो। बारिश उतर जाने पर नाव से चलने की सोचना।"

नज्जू मियाँ ने पूछा, "मगर आज जाने में क्या है ?"

"लोग-बाग कहा करते हैं, वैशाख की पद्मा राक्षसी है। क्या लाभ उस दई मारी को लोभ दिखाने से ?"

नज्जू मियाँ ने डाँट बताई—"यह औरतों वाली बात रहने दो। वैशाख में पद्मा राक्षसी होती है, आसाढ़ में दुर्वार, भादों में विश्वास-घातक—इन बातों पर कान देने से काम कैसे चल सकता है ? जिनमें साहस है, वे इस डर से घर में नहीं दुबके रहते। आसमान साफ है, बेला भी ज्यादा नहीं हुई है। अगर तूफान भी आयेगा, तो दोपहर के बाद। अगर धारा के सहारे डाँड़ खेते चलें तो दो ढाई घंटे में पार हो जायँगे। दोपहर के पहले ही पहुँच जायँगे।"

आयशा ने बाहर निकल कर पूछा, "हुज्जत किस बात पर हो रही है ?"

नज्जू मियाँ ने इदरिस की ओर क्रोध-भरी निगाह से ताका। माँ से कहा, "उस पार का नया चौर जो बन्दोबस्त किया है, उसकी माल-गुजारी देने जाना है। इदरिस को नाव के लिए कह रहा हूँ।"

"अंधड़-तूफान के दिनों नाव से जाने की सोच रहे हो ?"

नज्जू मियाँ ने कहा, "अंधड़-तूफान कहाँ अम्मा ? आसमान में न तो बादल का कोई टुकड़ा है, न जरा हवा। आँधी-पानी की तो आज बू भी नहीं।"

आयशा बोली, "अपनी इस हरकत से बाज आओ। वैशाख की पद्मा का कोई एतबार नहीं। सुबह तमाम साफ-सुथरा रहता है, मगर दोपहर होते-न-होते आँधी से बुरा हाल हो जाता है।"

नज्जू मियाँ बोला, "आँधी-तूफान भी क्या रोज आते हैं अम्मा? आयें भी तो तीसरे पहर से पहले तो हर्गिज नहीं। हम दोपहर से पहले ही नदी पार कर जायँगे। इसी से अभी चल देना चाहता हूँ।"

आयशा के गुस्से और निहोरा का कोई नतीजा नहीं निकला। पहले तो नज्जू मियाँ ने उसे बहुतेरा समझाया-बुझाया, फिर कहा, "इतना डरने से हमारा काम नहीं चलने का। हम उसके किनारे बसते हैं। आँधी-तूफान से लड़ते ही अपनी जिन्दगी खड़ी हुई। पद्मा के मिजाज से हम खूब वाकिफ हैं।"

आयशा बोली, "उसके मिजाज को मैं भी जानती हूँ, उसकी धूर्तता का कोई अन्त नहीं। आज तो ऐसा लगता है कि वह शिकार की ताक में बैठी है, यह चुप्पी इसीलिए है।"

दौड़ा-दौड़ा मालिक आया। बोला, "अब्बा, मैं भी चलूंगा।"

आयशा ने झपट कर उसे अपनी गोद में ले लिया। बोली, "नज्जू, तुम्हें मेरी बात माननी पड़ेगी।"

हँसकर नज्जू मियाँ ने कहा, "तो क्या तुम यह कहना चाहती हो कि मैं तुम्हारी बात नहीं रखता। खैर, चाहती हो तो मालिक को पास रख लो।"

मालिक को छाती से चिपका कर बोली, "आज का दिन देखकर कल जाओ तो काम नहीं चलेगा?"

"तुम्हारी बात क्या कभी शौक से टालता हूँ अम्मा? आज बिना गये हर्ज होगा। पुनमासी को मालगुजारी देनी है। रैयतों से अदा न कर लूँ तो क्या दूँगा?"

आयशा बोली, "एक साल की मालगुजारी सदा मौजूद रखनी चाहिए। मान लो, आँधी-तूफान होता, जाना-आना मुमकिन न होता,

तब ? कैसे चुकाते मालगुजारी ?"

"ठीक कहती हो। अबसे ऐसा ही करूँगा।"

आयशा ने कहा, "न हो तो मेरे जेवर बेचकर इस साल की माल-गुजारी चुका दो।"

हँसकर नज्जू मियाँ ने कहा, "अपने जेवर तो मालिक की बहू के लिये रख छोड़ो अम्मा। आँधी आई तो है नहीं। आसमान साफ है। हम जल्द ही उस पार पहुँच जायँगे। अगर साँझ-साँझ तक वसूली हो गई तो सुबह के समय नाव खोलकर, खुदा चाहेगा तो दोपहर को घर ही आकर खाना खाऊँगा।"

आयशा बोली, "नहीं ही मानोगे तो बशीर को अपने साथ ले लो। हजार बार से कम उसने नदी नहीं पार की होगी। इलाके-भर में उसके-जैसा दूसरा माँझी नहीं मिलेगा।"

आखिर नाव खोल दी गई। आसमान में सूरज का असह्य ताप। बालू तप कर मानो आग छितरा रही हो। पद्मा पर कुहरे की पतली परत। धूप से आँखें चौंधिया जातीं थीं।

रमजान ने पूछा, "पाल खोल दूँ ?"

बशीर ने कहा, "चाहो तो खोल दो, मगर हवा है कहाँ ? बेहतर हो कि सब मिल कर डाँड़ सँभालो। किसी तरह से बड़ी धारा को पार कर जायँ तो खतरे से निकल पड़ें।"

नज्जू मियाँ ने कहा, "तुम भी डर गये हो बशीर ?"

बशीर बोला, "डरने की बात नहीं मुखिया, आज नदी का रवैया मुझे ठीक नहीं लग रहा है। बहुत शान्त है, बहुत स्तब्ध। बड़ी-राव पार कर लें तो खातिर जमा।"

इदरिस और रमजान ने तब तक पाल खोल दिया। खोल तो दिया, पर हवा का नाम नहीं। कपाल का पसीना पोंछते हुए रमजान ने कहा, "जरा भी हवा नहीं।"

बशीर बोला, "यह तो मैंने कह ही दिया था। खैर। यह पसीना

क्या पोंछने लगे अभी से ? बैल से बड़े जवान, खेते डर लग रहा है ? मार-मार खे कर बड़ी धारा पार कर लो, लगो।"

इदरिस बोला, "एक चिलम तम्बाकू पी लेने दो, फिर देखना नाव को हवा-सी उड़ा ले जाऊँगा।" नज्जू मियाँ से पूछा, "तुम्हें तम्बाकू दूँ सरदार ?"

नज्जू मियाँ हँस कर रह गया, बोला नहीं। इदरिस बड़े जतन से चिलम चढ़ाने लगा। हुक्के में ताजा पानी डाला। खीझ कर बोला, "उफ, कितना गरम हो गया है पानी। ऐसे में भी काम होता है ?"

रमजान खेने में जुट पड़ा था। सर पर अँगोछे को पगड़ी-सा बाँध लिया था, मगर पीठ और छाती खुली पड़ी थी। पसीने की बूँदें झलकने लगी थीं।

नाव बीच दरिया में जा पहुँची। पद्मा के प्रचंड प्रवाह से नाव काँपने लगी। बशीर चिल्ला उठा—"हुक्का रक्खो इदरिस। डाँड़ सँभालो। नई धारा है, बहुत तेज।"

इदरिस का चिलम पीना खत्म तो नहीं हुआ था, पर उपाय क्या था। हुक्का रखकर उसने डाँड़ थाम लिया। बीच दरिया की धारा में नौका का मुँह पलट गया। अब पानी के कल्लोल के बदले नदी की खूँखार गरज सुनाई पड़ने लगी। सब 'बदर-बदर' चिल्ला उठे।

बशीर ने कहा, "स्रोत के उलटे जाने की कोशिश हरगिज न करो ? ऐसा चलो कि किनारे लौट चलने की गुंजाइश रहे। मस्तूल उतारो, पाल समेट लो। नाव को हलकी कर दो, फिर खुदा के रहम का भरोसा।"

कुछ देर तक सब चुपचाप रहे। केवल स्रोत की गरज और डाँड़ की छपछप सुनाई देती रही। इदरिस और रमजान पसीने में नहा गये। बशीर का भी वही हाल। वह केवल पतवार थामे ही बैठा न रहा, नाव को चलाने भी लगा।

थोड़ी देर में माथे का पसीना पोंछकर बशीर बोला, "अगर और

घंटा-भर कट जाय, तो हम खतरे से निकल जायँगे।"

रमजान ने कहा, "तो एक बार और तम्बाकू बनाऊँ?"

बशीर हँस पड़ा, "मरने की तो फुर्सत ही नहीं और नवाब साहब को तम्बाकू की सूझ रही है!"

इदरिस ने छींटा दिया, "तुम माँझी को पहचानते ही नहीं हो रमजान, नहीं तो ऐसा सवाल ही नहीं उठाते!"

अचानक हवा के झोंके से नाव हिल उठी।

रमजान बोला, "अब थोड़ी-सी चली है हवा। जान-में-जान आई। उफ्, कितनी गरमी है!"

इदरिस ने पसीना पोंछा। कहा, "यह हवा है? लगता है, आग की लपट हो!"

बशीर का चेहरा और भी गम्भीर हो उठा। बोला, "खुदा करे, हवा और तेज न हो। वैशाख की हवा का कोई ठिकाना नहीं कि वह कब तूफान हो जायगी। बीच दरिया में आँधी उठ आये, तो नाव सँभालना मुश्किल है।"

नज्जू मियाँ छौनी के बाहर निकला, "आँधी का जिक्र क्या हो रहा है?"

इदरिस बोला, "हवा में दम नहीं है। पसीना भी नहीं सूखता।"

मगर थोड़ी ही देर में हवा ने जोर पकड़ा। उत्तर-पच्छिम से झोंके आने लगे। पानी में उथल-पुथल मच गई। लहरें पागल-सी उछलने लगीं और नाव रह-रहकर पछाड़ खाने लगी। घबराकर सब आसमान की ओर ताकने लगे। पच्छिम आसमान में काले मेघ का एक टुकड़ा था। था तो एक टुकड़ा, मगर रंग इतना गहरा कि लग रहा था आसमान में स्याही फैला दी गई हो।

अब तक तमाम सन्नाटा था। कहीं कोई आवाज नहीं। अचानक चील की चीख से शून्य गूँज उठा। हवा तेज हो गई। उसके 'साईं-साईं' में बाकी आवाज डूब गई। बड़ी-बड़ी लहर नाव से टकरा कर

टूट-टूट जाने लगीं। मेघ का जो छोटा टुकड़ा दिख रहा था, उसने सारे आकाश को नाप लिया। धूमिल मेघ की ओट में सूरज छिप गया। अँधेरा फैल गया। डूबती रोशनी में पद्मा का पानी और भी भयंकर लगने लगा। हवा की पुकार और नदी की गरज से भयंकरता बढ़ गई।

विराट् नदी, अपार आकाश और प्रचण्ड बवंडर, इन तीनों के बीच एक छोटी-सी नाव पर ये कई जीव। जी-जान से वे आँधी से लड़ने लगे, लेकिन उनकी 'बदर-बदर' की आवाज नदी के पागल शोर गुम हो गई।

इदरिस ने चिल्ला कर पूछा, "लौटने की कोशिश करूँ ?"

बशीर ने नज्जू मियाँ की ओर ताका। उसने कहा, लौटने की कोशिश अब बेकार है। बीच नदी से हम निकल आये हैं। अब शायद उस पार पहुँचना ही ज्यादा आसान हो।"

बशीर ने सिर हिलाकर हामी भरी, "आगे बढ़ने से बचने की फिर भी उम्मीद है। तूफान जिधर चाहे ले चले, किनारे पहुँचने से काम।"

सब तूफान से जूझने लगे। मेघ के धुँधलके में उन्हें पहचानना मुश्किल था कि वे आदमी हैं। रह-रहकर बिजली चमक रही थी। उस चमक से भी अँधेरा कट नहीं रहा था। बादलों से नदी की गरज मिल गई थी। लहरों के झकझोरों से नाव रह-रहकर काँप जाती और फेन से भर जाती। लम्बी लहरों पर फेन ऐसा लग रहा था, मानों जहरीले अजगर की जीभ लपलपा रही हो।

हवा का रुख बदल गया। नज्जू मियाँ ने चिल्लाकर कहा, "हवा पूरब की हो गई।"

बशीर ने कहा, "तब तो पार पहुँचने की रही-सही उम्मीद भी जाती रही।"

रमजान चिल्लाया, "तूफान पर ही नाव को क्यों न छोड़ दें ? जिधर चाहे, ले जाय।"

वशीर बोला, "अब पाल का कोई फायदा नहीं।"

नज्जू मियाँ बोला, "नाव का रुख तूफान की ओर रखना ही ठीक है। बगल में लहरों के धक्के लगने से उलट जाने का ज्यादा खतरा है।"

वे लड़ते रहे। अचानक नाव का रुख बदल गया। वशीर ने घुमाने की हर कोशिश की, पर पतवार टूट गई। वह खुद दूर फिंका गया।

रमजान रो पड़ा, "अब जिन्दगी की कोई उम्मीद नहीं।"

नज्जू मियाँ ने डाँट बताई, "खबरदार जो रोये। मरना होगा तो मर्द की तरह तूफान से लड़कर मरेंगे।"

नाव बस में न रही। पतवार जाती रही थी। फिर भी वे लग्गी से नाव को बचाने की कोशिश करते रहे। लहरें धीरे-धीरे नाव के अन्दर पहुँचने लगीं। नज्जू मियाँ ने कहा, "लग्गी मत छोड़ना। नाव डूब भी जाय तो सहारा होगा।"

हवा की गरज और तेज हो गई। एक ऊँची लहर में नाव जैसे आसमान तक पहुँच गई और दूसरे ही दम पाताल में नीचे। जब लहर टूटकर छितरा गई, तो नाव का कोई पता नहीं रहा।

आँधी जैसे उठी थी, अचानक खत्म भी हो गई। तूफान घंटे-भर रहा होगा, शायद उससे भी कम रहा हो। हवा थम गई। विराट् नदी की छाती पर लहर की रेखा एक से दूसरे छोर तक हिलती रही।

पच्छिम आसमान में तब भी बादल के दो एक टुकड़े थे, उनमें आग की चिनगी छुला कर सूरज डूब गया।

* * *

असगर

नज्जू मियाँ की मौत की खबर से धुलदी के सभी लोग चकित रह गये, जैसे बिना बादलों के बिजली गिरी हो। पद्मा पर इतना कुछ गुजर गया, मगर धुलदी में आँधी की बू-बास भी नहीं। सारा दिन चिल-चिलाती धूप रही। जमीन जलकर खाक हो गई। जरा-भी हवा नहीं। पत्ते तक थिर पड़े रहे। साँझ होते-होते मछुओं की डोंगियाँ एक-एक कर धुलदी लौटने लगीं। उन्हीं मछुओं से लोगों ने जाना कि नदी में भारी तूफान आया। उसकी चपेट में जाने कितनी नावें लापता हो गईं। मुश्किल से ही मौत के मुँह से लौट कर आ रहे हैं। तूफान से मुकाबले की क्लांति उनके चेहरों पर थीं। उन्हीं डोंगियों में से एक में बशीर की बेहोश देह को देखकर लोग सिहर उठे। नज्जू मियाँ की नाव के लोगों में से महज बशीर ही नसीब के जोर से बच गया है। तूफान जब थम गया तो किसी मछुए ने अपनी डोंगी के पास उसकी लाश को उतराते देखा। किसी तरह उसे उठा लिया।

इस खबर से आयशा को तो काठ मार गया। यही खबर सुनने के लिए शरीर में जान बाकी रह गई थी ? वह पागल-सी नदी किनारे आई ; साँझ की रोशनी में शांत पद्मा कलकल गाती बह रही थी। उसकी यह मूर्ति देख कर कौन कहेगा कि थोड़ी ही देर पहले इसने

खूँखार राक्षसी का तांडव नृत्य किया था ? वह जार-बेजार रोने लगी, बाल नोचने लगी, छाती पीट-पीट कर रोने लगी—"अरी डाइन, मेरे बेटे को लौटा दे मुझे।"

वह नदी में कूद पड़ना चाहने लगी। बस्ती की औरतों ने उसे किसी तरह रोका। कहीं से मालिक को ढूँढ़ लाकर बूढ़ी की गोद में बिठाल दिया। बोलीं, "अम्माजान, अपनी फिक्र न करो चाहे, मगर इस दुधमुँहे बच्चे के लिए सब्र करो।"

मालिक को बुढ़िया ने छाती से चिपटा लिया। उसकी दोनों आँखें सावन-भादों-सी बरस पड़ीं। बुक्का फाड़कर रो उठी, "तेरे अब्बा तेरी शादी नहीं देख सके भैया ! अब तेरी देख-भाल कौन करेगा, कौन आपद-विपद में तेरी निगरानी करेगा ? हाट से तेरे लिए अँगोछा और लाल कुरता कौन लायेगा ? पद्मा के दोनों किनारे छाप कर बाढ़ हर साल आया करेगी, मगर तेरे अब्बा अब नहीं आने के, कभी नहीं आने के।"

दुःख और शोक से आयशा टूट गई। दिन हो गये, भरी जवानी में विधवा हुई थी। इसी बेटे को छाती से लगाये पति के शोक को पी गई थी। वही लड़का आखिर बड़ा हुआ, लायक निकला, गाँव का मुखिया बना। उसके रहते आफतों की कभी परवा नहीं हुई। लोग नज्जू से घबराते थे। कड़े मिजाज का आदमी था। मगर आयशा के लिए तो वह गोद का लड़का ही था, कलेजे का धन। आज ऐसे बेटे को खोकर वह किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गई। उसे बार-बार इसी बात की चोट लगने लगी कि उसने कभी अपने बेटे की कदर न की। कब वह उस पर बिगड़ उठी, कब झिड़कियाँ सुनाईं—रह-रह कर केवल यही बातें उसे याद आने लगीं।

धुलदी में फकीर से उसकी कहा-सुनी हो गई थी। उसने नज्जू को बद्दुआ दी थी। उस बददुआ की उसे याद आ गई। दुःख और वेदना से जी भर आया। फकीर पर गुस्से के मारे तन-बदन में आग लग गई।

जरा देर के लिए बेटे का शोक भी वह भुला बैठी। रो पड़ी। फकीर की मीठी बातों में आ गई। उसने जो दुआएँ दीं, सब बेकार गईं और बददुआ ही सही गई!

गाँव के सब लोग एक-एक कर उसके पास आये। क्या बड़े-बूढ़े, क्या औरत और क्या बच्चे। मगर उसे दिलासा कौन दे? जिस पर गाज गिरी हो, ऐसा पेड़ भी जिन्दा रह सकता है? बुत-सी बैठी वह हर-एक की बात सुनती जाती, खुद बेजबान हो गई थी। बोलती भी कभी तो अपने-आप से। और क्या बोलती थी, कोई समझ नहीं पाता।

एक दिन असगर मियाँ भी आया। आयशा के सामने जरा देर हत-सा खड़ा रहा। सोच कर आया था कि दिलासे के दो-चार शब्द कहूँगा। मगर बुढ़िया को देखकर उसके मुँह से शब्द ही नहीं फूटे। आयशा ने आँखें खोल कर उसे एक बार देखा। पहचान भी पाई कि नहीं, पता नहीं! उन दिशाहीन जलती आँखों की दृष्टि में असगर को ही जाने कैसा लगा। उसके कुछ बोलने से पहले ही आयशा धीरे-धीरे वहाँ से चली गई। असगर कुछ देर खड़ा रहा, पर वह फिर लौटकर नहीं आई।

दिन-भर वह ऐसे ही रहती—निर्जीव, प्राणहीन। साँझ के समय उसकी हालत बदल जाती। दिन डूबते ही वह मालिक को गोद में लेकर नदी किनारे जा खड़ी होती। दोनों आँखों से बेरोक धारा बहने लगती। मन-ही-मन कहती—साँझ हो जाती है, हर कोई अपने घर लौटता है, पर तेरा अब्बा अब कभी लौटकर नहीं आयेगा—कभी नहीं!' मालिक को देख-देख कर वह बार-बार यही कहती। मालिक रो पड़ता। उसे अपनी छाती से और भी कस लेती, फिर साँझ के अँधेरे में उदास आँखों से नदी को देखती रह जाती।

आयशा की इस हालत से मालिक के मन में भी दुःख भरता आ रहा था। दस साल का लड़का, मौत के बारे में वह जानता ही क्या था! अपने अब्बा के प्यार से वह वंचित जरूर हुआ, पर उसकी जिन्दगी

तो पड़ी थी सामने, पीछे पलटकर देखने की उमर उसकी आई नहीं। इस उमर में कोई शोक-दुःख से टूटा नहीं करता। वह रोता था, पर आयशा को देख कर। आयशा जब सामने होती, तो मालिक भी जानें कैसा हो जाता। दादी तो हँसी-खुशी का अविराम स्रोत थी। सारा दिन उससे खेलती, हँसी-ठट्ठा में मशगूल रहती—यह उसे हो क्या गया? जिन्दा है, पर जिन्दगी का कोई चिह्न नहीं; जाग रही है, मगर जागते का कोई लक्षण नहीं। ऐसी जीवित मृत्यु तो मौत से भी भयानक है! वह उसके चारों ओर चक्कर काटता रहता। आयशा के शोक के ताप से वह सूख गया। मालिक के पास पहुँचने से फिर भी समझ में आता था कि वह अभी जिन्दा है! उसे देखकर उसकी आँखों में परिचय की दीप्ति खेल जाती, बाकी दुनिया मानो उसके लिए मिट गई थी।

घर के काम-धन्धे जैसे चलते हैं, चल रहे थे। लोग उसके पास हुक्म माँगने जाते—क्या करें? वह उन्हें सिर्फ ताक कर रह जाती। लाचार लोग उठकर चल देते।

नज्जू को गुजरे महज सात दिन हुए; मगर ये सात दिन जैसे सात युग हों। आयशा के अधपके बाल सन से सफेद हो गये, आँख और चेहरे पर एक असह्य पीड़ा की झलक। उसकी तरफ देखा नहीं जाता। कुलसुम बार-बार दुआ माँगती—"अल्लाह, अम्माजान के मन को शान्ति दो। यह सब झेल कर कै दिन बच पायेगी बेचारी!"

आयशा एक कोने में चुपचाप बैठी रहती। जब-तब उसके होंठ हिल-हिल उठते। मालिक आकर कहता, "मुझे क्या भूख नहीं लगती?" अपनी दादी के बिना किसी दूसरे के हाथ से वह खाता ही नहीं। आयशा खाना लेकर खड़ी हो जाती। मालिक खाने लगता। आयशा की छाती का भार जैसे कुछ हलका हो जाता। नज्जू के बचपन की बातें उसे याद आतीं। मालिक से कहती कि नज्जू भी छुटपन में ऐसा ही नटखट था!

मालिक रात उसी के साथ सोता। एक रात अचानक उसकी नींद टूटी। देखा, बिछावन पर दादी नहीं है।

उसने पुकार मचाई। कोई जवाब नहीं। पहले तो गुस्सा आया, फिर घबरा गया! कुछ देर तक जब आयशा का पता ही न चला, तो वह डर गया। जोर से रो पड़ा—"दादी, ओ दादी, कहाँ गई तू?" फिर भी जवाब नदारद।

मालिक और भी डर गया। चारों ओर चमक रहा था अँधेरा। उसे लगा, यह अँधेरा जिन्दा है। कमरे में मिट्टी के दीपदान पर दिया जल रहा था। उसके टिमटिमाते प्रकाश में अँधेरा कम होने के बजाय और गाढ़ा ही हो रहा था। दीवारों पर काली छाया, मानो अँधेरे में भूत चल रहे हों।

'दादी-दादी!' मारे डर के गले से आवाज नहीं निकल रही थी। अँधेरे में पास में कोई हिल उठा। धीमी आहट और अँधेरे के कारण उसका डर और भी बढ़ गया। सूना बिछौना भयंकर लगने लगा। याद आया, कुलसुम और गुलाबी पास ही वहीं सोती हैं। दौड़ कर उन्हीं के पास जाने की इच्छा हुई। लेकिन हाथ-पाँव जैसे जम गये थे। बिस्तर से उठ ही नहीं सका। वह पूरी ताकत से चीख पड़ा—"दादी, कहाँ गई तू?"

पास कोई सो रहा था, जग गया। एक काली छाया उसके बिस्तर की तरफ बढ़ आई। डर से मालिक उसकी ओर ताकता रहा। छाया आदमी बन गई। मालिक ने देखा, उसके पास आकर खड़ी हुई है कुलसुम।

"रो क्यों रहे हो मालिक?"

मालिक भूल गया कि वह रो क्यों रहा था। अब डर तो रहा नहीं। याद पड़ गया। बिछौने से दादी गायब है। रोने लगा—"दादी नहीं है। कहाँ चली गई दादी?"

"इसमें डरना क्या? बाहर गई होगी, अभी आ जायगी।"

लेकिन मालिक चुप न हुआ। "मुझे डर लग रहा है।" वह कुल-

सुम से लिपट गया।

कुलसुम ने चिराग की बत्ती उसका दी। उसकाने से भी क्या होता। माटी के दिये की जोत भी कितनी! नाम को छिछला हुआ अँधेरा।

"डरने की कौन सी बात हुई! तुम तो मर्द हो। मर्द भी डर से रोते हैं कहीं?" कुलसुम ने उसे दुलारा। फिर भी उसे धीरज न बँधा। उसने कुलसुम को और कसकर पकड़ लिया।

काफी देर हो गई, आयशा नहीं आई। मन-ही-मन कुलसुम बोली, 'अम्माजान को जानें क्या हुआ।' मन में चिन्ता हो आई।

मालिक कुलसुम की तरफ देख रहा था। फिर रोने लगा—"दादी कहाँ हो तुम, कहाँ हो?"

कुलसुम भी भीतर से डर गई थी। मुँह से बोली, "मालिक, तुम इतने बड़े हुए? बच्चे की तरह रोना अच्छा लगता है भला! जाओ, सो रहो। मैं देखती हूँ जाकर, अम्माजान कहाँ गई हैं।" मगर उसकी सुनता कौन है? मालिक ने किसी भी तरह कुलसुम को नहीं छोड़ा।

कुलसुम ने डाँट बताई, "तुमने तो अजीब आफत कर रक्खी है। तुम्हारे-जैसे लड़के को लेकर किया क्या जाय? खैर, चलो, साथ चलो।"

कुलसुम बत्ती लेकर दरवाजे की ओर चली। दरवाजे के पल्ले योंही लगे थे, हाथ लगाते ही खुल गये। चाँदनी कमरे के अन्दर आ गई। पूर्णमासी पास ही है। खिली चाँदनी में घर-द्वार, पेड़-पौधे साफ दीख रहे थे।

कुलसुम ने एक दूसरी दाई को जगाया। उसे साथ लेकर बशीर के यहाँ गई।

पुकार कर बशीर को जगाया। आँख मलते हुए, परेशान होकर उसने कहा, "इतनी रात गये यह हाय-तोबा क्या है? क्या हुआ है?"

कुलसुम बोली, "अम्माजान देर से घर नहीं हैं। जाने कहाँ चली गईं।"

नींद का आलस काफूर हो गया। बशीर उछलकर उठ बैठा। पूछा,

"घर में तमाम देख लिया ?"

कुलसुम बोली, "हर कोना-कतरा देख गई। घर में तो कहीं नहीं हैं। इस आधी रात को आखिर जा भी कहाँ सकती हैं ?"

चारों ओर खोज-पड़ताल शुरू हुई। फिर से घर को देखा गया। यह-वह, यहाँ-वहाँ, हर जगह। मगर नहीं मिली। कहीं नहीं। मालिक की रुलाई थम नहीं रही थी। आखिर सब नदी किनारे पहुँचे।

घाट के पास ही ऊपर नज्जू की नाव रक्खी रहती थी। आज वह जगह खाली पड़ी थी। मगर वहीं पानी के किनारे वह क्या है ? जाकर देखा, माटी-कादो से सनी आयशा पड़ी है; उसके बिखरे बाल किनारे के हलकोरे से धीरे-धीरे काँप रहे हैं !

——एक

मालिक अँगना में खेल रहा था। घर की अब वह श्री नहीं रही। छः ही महीने तो हुए नज्जू मियाँ और आयशा को मरे। मगर इसी अरसे में जगह-जगह छौनी खिसक गई है। आँगन के कोने में घास-पत्ते उग आये हैं।

कुलसुम अन्दर काम कर रही थी। बाहर आई तो देखा, मालिक धूप में खेल रहा है। शिकायत करती हुई बोली, "छिः मालिक, तुम अब बड़े हुए। अब भी धूप में खेलते हो ?"

"धूप कहाँ है ?" हँसते हुए मालिक बोला। बात और हँसी के साथ-साथ सिर के बाल भी हिल उठे !

"नः, यह क्या धूप है ?" कुलसुम ने फटकार लगाई, "पड़ोगे बीमार

तो बता दूँगी ।"

"बताओगी क्या ?" मुँह बनाकर कुछ इस तरह से मालिक ने कहा कि कुलसुम हँसी न रोक सकी । गुलाबी को बुलाकर कहा, "जरा मालिक की बात तो सुनो ।"

उमर में गुलाबी कुलसुम से बहुत बड़ी है । कामों की भीड़ से उसे दम लेने की फुर्सत नहीं, इसी से झुँझलाई-सी रहती है । बच्चों की बातों के लिए उसे समय ही कहाँ ? झिड़क उठी, "गुलाबी-गुलाबी का क्या शोर था ? इसमें हँसने की क्या बात हुई ?"

बेवजह गुलाबी के गुस्से पर कुलसुम को हँसी आ गई । वह मुँह में कपड़ा डाल कर हँसने लगी । उसे निरुत्तर हँसते देख गुलाबी का गुस्सा और तेज हो गया । गाली देकर कहने लगी, "मुँहजली कहीं की ! इतनी हँसी काहे की ? यार आया था क्या कि रस से टलमल हो रही हो ?"

गुलाबी की इस चिकोटी से कुलसुम शरमिन्दा न हुई । उसके मन में आया, उमर भी मेरी क्या है ! यार अगर आ ही गया....

"कहा जाता है, काम पर विचारों की परछाईं पड़ती है । दिन-रात जब देखो बस एक ही चिन्ता—यार कि यार ! सो बातों में तो 'यार' का उतर आना जरूरी ही है ," कुलसुम ने कहा ।

छूटते ही गुलाबी ने कहा, "और तू यार के बारे में सोचती ही नहीं, क्यों ?"

कुलसुम खड़ी-खड़ी हँसती रही । पास आकर मालिक ने पूछा, "इतना हँसती क्यों हो कुलसुम ?"

गुलाबी ने कस दी फबती, "ले सँभाल, तेरा नन्हा यार आ गया ।"

"बेशक आ गया । आओ मालिक ।" गोद में उसे उठाकर कुलसुम अन्दर चली गई ।

दुलार मिले तो मालिक को और कुछ भी नहीं चाहिए । मगर कुलसुम का दुलार उसे ज्यादा लगा । वह गोद से उतर कर फिर

आँगन में भाग आया।

एक तरफ मजे का कादो कर रखा था मालिक ने। दोनों हाथों लोंदा तैयार करके वह घर बनाने में लगा था। इतने में खेत के काम से छुट्टी पाकर बशीर आ धमका। गिरस्ती गुलाबी और कुलसुम पर थी, खेत-खलिहान बशीर पर।

घर के मालिक के न होने से जो हुआ करता है, वही हो रहा था। बूढ़े आदमी से सँभाले सब•सँभल नहीं पा रहा था और गुलाबी या कुलसुम उसका हाथ क्या बटा पातीं। मालिक के दूध के दाँत नहीं टूटे, दुनियादारी वह समझता ही कहाँ था?

आयशा के मरने के बाद मालिक बेहद मुरझा गया था। आखिर बच्चा ही ठहरा, शोक का बोझा कहाँ तक ढोते बनता। लेकिन महीना जाते-न-जाते फिर खेल-कूद में मशगूल हो गया। मगर दादी की याद फिर भी उसे आती रहती थी। दादी को ढूँढ़ा करता, कहाँ गई? समझ नहीं पाता। कुछ देर चुप खड़ा रहता, फिर खेलने चल देता।

मुसीबत आती साँझ को। दादी के सिवा दूसरे के खिलाये खाता नहीं, दूसरे के सुलाये सोता नहीं। गप-शप, किस्से-कहानी, भूत-प्रेत के किस्से अब कौन सुनाये उसे? कभी-कभी उसे बड़ा गुस्सा आता। आखिर दादी इस तरह उसे अकेला छोड़ कर कहाँ भाग गई? कुलसुम खिलाते वक्त मनाते-मनाते थक जाती। तंग आकर धौल-धमाके जमा बैठती। मालिक फूल-फूल कर रोता, रोते-रोते आखिर सो जाता।

दिन बीतते जाते। समय किसी के लिए रुकता ही कब है? दिन-दिन पुराने दिनों की याद धुँधली होती जाती। मालिक दादी को धीरे-धीरे भूल चला था। बाप की बात भूल चुका। कुलसुम अपने बच्चे की तरह उसका पालन-पोषण कर रही थी। मालिक ने सारे हृदय से उसे अपना लिया था। कुलसुम की उम्र बाईस-तेईस की होगी। दोहरा बदन। जब वह पन्द्रह की थी, उसकी शादी हुई थी। साल भी नहीं पलटा, विधवा हो गई। तब से यहीं है, इसी घर में। ब्याह की बात

कई बार आई, कुलसुम, टाल गई। आयशा ने भी जब-तब कहा था, 'कुलसुम, तेरी उमर है, शादी तुझे कर लेनी चाहिए।' कुलसुम ने हर बार हँस कर कहा, 'अम्माजान, जिन्दगी के बाकी दिन आपकी खिद-मत में काट दूँगी।'

नज्जू मियाँ जब चल बसा, तो बशीर को फिकर लग गई। जवान विधवा को रखकर जाने क्या आफत आये। मगर कुलसुम के विरोध से वह कुछ बोल नहीं सका। फिर भी जब-तब मजाक कर बैठता—"इतन घर और उसका मालिक एक नाबालिग लड़का। उसकी देख भाल करने वाला भी है तो अस्सी साल का एक बूढ़ा—मौत का मेहमान और एक छोकरी, जिसके अभी दूध के भी दाँत नहीं टूटे। उसके पीछे गाँवों के शोहदों की जमात लगी चलती है। हाँ, भूल गया, एक और बुजुर्ग मालिक के माथे पर हैं; काम करें, न करें, हर वक्त उन्हें यही फिक्र रहती है, कब जरा लेट लें। तोबा-तोबा!"

गुलाबी जलकर आग हो जाती, "तुम आप तो सठिया गये हो, यह हम लोगों पर तोहमत क्यों?"

तीनों में ऐसी झड़प होती ही रहती, मगर एक बात में तीनों एक थे; रत्ती-भर फर्क नहीं; मालिक को वे हृदय से प्यार करते थे। माँ-बाप-विहीन बच्चे के दिन इसीलिए मजे में बीत रहे थे।

बशीर ने उसके लिए तीर-धनुष बना दिया था। कच्चे बाँस का धनुष, सनाठी का तीर। मगर मालिक को मानो न्यामत मिल गई हो। खुशी का कोई ठिकाना नहीं। गाँव के बच्चे उसे घेरे रहते, उसकी किस्मत से डाह होती, हिस्सा बाँटने का लोभ होता। एक नन्ही-सी लड़की ने ताली पीट-पीटकर कहा, "वह देखो, बरगद की डाल पर वहाँ एक चील है, मारो तो अपने तीर से, तुम्हारी बहादुरी देखूँ।"

"ऐं, मैं नहीं मार सकता? देख, अभी मार गिराया उसे।"

मालिक कमान सँभाल लेता। फिर जानें क्या सोच कर कहता, "चील मार कर क्या होगा?"

साबू नाम का जो लड़का था, वह मालिक का प्रतिद्वन्दी था। बोला, "हुँः मार कर क्या होगा ? यह क्यों नहीं कबूल कर लेते कि मार नहीं सकते ?"

मालिक ने जैसे यह सुना ही नहीं। बातों-बातों में लड़के आपस में उलझ पड़े। एक ने कहा, 'कौन कहता है, मार नहीं सकता ?' दूसरी जमात ने कहा, 'हाँ, नहीं मार सकता। चील को मारना ठट्ठा नहीं है !' मालिक की जमात वालों ने मुँह बिदकाया—'खूब सहज है। चाहे तो मालिक फौरन मार सकता है।'

किसी ने कहा, 'चील भी कोई चिड़िया में चिड़िया है ? उसका गोश्त तो खाया नहीं जाता। क्या होगा उसे मार कर ?'

मालिक यह सब कुछ सुन ही नहीं रहा था। तीरन्दाज था वह सो भी ऐसा-वैसा नहीं। वीर है तभी तो उसके पास धनुष है ! कभी सोचता, 'मैं अमीर हमजा हूँ।' फिर सोचता, 'नहीं' शेरे खुदा अली। अकेले मोर्चा ले सकता हूँ।' सोच कर ही नहीं रह गया, कह डाला। फिर क्या था। लड़के पगले हो उठे—'ऐं, अकेले मोर्चा लेगा ? देख ही लिया जाय, कैसे वीर हैं हजरत।' और सबने एक साथ उस पर धावा बोल दिया। साबू जरा तगड़ा पड़ता था, मालिक पार कैसे पाता ? उसने तीर चलाना शुरू कर दिया। कहाँ का निशाना, तीर पास ही बिखर कर गिरने लगे। किसी के बदन तक इत्तफाक से पहुँच भी गया तो उससे होना क्या था !

मालिक बिगड़ उठा—"नः, तुम्हारे साथ खेलना बेकार है। तुम खेलना भी नहीं जानते। जिसे तीर लगे, उसे गिर जाना चाहिए।"

मगर सुनता कौन है ? साबू ने पैरों से दबाकर एक तीर को तोड़ दिया।

"मेरा तीर क्यों तोड़ दिया ?" मालिक साबू पर टूट पड़ा। साबू तो लड़ने को तैयार ही बैठा था। खेल-खेल में सचमुच ही लड़ाई ठन गई।

साबू ने मालिक के तीर तो ताड़ ही दिये, तीरों से उसकी खबर भी पूरी तरह ली। साबू ज्यादा जोरावर था। मालिक को मुँह की खानी पड़ी। हाय रे अमीर हमजा और शेरे खुदा अली! साबू के हाथों उनकी इस बुरी तरह हार होगी, यह भी कभी सोचा होगा उन्होंने! मालिक को पीट-पाट कर साबू ने धनुष उठाया। कच्चे बाँस का धनुष कब तक टिकता। खींचते ही टूट गया। अब मालिक आपे में न रहा, पागल-सा साबू पर टूट पड़ा। अचानक हमले के लिए साबू तैयार नहीं था। दोनों धड़ाम से जमीन पर जा रहे। धूल से सारा शरीर भर गया। मगर कोई किसी को छोड़नेवाला न था। लड़कों की जमात दोनों को बढ़ावा दे रही थी।

बड़ी देर तक लड़े। दोनों थककर चूर हो गये। हाँफते हुए साबू ने कहा, "तू तो गजब का लड़ सकता है!"

मालिक बोला, "और तू ही क्या उन्नास है।" लड़ने की धुन में धनुष की याद नहीं रही थी। अब टूटे धनुष पर नजर जो पड़ी तो शोक-सा उमड़ आया। बोला, "मेरा धनुष क्यों तोड़ा तूने?"

साबू ने शरारत की हँसी हँसकर कहा, "मैंने क्या जानकर तोड़ा है? लड़ाई में हथियार तो टूटते ही हैं।"

मालिक की आँखें भर आई थीं। मगर वह तो वीर था। बोला, "कोई परवा नहीं। अब नकली नहीं, असली तीर-कमान बनवा लूँगा।"

बच्चों की जमात फिर डाह से जल उठी। उनके नसीब में कभी तीर-कमान का दर्शन भी नहीं और यह फिर से असली बनाने की धुन में है!

जिस नन्हीं बच्ची के कारण मूल लड़ाई की नौबत आई, वह डर से बशीर को बुलाने चली गई थी। बशीर दौड़ा-दौड़ा आया।

क्या हुआ, यह समझने में उसे देर न लगी। अपनी हँसी रोक कर नकली गुस्से से उसने साबू का कन्धा झकझोर दिया। कहा, "इतना बड़ा लड़का, एक नन्हें नादान से लड़ते तुझे लाज नहीं आई?"

साबू घबरा गया। बोला, "उसी ने तो शुरू की, मैं तो...."

वह बच्ची चिल्ला उठी—"सरासर झूठ। मालिक का धनुष तुम्हीं ने तो तोड़ा।"

साबू तुनक उठा—"ज्यादा बकवास न कर, बुरा होगा। मैं कहे देता हूँ। भाग जा यहाँ से।"

बशीर बोला, "खबरदार साबू, उसे झिड़की मत दे। अच्छा बेटी, तुम्हारा नाम ?"

"ऐं, तुम नाम भी नहीं जानते ! मैं नूरू हूँ।" उसकी आँखों में अचरज का एक ऐसा भाव खेल गया, मानो उसका नाम न जानने से बढ़कर दूसरा अपराध ही नहीं।

"वाह, बड़ा प्यारा नाम है तुम्हारा ! इसके पहले तो तुम्हें मैंने कभी देखा नहीं ?"

"मैं यहाँ थी कहाँ कि देखते ? यही महीना-भर तो हुआ अब्बाजान हमें यहाँ लाये हैं।"

बशीर ने पूछा, "अब्बाजान कौन ?"

नूरू से पहले ही साबू बोला, "जानते नहीं, यह असगर मियाँ की बेटी है ?"

असगर की बेटी ! बशीर ताज्जुब में पड़ गया।

"उसने शादी कब की ? फिर यह गुड़िया-सी प्यारी बेटी। हमें कोई खबर ही नहीं।"

"जरूर ही असगर की शादी बहुत पहले हो चुकी होगी। मैंने उसकी बीवी को भी देखा है। बेहद खूबसूरत, बहिश्त की परी जैसी !"

"अच्छा ! हूर जैसी बीवी ! हमें खबर भी नहीं !"

मालिक की तरफ घूम कर बशीर ने पूछा, "काफी चोट आई है न ?"

"हुँः, चोट क्या लगेगी !" लजाकर मालिक ने कहा। "अब की लेकिन मुझे सच्चा तीर-धनुष बना देना होगा। टूटे नहीं।"

"बना दूँगा," कहकर बशीर ने उसे कंधे पर उठा लिया और घर की ओर चल दिया।

——दो

कुलसुम जोर-जोर से पुकार रही है, "मालिक, मालिक!"

पेड़ के ऊपर कोई हँस उठा। फुनगी पर चढ़ कर मालिक हँस रहा था।

"मर गई मैं तो! दिमाग तो खराब नहीं हो गया लड़के का! बेर पर चढ़ गया है। अरे उल्लू, काँटा चुभ जायगा, काँटा!"

मालिक ने जवाब नहीं दिया। हँसने लगा। टप्-से एक बेर कुलसुम की नाक पर आ लगा।

बनावटी रोष से कुलसुम ने कहा, "बन्दर कहीं का, पकड़ पाऊँ तो बेर मारने का मजा चखा दूँ। अच्छा ठहर जा तू।"

अब एक की कौन कहे, बेरों की जैसे झाड़ो लग गई कुलसुम के माथे पर। पका, अधपका, कच्चा ढेरों बेर झड़ने लगे।

कुलसुम का गुस्सा गल गया। बेर खाते-खाते बोली, "तुम बेशक बन्दर हो, असली बन्दर। रहो गाछ पर बैठे। तुम्हारे लिए मेरी बला रुके। मैं घर जा रही हूँ।"

कुलसुम नदी में जूठे बरतन मलने आई थी। मालिक पीछे लगा चला आया था। यहाँ वह कब बेर पर जा बैठा, पता नहीं।

कुलसुम उठ खड़ी हुई। बगल में पानी भरी गगरी, माथे पर धुले बरतनों का बोझा।

मालिक मजाक कर बैठा—"शाबाश मेरे बहादुर!"

कुलसुम उसके मजाक की परवाह क्यों करने लगी। अनसुना करके

वह घाट की ढाल से चढ़कर ऊपर आई और चल पड़ी। मालिक ने देखा, कुलसुम उसके लिए रुकी नहीं। चिल्लाकर बोला, 'ठहरो, तुम्हें जाने देता हूँ।' दौड़ा गया, पीछे से उसके दोनों घुटने पकड़ लिये। 'अब घर जाओ—जाओ।' कह कर खिलखिला कर हँस पड़ा। कुलसुम के दोनों ही हाथ घिरे थे। एक से वह काँख की गगरी थामे थी, दूसरे से माथे पर के बरतन। मालिक का हाथ छुड़ा लेने का उपाय नहीं था।

कुलसुम मिन्नत करने लगी, "मेरे भले भैया, घुटने छोड़ दो। देर हो जायगी।"

"हु, अब भले भैया? पहले डराया क्यों था?"

"अच्छा अब नहीं डराऊँगी, छोड़ दो।"

"कभी नहीं डराओगी? सच?"

"हाँ, सच। कभी नहीं।"

"तीन बार कहो।"

"नहीं, नहीं, नहीं! हो गया न? बाप रे बाप! ऐसा शरारती तो मैंने देखा नहीं।"

"शरारती मत कहो, नहीं तो फिर रोक दूँगा।"

"नहीं-नहीं, राजा भैया! खुश हो गये?"

चुप होकर मालिक कुलसुम के पीछे-पीछे चलने लगा।

आँगन के एक तरफ साबू खड़ा था। पूछा, "अब तक कहाँ था तू?"

"क्यों, बात क्या है?"

"बात तो कोई नहीं। लेकिन मजे का एक तमाशा देखना चाहो तो तुरत चलो।"

"कहाँ?"

"यह फिर बता दूँगा। अभी चल तो तू।" उसने मालिक का हाथ पकड़ कर खींचना शुरू किया। मालिक समझ गया, हो न हो, साबू ने कुछ जुगाड़ भिड़ाया है। वह कुलसुम से बोला, "अभी आया मैं।"

"खाने का वक्त...." कुलसुम के मुँह की बात मुँह में ही रह गई। सुने कौन ? दोनों बात-की-बात में आँखों से ओझल हो गये।

'ऐसा शरीर लड़का मैंने नहीं देखा। जो जो में आता है, करता है। दिन-भर गिलहरी-जैसा चंचल। खाने की भी सुध नहीं। बीमार पड़ जाय, तो मेरी मौत।' कुलसुम अपने-आप बुदबुदाती रही।

रसोई के बरामदे से गुलाबी ने पूछा, "सिर न पैर, क्या बके जा रही है ?"

"बकबक करे मेरी बला। मालिक की कह रही थी। पारे-सा चंचल, हरदम टलमल-टलमल। घड़ी-भर भी जो थिर बैठे कहीं।"

"शुरू हो गया न आँख लड़ाना। मैं फिर कहती हूँ कुलसुम, तू शादी कर ले।"

"उमर में तो तुम बड़ी हो दीदी। तुम्हारा कोई हीला हुए बिना मेरी शादी कैसे हो ? पहले अपना ठिकाना कर लो, फिर मेरी फिकर करना।"

"पेट में चूहे कूदते हों और मुँह पर लाज का पहरा हो, तो खुद ठगी जायगी तू। मेरा क्या ?"

कुलसुम हँसने लगी—"जभी तो कहती हूँ, कहीं अपना ठौर कर लो।"

"तुझे मरना ही कबूल है, तो मर। तेरे ही भले के लिए कहा और लगी मजाक उड़ाने। इतना रस भला सँभाले सँभले ? दूर हट दई-मारी, दुनिया का काम पड़ा है और इसे सूझी है दिल्लगी।"

हँस कर कुलसुम हट गई।

मालिक और साबू दौड़े-दौड़े अपने प्रिय आम गाछ के नीचे पहुँचे। तने के पास ही एक मजे की मोटी डाल। मजे से बैठा जा सकता है। वहाँ सभा बैठ गई थी। इन दोनों के पहुँचते ही एक लड़के ने जोर से पूछा, "इतनी देर क्यों कर दी ? वे सब चले भी गये।"

मालिक ने प्रश्न भरी निगाह से ताका। साबू बोला, "बताता हूँ, सुन। एक नाव की जुगत लगाई है। नदी के पार जाना है। चलेगा तू ? तैरना जानता है ?"

छूटते ही मालिक ने कहा, "जरूर जाऊँगा।"

"तो फिर देर मत कर। बाकी सब वहाँ जा धमके हैं। हम लोगों को छोड़कर ही चल देंगे।"

"नाव है किसकी ?"

"इसका किसे पता है ? और चाहे जिसकी भी हो, हमें क्या ? चलना है तो झटपट चल।"

मालिक को फिर भी आगा-पीछा करते देख साबू बोला, "इसकी फिकर तू जरा भी न कर। मौका समझ कर ही हमने नाव जुटाई है। घाट पर अभी कोई नहीं मिलने का। मर्द लोग या तो खेत में होंगे या हाट में, और औरतें होंगी अपनी रसोई में। रोकनेवाला कहीं कोई नहीं।"

"अगर नाव वाला आ धमके ?"

"जभी तो कह रहा हूँ, जल्दी चल। एक बार नाव खोली कि फिर अपनी परछाईं कौन छू सकता है ? छोटी-सी नाव है, देखते-ही-देखते ले भागूँगा। पीछा भी कोई क्या करेगा। घाट पर जो भी बँधी पड़ी हैं, बहुत बड़ी नावें हैं। अकेले खेना मुश्किल।" साबू को देर बर्दाश्त नहीं हो रही थी।

"मगर नाव तो पराई है। अब्बा कहा करते थे...." बाप की बात याद आते ही मालिक की आँखें भर आईं।

"तू पूरा बछिया का ताऊ निकला। अबे, बाप तो ऐसा ही कहा करते हैं। कभी वे भी छोटे थे। छुटपन में जानें कितनी बार नाव चुराई होगी, किसे मालूम ?"

"नहीं, नहीं, मेरे अब्बा ने कभी ऐसा नहीं किया।"

"नहीं किया है ! अपने बाप के बारे में तू जानता कितना है ?"

"अब्बा के बारे में फिर कुछ कहा तो अच्छा न होगा। फिर तुझसे कोई नाता न रखूँगा।"

अचरज से साबू ने कहा, "मैंने तेरे अब्बा के बारे में कहा ही क्या ? तेरे अब्बा बड़े भले थे। काफी लम्बे जवान ! मुझे कितना मानते थे !

कितना प्यार करते थे ! कितनी बार मिसरी दी थी, गुड़ दिया था। एक बार हाट से चीनी की मिठाई लाये थे, वह भी दी थी।"

बाप की चर्चा आ जाने से मालिक की आँखें छलक आईं। संगी-साथी उसके उमड़े हुए आँसुओं को कहीं देख न लें, इस डर से उसने दौड़ लगाई। साबू उसे रोते देख घबड़ा गया। पीछा करके उसे पकड़ा और पूछा, "अबे बेवकूफ, इसमें रोने की कौन-सी बात हो गई ?"

"रोने की ? किसने कहा कि मैं रो रहा हूँ ?" गर्दन घुमाकर मालिक गुस्सा भरे स्वर में बोला, मगर उसकी आँखों के कोनों में तब भी पानी छलक रहा था !

साबू तो बुद्ध बन गया। पता नहीं, इस मालिक का दिमाग कैसा है !

अचानक उसे याद आया कि वह घाट पर नाव रख आया है। कहा, "तुझे जाना भी है या नहीं ? अगर न जाना हो, तो बता, मैं चल दूँ।"

मालिक दुविधा में पड़ गया। हमजोलियों के साथ नाव की सैर को जाने का लोभ भी हो रहा था, मगर बाप की मनाही भी भूली नहीं जा सकती थी। सोचने लगा, 'अब्बा तो रहे नहीं, अगर उनकी बात टाल दूँ ? मैं न भी जाऊँ तो लड़के तो मानने के नहीं, जरूर जायँगे। आइन्दा शायद मुझे कभी साथ चलने को भी न कहें।'

वह साबू को देखने लगा। निश्चय नहीं कर पा रहा था कि करे तो क्या करे।

साबू ने ताकीद की, "भई, मुझे तो देर बर्दाश्त नहीं। जाना है या नहीं, जल्दी बता।"

"अच्छा, घाट तक तो चल, फिर देखा जायगा।" आखिर अब्बा ने नदी किनारे जाने की मुमानियत तो नहीं की। दूसरों की नाव पर चढ़ने को अलबत्ता मना किया है। मगर यह कुछ जरूरी तो है नहीं की घाट पर जाने से नाव पर चढ़ना ही पड़ेगा।

दोनों घाट की ओर बढ़े। इतने में पीछे से कोई हँस उठा। साबू

चौंक उठा, "कौन ? नूरू ?"

"हाँ, नूरू ही तो है," नूरू फिर हँस पड़ी।

मालिक ने कहा, "हँसती क्यों है तू ?"

उत्तर आया, "क्यों न हँसू ?"

"लड़कियों की खोपड़ी में अकल नहीं होती, बस हँसना ही जानती हैं। चलो मालिक।" साबू बोला।

"और लड़के बड़े चालाक होते हैं। क्यों ? लड़के तो जानवर होते हैं, जानवर।" नूरू ने गम्भीर होकर कहा।

साबू डपट उठा, "देख, लड़कों को गाली मत दे। कहे देता हूँ। दाँत तोड़ दूँगा।"

"ओह् हो, बड़े शेर आये हैं !" नूरू हँसने लगी। "तुम्हारी लाल-पीली आँखों से मैं डरनेवाली नहीं। मैं सौ बार जानवर कहूँगी, गधा कहूँगी, मेरी खुशी। मैं हँसूगी, मेरी मरजी। तुम रोकने वाले कौन होते हो ?"

डाँटने के बाद ही साबू को घबराहट हुई थी। वह नूरू को खूब पहचानता है। सो वह और कुछ न बोला।

मालिक को यह सब कैसा तो लग रहा था। उसने बात को नया मोड़ देने के खयाल से पूछा, "अच्छा तू नाला कैसे पार कर आई ?"

"नाला ? वह तो कब का सूख गया है, तुम्हें खबर भी नहीं ?" नूरू को मानो बड़ा ताज्जुब हुआ।

साबू बोला, "इसे इन बातों की खाक खबर हो, इन बातों में रहता ही नहीं।"

नूरू कहने लगी, "और तू शायद सर्वज्ञ है, सब कुछ जानता है ?"

मालिक को यह सब रुच नहीं रहा था। गोकि उसे इस बात की खुशी थी कि नूरू उसी के पक्ष मे है। उसे साबू पर क्रोध आया। बोला, "देख, मेरे बारे में फिर कुछ कहेगा तो भला न होगा।"

"नाहक ही बिगड़ रहे हो। बिगड़ने की बात ही क्या हुई ?" साबू

ने कहा। नूरू की तरफ देखते हुए कहा, "तू तो जलभुन कर योंही खाक है। चलेगी हम लोगों के साथ ?"

नूरू ने पूछा, "कहाँ ?"

"नाव की जुगत लगाई है। सैर को जाऊँगा, वहाँ, नये चौंर तक जाऊँगा।"

नूरू ने पूछा, "और यदि मगर पकड़ ले ?"

साबू ने बात को उड़ा देना चाहा, "मगर ? तू भी क्या कहती है !"

मालिक कुछ तै नहीं कर सका था कि नाव में जाय या न जाय। नाव की सैर का लोभ। नये चौंर के बारे में सोचकर जी खुश हो रहा था। उधर अब्बा की मनाही—वे दूसरों की नाव पर चढ़ने का मना कर गये हैं। क्या करे, कुछ ठीक न कर सका, सो अचानक बोल उठा, "मैंने एक बार एक मगर मारा था।"

साबू ठठाकर हँस पड़ा। बोला, "दून की हाँकने की और कोई जगह नहीं मिली तुझे ? चंडूखाने की गप शुरू कर दी। ये हजरत मगर मारेंगे ? नाव पर चढ़ने का तो साहस ही नहीं, सूखे में गाल बजाना आता है।"

साबू के ताने से मालिक बिगड़ उठा, "मेरे बारे में तू मुझसे ज्यादा जानता है ? ज्यादा चीं-चपड़ मत कर, वरना एक ही थपेड़े में मुँह उलट जायगा।"

दोनों में ठन जाने की नौबत आ पड़ी। नूरू ने जोर से चिल्लाकर कहा, "खबरदार जो झगड़े। मैं बशीर चाचा को बुला लाऊँगी।"

साबू को बशीर से बेतरह डर लगता है। मगर वह हार कैसे मान जाय। बुजुर्ग की तरह बोला, "तुझे अच्छा भी क्यों लगे, तू मर्द तो है नहीं।"

नूरू इससे तुनक कर कह न बैठे कुछ, इसलिए वह मालिक से कहने लगा, "क्या सचमुच ही तुमने मगर मारा था ? जरा सुना न वह किस्सा !"

नूरू ने भी साथ दिया, "हाँ-हाँ, सुनाओ।"

अपनी बहादुरी सुनाने का मौका पाकर मालिक खुश हो गया। उसने खाँसकर गला साफ कर लिया और बोला, "जानते ही हो, आश्विन में पूजा होती है! दसेक दिन उस समय पूजा के बाकी थे, जब मैंने मगर मारा था।"

साबू ने बीच में टीका, "तुम क्या खाकर मगर मारोगे? मैं जैसे जानता ही नहीं कि मगर मारा किसने था?"

नूरू को नागवार लगा। बोली, "जानते ही हो तो किस्सा सुनने की क्या पड़ी थी? सुनना चाहो तो सुनो, नहीं तो अपनी राह लगो।"

साबू बोला, "रोब गालिब करना तो खूब जान गई हो!"

मालिक इतनी हुज्जत करना नहीं जानता। वह बोला, "भाले से उसे मारा तो अब्बाजान ने था, लेकिन उसे बंसी में फँसाया किसने था? वह तो मेरे हाथ से उन्होंने बंसी ले ली, नहीं तो...."

साबू ने व्यंग से कहा, "अब रास्ते पर आये हो बच्चू! मगर मारना और मगर फँसाना एक ही बात नहीं।"

"बहुत खूब, तू बड़ा बहादुर है। जरा तेरी नाव तो देखूँ। घाट पर तो आ ही धमके हम लोग।" नूरू बोली।

साबू को इसका जवाब न देना पड़ा। उन पर नजर पड़ते ही लड़कों का एक दल शोर मचा उठा। कोई छः होंगे सब मिलाकर—सात से दस साल तक की उम्र। इस बीच एकबार तो नहा चुके थे वे। कपड़े गीले। कोई-कोई नाव पर से पानी में कूद रहा था। गोता लगाकर हाथ में माटी लिये ऊपर आता और दूसरे पर फेंक कर मारता। पानी-कादो में नहा कर अजीब शक्ल बना रखी थी।

सब ने शोर मचाया—"साबू, तू भी आजा।" लड़कों ने मालिक को ताक कर कादो फेंका। इत्तफाक से वह उसे न लग कर लगा साबू को। साबू तो तैयार ही था, कूद पड़ा।

डुबकी मार कर वह लड़का लापता हो गया। साबू ने उसका पीछा

किया। गोता मार कर नाव के उस पार जा निकला। वह लड़का झट-पट नाव पर चढ़ गया। साबू ने पानी में से गर्दन निकाली। इधर-उधर ताका। कहीं उसे देख न पाया। सब खिलखिला उठे—'साबू हार गया, हार गया।'

साबू ने कुछ ऐसा भाव दिखाया, जैसे वह आप-ही-आप खेल रहा हो। कमर भर पानी में खड़े होकर ताली पीट-पीट कर कहने लगा—

'घोग्घो रानी
इतना पानी'

सभी ने उसका हाथ पकड़ कर गाना शुरू किया—

'घोग्घो रानी
इतना पानी'

किसी लड़के ने डूबकर साबू का पाँव पकड़ लिया। साबू चीख उठा—

'मगर नहीं है आओ
डुबकी लगा नहाओ'

खेल जम गया। साबू को मालिक की सुध ही नहीं रही। किनारे खड़े-खड़े मालिक को भी पानी में कूद पड़ने का लोभ हो रहा था, मगर कुलसुम से वह बेहद डरता था। पास ही नूरू खड़ी थी। मालिक ने पूछा, "तुम नहीं उतरोगी?"

गम्भीर होकर नूरू बोली, "नहीं।"

मालिक ने पूछा, "क्यों?"

"मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। माँ ने मना कर दिया है कि उनके बना नदी में न उतरूँ।"

अचानक साबू की नजर किनारे खड़े मालिक पर पड़ी। चीख उठा, "अबे तू क्या बूढ़ा हो गया कि पानी से डरता है? जल्दी उतर आ, जल्दी। मगर का डर लगता है? तूने तो मगर मारा है, डर क्या?"

सारी जमात हँस पड़ी—

'मगर नहीं है आओ
डुबकी लगा नहाओ'

मालिक को तैश आ गया—"मेरा मजाक बनाया जा रहा है ?"

वह कमर कसने लगा। नूरू बोली, "नहीं-नहीं, तुम हरगिज़ नहीं जा सकते।"

मालिक बोला, "तू मत रोक। मेरी खिल्ली ! अभी बताता हूँ, कौन कितना तैर सकता है।" और मालिक कूद पड़ा।

साबू उसके पास आ गया। बोला, "अच्छा चल, देखूँ तू कितनी दूर जा सकता है ?"

"कितनी दूर जा सकता हूँ ? जरा तेरी जुर्रत तो देख लूँ।"

तैरने की होड़ हो गई। किनारे के लड़के चीख उठे—"और आगे मत जाओ, बीच में धारा तेज है, नहीं सँभल पाओगे।"

मगर कौन किसकी सुनता है ? दोनों बढ़ते ही गये। सौ-एक हाथ जाकर साबू रुक गया। बोला, "बहुत हुआ, अब लौट चलो।"

मालिक तब भी बढ़ता ही गया। साबू ने कहा, "रुक जा मालिक, और बढ़ा तो लौटना मुश्किल होगा।"

मालिक ने फिर भी अनसुनी की, चलता चला गया। साबू को डर भी हुआ, गुस्सा भी आया ! चिल्ला कर बोला, "बहादुरी दिखाने चला है, गधा कहीं का ! मरना चाहता है तो मर, मैं चला।" और वह लौट पड़ा।

मालिक दो-चार हाथ और बढ़कर लौटने लगा। बोला, "देख लिया, किसकी छाती में कितना बड़ा कलेजा है।"

दोनों किनारे आये। साबू ने गर्दन हिलाकर कहा, "मान गया, जीवट का आदमी है तू।"

गर्व से मालिक की छाती फूल उठी। वह कुछ कम है, शेर अली —शेर का बच्चा शेर !

नूरू ने पास आकर कहा, "तुम इतनी दूर क्यों चले गये ? मारे

डर के मैं तो काँप उठी।"

"क्यों ? डर किस बात का ?"

"कहीं मगर पकड़ लेता ?"

"तो क्या था, अच्छा ही होता। अब्बा छोड़ गये, दादी चल बसीं, मैं ही जिन्दा रह कर क्या करूँ ?"

नूरू ने बिगड़ कर कहा, "फिर कभी ऐसी बात कहोगे तो कुट्टी। मरने की बात हरगिज नहीं कह सकते।"

उसका चेहरा तमातमा गया, आँखें डबडबा आईं।

——तीन

बशीर बाजार से आया। उसके चेहरे पर गहरे बादल की गम्भीरता। मालिक दौड़ा-दौड़ा उसके पास गया। 'मेरे लिए क्या लाये हो, मेरे लिए ?' पर उसका चेहरा जो देखा, तो चुप हो गया।

बशीर ने पूछा, "क्या है रे मालिक ?"

"कुछ नहीं ! यों ही।" वह चला गया। उसका सारा उत्साह जाता रहा था।

उसकी आवाज सुनकर कुलसुम बाहर निकल आई। मालिक तो तब तक नौ-दो ग्यारह हो गया था। चिल्लाकर बोली, "कहाँ भाग रहा है ? भला चाहता है तो लौट आ, मैं कहती हूँ।"

लाचार मालिक लौट आया। बशीर से सटकर खड़ा हो गया और हाथ खुजलाने लगा।

कुलसुम बोली, "चाचा के पास तो भीगी बिल्ली बन गये। जैसे कुछ जानते ही नहीं !" वह बशीर से बोली, "मैं कहे देती हूँ चाचा, अगर यह इतनी शरारत करेगा तो मैं इसकी निगरानी से बाज आई।"

बशीर ने हँसकर पूछा, "फिर क्या किया इसने ?"

कुलसुम बोली, "उसी से पूछ देखो, मैं नहीं बताती कुछ।"

मालिक जैसे बुत बन गया हो। कुलसुम ने यह देखा। बोली, "क्यों, बोलती बन्द कैसे हो गई ?"

बशीर ने एक बार मालिक, फिर कुलसुम की तरफ ताका। सर सहलाते हुए कुलसुम से बोला, "तुम भी तो मालिक ही बनती जा रही हो। यह नहीं बता रहा है तो तुम तो बताओ, इसने क्या किया है!"

कुलसुम जरा रुक कर बोली, "क्या खूब तुमने कहा चाचा, मैं मालिक-जैसी हुई जा रही हूँ! मैं झूठी तोहमत लगाती हूँ, बेकार शिकायत करती हूँ। खैर, वह जो जी में आये करे, मैं होंठ सी लेती हूँ।"

बशीर खुल कर हँस पड़ा—"अरी पगली, जनम-भर नाबालिग ही रह जायगी ? अकल भी कभी आयेगी कि नहीं ? दुधमुँहे बच्चे से लड़ती है ?"

कुलसुम और बिगड़ उठी। जलती आँखों से बशीर को ताक कर बोली, "मैं केवल झगड़ती रहती हूँ न! मेरे ही कसूर से मालिक दिन-दिन बिगड़ता जा रहा है!"

वह पैर पटकती हुई रसोई में चली गई।

वहाँ से भी उसकी आवाज आती रही। अपने-आप ही बकती चली जा रही थी।

मालिक को गोद में खींचकर बशीर ने पूछा, "बता तो बेटे, क्या किया है ? कुलसुम तो बेतरह नाराज है।"

सिर झुकाये मालिक नाखून खुरचता रहा, बोला नहीं।

"बता दो। डर किस बात का। मैं निगल तो नहीं जाऊँगा!"

रुक-रुक कर मालिक बोला, "सुबह मैं उसके साथ घाट पर गया था..."

"फिर क्या हुआ ?"

"मैंने फेंककर उसे मारा था।"

"क्या फेंक कर, ढेला ?"

बहुत ही धीमे से मालिक ने कहा, "ढेला नहीं, बेर।"

बशीर को हँसी आ रही थी; मगर वह गम्भीर हो रहा।

"हाँ, तुमने बेर से कुलसुम को मारा ? फिर क्या हुआ !"

"साबू के साथ नदी किनारे गया था।" मालिक लगभग रो पड़ा। बोला, "गया था तो क्या हुआ। अगर इसके लिए सजा देना हो, तो दो।"

सिर हिलाकर बशीर बोला, "ऊँहु ! अभी भी सारी बातें तुमने नहीं बताई हैं। नदी किनारे जाकर तो तुमने बड़ा कमाल किया। और क्या किया है, सो बताओ। केवल तुम्हारी ही बातें तो नहीं सुनते रहना है ? घर आये मेरे शेर, गीले कपड़े, चेहरे पर कादो !"

लपककर कुलसुम आई। कहा, "बताऊँ और क्या करतूत की है हजरत ने ? सारी दोपहर यह जाने कहाँ-कहाँ भटकते रहे। घर आये तो कादो में लिपटे। मैंने सिर्फ इतना ही पूछा, 'यह कादो क्यों ?' नवाब की तरह मिजाज से बोले, 'मेरी मरजी।' अब तुम जानो। जाने किसकी तो नाव लेकर ये नदी की सैर करते रहे। नदी में तैरते हैं ! कहीं मगर पकड़ ले ? और मगर क्या, बुखार ही तो इसको मजे में निगल जा सकता है।"

इतनी बातें कुलसुम एक साँस में कह गई। दम लेने को जरा रुकी, फिर कहना शुरू किया, "और तुमने भी चाचा, ऐसे शरीर लड़के की हिफाजत का भार मुझे सौंपा है। मैं तो क्या, मेरी दादी भी उठ आये तो इसे नहीं सँभाल सकती।"

बशीर जरा गम्भीर हो गया। बोला, "देखो मालिक, तुम्हारी उम्र दस साल की हो आई। निरे नन्हें नहीं रहे तुम। तुम्हें अब खुद समझना चाहिए। तुम हो नज्जू मियाँ के लड़के। कितना नाम था उनका ! तुम्हें उनकी इज्जत रखनी है, उनके खानदान का नाम रोशन रखना है। आज अगर वे जिन्दा होते तो तुम्हारी हरकतों से उन्हें कितनी तकलीफ होती ! खैर। अब कभी ऐसी शरारत न करना। आइन्दा

तुम्हारी शिकायत सुनने को न मिले।"

रात काफी जा चुकी। मालिक खा-पीकर सो गया था। चटाई डाल कर कुलसुम ने बशीर का खाना परसा। पीतल की थाली में चावल, आलू और बैगन का भुरता, एक कटोरी में दाल, एक में मछली, एक में दूध। बशीर ने खुश होकर कहा, "रसोई में कमाल हासिल है तुम्हें।"

घड़े से गिलास में पानी ढालती हुई कुलसुम ने बशीर की ओर देखा। बशीर बोला, "बैठ जाओ, तुमसे कुछ कहना है।"

कुलसुम को जैसे पसीना आ गया। बशीर को अकेले में उससे कहने की बात क्या हो सकती है? कहा, "तो गुलाबी को बुला लूँ।"

बशीर हँसने लगा—"खैर, बुला लो उसे। मैं तुम्हारे नाना की उमर का हूँ, मुझसे इतनी शर्म? तुमको मैंने निरी नन्हीं, दूध-पीती बच्ची देखा है, आज मुझसे इस कदर शर्म।"

"मैं शरमा गई, यह किसने कहा? मुझे लगा कि जब मालिक के बारे में बात है तो गुलाबी का भी सुनना जरूरी है। फिर राय-मशविरे में दो के बजाय तीन के दिमाग का लाभ लेना अच्छा है।"

सिर हिलाकर बशीर बोला, "ठीक ही कह रही तो तुम। बूढ़ा हो गया हूँ, सब तरफ खयाल नहीं रह पाता। गुलाबी ठंढे दिमाग की है। बतंगड़ तो बहुत बनाती है, पर समझती ठीक है।"

कुलसुम गुलाबी को बुला लाई। गुलाबी पैर फैला कर बैठी, कुलसुम उसके बगल में खड़ी रही। जरा चुप रहकर गुलाबी ने कहा, "कहना है सो कहो चाचा, क्या राय-सलाह करनी है?"

बशीर बोला, "घोड़े पर सवार क्यों आई हो। तुम हुई उमरवाली! जरा धीरे-सुस्ते काम करना सीखो।"

उमर की बात पर गुलाबी आपे से बाहर हो जाती थी। बशीर को उसकी यह लत मालूम तो थी, पर भूल-भूल जाता। गुलाबी आग-बबूला हो उठी। कुछ कहा ही चाहती थी कि बशीर ने रोक कर कहा,

"सुनो सुनो, मुखिया के इंतकाल कर जाने के बाद किस मुसीबत से माल-गुजारी चुकाता हूँ, यह खुदा ही जानता है। अम्मा के जेवर तो कब के जा चुके। तुम्हारे जो चाँदी के हँसुली-बाजूबन्द थे, वे भी निकल गये। रैयतों से कुछ वसूलने की कोशिशों से बाज नहीं आता। बरसात की भरी पद्मा को बार-बार पार किया है, द्वार-द्वार पर सिर मारा किया है; मगर फूटी पाई हाथ में नहीं आई। आँधी-पानी की परवाह न की, माघ के हड्डी-तोड़ जाड़े में तमाम चक्कर काटता रहा हूँ, लेकिन सब बेकार। कुछ-न-कुछ बहाने बना कर लोग यों ही लौटाते रहे हैं। मारे तकाजों के जब नाक में दम कर दिया, तो अबकी हाट का वायदा किया था। इच्छा न थी, फिर भी आज हाट गया। मगर जानती हो आज क्या जवाब मिला? कहा, 'अबकी फसल अच्छी नहीं हुई। मालगुजारी दे सकना सम्भव नहीं।' साफ लफ्जों में यह भी सुना दिया—'चाहें तो नालिश करें।"

कुलसुम ने पूछा, "तो तुमने क्या कहा चाचा?"

"मैं कहता भी क्या? जो कहना था, सो तो बार-बार, हजार बार कहा है। नतीजा कुछ भी नहीं।"

कुलसुम ने सुझाव दिया—"फिर तो तुम्हें नायब के पास जाना चाहिए।" गुलाबी ने भी कुलसुम की ताईद की।

बशीर हँस पड़ा। बोला, "इस गम में भी मुझे तुम्हारी बात पर हँसी आती है। अरे, मैं क्या वहाँ गया नहीं हूँ? लेकिन उसकी बात सुन कर तो आवाक् रह गया।" बशीर ने नायब की नकल करते हुए कहा, 'अपने झगड़ों में मुझे क्यों घसीटते हो? अपनी तुम आप निबेड़ो, मुझे तो बस मालगुजारी चाहिए।"

"मैंने कहा—'हुजूर, जायदाद है एक नाबालिग की। रैयत अंगूठा दिखा देते हैं।' नायब ने कहा—'गरीब को ऐसा रोग पालने का शौक ही क्यों होता है? जायदाद रखने के लिए जोर चाहिए। नाबालिग में जब जोर है ही नहीं, तो जायदाद उसे सौंप दो, जिसमें उसे रखने का

माद्दा हो। अगर तुम्हारी ख्वाहिश हो तो जायदाद तुम्हारे नाम कर दूँ। हाँ, नजराना देना पड़ेगा! मेरी दक्षिणा भी देनी पड़ेगी।"

गुलाबी बोल पड़ी, "तो चाचा तुम्हीं ले रहे हो मालिक की जायदाद! क्यों?"

कुलसुम तुनक कर बोली, "हर वक्त यह टट्टा ठीक नहीं लगता। अगर बशीर चाचा मालिक को बेदखल ही करना चाहते, तो हमारे बूते से होता भी क्या?"

गुलाबी ने कुलसुम की बात पर ध्यान ही नहीं दिया। कहती चली गई, "मेरी मानो तो कहूँ। मालिक ठहरा नाबालिग और तुम हो गये बूढ़े। लाख कोशिश करो, रैयत तुम्हें दगा देंगे। जमीन रख सकना बस की बात नहीं। सो सारी जायदाद बेंच दो। रुपया रहेगा, तो मालिक कभी जमीन खरीद लेगा।"

नाक सिकोड़ कर बशीर ने कहा, "छिः-छिः, अकल है तुम्हारी! ठीक ही कहते हैं लोग कि औरतों की अकल से नहीं चलना चाहिए। तुमने कहा और मैंने बेंच दी जयदाद। तुम क्या खेतिहर की बेटी नहीं हो? भला कोई खेतिहर भी जोत का मोह छोड़ सकता है?"

"मैं खुद खेतिहर की लड़की हूँ, जभी ऐसा कहती हूँ। औरतें तो बुद्धिहीन होती हैं और ये मर्द? अकल के पीछे लाठी लिए चलते हैं। उमर के साथ ये मर्द सठिया जाते हैं।"

कुलसुम ने छेड़ा, "मान गई कि तुम्हारी अकल में हीरे की धार का पैनापन है और बशीर चाचा अब सठिया गये हैं। तुम्हारा सारा कहा मान गई मैं, मगर जमीन बेचना क्या इतना ही आसान है? बेचना ही चाहो तो लेता कौन है, और बिक भी जाय तो सारी कठिनाई हल हो जायगी?"

गुलाबी बोली, "तुम तो और सुभान अल्लाह निकली। जमीन ही बिक जायगी तो कठिनाई क्या फिर?"

कुलसुम बोली, "इतनी सहज बात भी तुम्हारी खोपड़ी में नहीं

आती ? जमीन के रुपये कहाँ रखोगी ? उसकी गन्ध भी लग जाय तो लूट नहीं ले जायँगे लोग ? अपनी बातों की चोट से रोक लोगी ?"

बशीर ने गर्दन हिलाकर कहा, "बिलकुल ठीक कह रही हो कुलसुम। उमर कम हो चाहे, अकल पक्की है।"

गुलाबी मगर इतनी आसानी से मान जाने वाली न थी। अगर उसे चिकोटी काटने की गुंजाइश मिल जाय तो पूछना क्या ! बोली, "गनीमत कहो कि कुलसुम ने अकल का परिचय दिया। कुलसुम जब तुम्हें इतनी ही जँचती है चाचा, तो उससे निकाह क्यों नहीं कर लेते ! क्यों री कुलसुम, करेगी बूढ़े से निकाह ?"

कुलसुम शर्म के मारे बुत हो गई, मगर बशीर का सर्वांग जल उठा। फटकार कर बोला, "तेरी जबान पर लगाम नहीं है गुलाबी। सिर चढ़ गई है तू ? कहाँ की बात, कहाँ ले गई।"

गुलाबी इतनी आसानी से मानने वाली नहीं थी। बोली, "चोर की दाढ़ी में तिनका। जी में निकाह का इरादा तुम्हारे है, जभी तो फुफकार उठे ऐसे।"

बशीर बोला, "औरतों के मुँह मैं नहीं लगता। मगर आज ऐसी बेसिर-पैर की बातें क्यों ?"

गुलाबी बोली, "यों ही। खैर। बात मालगुजारी की चल रही थी। जमीन तुम बेंचना नहीं चाहते, कुलसुम भी नहीं चाहती, क्योंकि घर में रुपया रखना खतरनाक है। तो दूसरा उपाय ?"

"कोई उपाय नजर नहीं आता, इसी से तो राय-मशविरा करना चाहता हूँ।"

कुलसुम और गुलाबी ने जरा देर एक दूसरे को देखा। दोनों चुप बनी रहीं। अन्त में मुँह बना कर गुलाबी बोली, "खोल अपनी अकल का पिटारा, कोई सूझ निकल आये कहीं से ?"

कुलसुम ने कहा, "उमर के साथ बुद्धि बढ़ती है, यही तो कहते हैं लोग। मगर तुम्हारा तो सब उलटा ही देख रही हूँ।"

बशीर ने कहा, "मैंने एक तरकीब सोची तो है, पर आफत उसमे भी है। फिर भी उसे आजमाने की इच्छा है।"

गुलाबी ने हँसकर कहा, "तुम्हारी खोपड़ी में कोई-न कोई मनसूबा हर वक्त रहता ही है। कह डालो।"

बशीर बोला, "ऐसा समय आ पड़ा है कि एक तो जमीन की ज्यादा कीमत मिलने की ही उम्मीद नहीं है, फिर रुपयों का किया भी क्या जाय।"

गुलाबी बोल उठी, "ठीक ही तो है, रुपयों का करेंगे क्या।"

फिक्र में पड़ा-सा बशीर बोला, "इसीलिए इरादा है कि पंचायत बुला लूँ।"

गुलाबी बोली, "मुखिया तो अभी असगर मियाँ है?"

"हाँ वही है, मगर अकेले उसी की राय तो आखिरी नहीं। और-और भी जाने-माने लोग हैं, राय-सलाह देंगे।"

गुलाबी बोली, "बाकी लोग तो मूरत हैं, मुखिये की बात पर उठते-बैठते हैं।"

बशीर को हामी भरनी पड़ी कि बात सही है।

गुलाबी चबा-चबाकर बात कहने लगी, "खैर, मनसूबा तुमने खूब गाँठा है। नज्जू मियाँ गुजर गया, मालिक है यतीम, उसकी देख-रेख करने वाला ही कौन है? आखिर तुम बेचारे नाबालिग की जायदाद उसके बाप के जानी दुश्मन के हाथों सौंप देना चाहते हो?"

कुलसुम ने कहा तो कुछ नहीं, पर उसकी आँखों में भय और जिज्ञासा के भाव झलक पड़े। वह बशीर की तरफ ताकती रही, उसकी बातों पर मानों उसे यकीन नहीं आ रहा हो। भला यह भी हो सकता है कि बशीर मालिक की जायदाद असगर को दे देगा? गुलाबी और कुलसुम दोनों सोचने लगीं, बशीर का दिमाग तो नहीं खराब हो गया?

बशीर का जी दुखी हो गया। मालिक के लिए उसने क्या नहीं किया, मगर आज उसी पर शक किया जा रहा है! उसे खेद हुआ, क्षोभ

भी। बोला, "अरी बेवकूफ़ो, अगर मालिक को दगा देने की ही नीयत अपनी होती, तो तुम औरतों से रोकते भी बनता ? मुझे भरोसा था कुलसुम, कि तेरे कुछ अकल है। अब समझा, अकल के मामले में तुम दोनों समान हो। मैं तुम लोगों की राय लेने आया था, यही मेरी भूल हुई। जो करना है सो मुझे ही करना होगा। लोग ग़लत नहीं कहते कि औरतों का जी बड़ा छोटा होता है।"

बशीर उठ खड़ा हुआ। गुलाबी कह उठी, "अरे भई, कसूर तो किया है हम लोगों ने, बेचारे खाने ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा कि परोसी हुई थाली छोड़कर जा रहे हो ?"

कुलसुम ने भी खा लेने का निहोरा किया। बोली, "भला तुम पर शुबहा कैसा ? तुम्हीं पर तो मालिक की सारी जिम्मेवारी है। हम तो तुम्हारा कहा करती हैं। मन में जो आता है, छिपाती नहीं, कह देती हूँ। तो क्या सच-सच ही सब कुछ असगर मियाँ को सौंप देने को तै किया है ? वह अगर लेकर दबा बैठे ?"

बशीर का गुस्सा गया नहीं था। झुँझला कर बोला, "अगर सब कुछ तुम्हीं लोग बेहतर समझती हो, तो करती क्यों नहीं ? इस बुढ़ापे में यह भूत की बेगारी मेरे मत्थे क्यों ?"

कुलसुम बोली, "तुम ठहरे बुजुर्ग। अगर हमसे कुसूर भी हो जाय, तो यों बिगड़ना तुम्हें नहीं शोभता। हम न हों तो तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ता, मगर बगैर तुम्हारे हमारा तो चल नहीं सकता।" वह गुलाबी की तरफ मुड़ कर बोली, "ले, चाचा को गुस्सा तो कर दिया, अब तू ही सँभाल। और चाचा, इन बड़ी बातों का हम खाक-पत्थर क्या समझती हैं। हमसे पूछते ही क्यों हो। खुद जो अच्छा समझो, करो।"

गुलाबी बोल पड़ी, "पूछोगे तो अपनी अकल में जो आयेगा, कहूँगी। उस पर अगर तुम्हें गुस्सा आता है, तो पूछना ही बेकार है।"

बशीर कुछ शरमा गया। औरतों से झगड़ा भी क्या ! बोला, "तो फिर किया क्या जाय, यह बताओ। मालिक की जायदाद बचाने के

लिए असगर की मदद के सिवाय और उपाय क्या है ?"

उत्कण्ठा से कुलसुम ने पूछा, "उसका तो हम क्या बतायें, पर एक बात पर गौर कर लो चाचा, असगर अगर जायदाद वापस न देना चाहे, तो ?"

"यह कुछ गैर-मुमकिन बात तो नहीं है, मगर मेरा खयाल है, असगर ऐसी दगाबाजी नहीं करेगा। आदमी वह नेक है और अपनी इज्जत का उसे खयाल रहता है। ऐसा शायद न करे। और अब हो चाहे जो भी, दूसरा उपाय भी तो नहीं। एक बात और, पता नहीं तुम्हें मालूम भी है या नहीं। असगर के कोई लड़का नहीं, एक ही लड़की है नूरू। नूरू और मालिक में बड़ा मेल है, मानों एक डाल के दो फूल हों! मुझे पूरा यकीन है कि दोनों की शादी जरूर होगी। फिर क्या असगर अपने दामाद को दगा देगा ?"

अपनी सूझ पर बशीर आप ही फूला नहीं समा रहा था। गुलाबी टपक पड़ी—"यह शादी-ब्याह का तो खूब सोच लिया, मगर यह इतनी जल्दी भूल बैठे कि असगर और नज्जू एक दूसरे के जानी दुश्मन थे। यह शादी भी क्या होने की है ?"

बशीर बिगड़ा नहीं इस बार। हँस कर बोला, "तुम्हें पता भी कहाँ है सब बातों का। कभी ये दोनों एक जान दो कालिब थे। घड़ी भर को जुदा नहीं होते थे।"

——चार

दो दिन बाद की बात। बेला झुक आई थी, लेकिन धूप की तेजी नहीं गई थी। बशीर बरामदे में बैठा हुक्का पी रहा था और धुएँ की कुंडली को देखता हुआ कितनी ही बातें सोच रहा था। उस दिन कुलसुम वगैरह से तो तन कर उसने असगर को जायदाद सौंप देने का

संकल्प सुना दिया, पर अभी तक वह असगर के पास गया नहीं था। मन-ही-मन इस पर गौर करता रहा, पर किसी नतीजे पर नहीं पहुँच पाया। बार-बार उसे यह लगता रहा कि नूरू का जन्म ही मालिक के लिए हुआ है, दोनों की शादी होकर ही रहेगी। और कहीं शादी हुई, तो असगर दामाद को अँगूठा नहीं दिखा सकेगा। फिर यह खयाल आया, असगर की उमर अभी इतनी ज्यादा तो नहीं है कि दूसरे बच्चे की उम्मीद ही न हो। हो जाय तो नूरू की यही कदर थोड़े रहेगी? तुरत ही सोचता, क्यों नहीं रहेगी कदर? बाप लड़की को ज्यादा चाहता है, फिर लड़की पहली हो तो कहना क्या? बाल-बच्चे हजार हों चाहें, नूरू बाप की आँखों की पुतली बनी ही रहेगी।

बशीर की छाती पर भार-सा पड़ गया। उसे अपनी लड़की की याद आई। आज कहाँ है वह? स्त्री, बच्ची सब जाती रही, आज वह निरा अकेला है। उसकी भी वही हालत है, जो मालिक की है। अपना भी कौन है? मालिक तो अभी बच्चा है, ब्याह-शादी करेगा, बाल-बच्चे होंगे, जीवन उसका पूर्ण हो उठेगा। मगर अपना? अपना जैसा आगे, वैसा पीछे। तमाम अँधेरा। उसने हुक्के में दम लगाया, आग जाने कब ठंढी हो गई थी! चिलम चढ़ाना ही पड़ेगा। इधर उठने को जी नहीं चाह रहा था। वह ठंढे चिलमवाले हुक्के का ही कश लगाता गया।

मन संदेह के झूले झूलने लगा। मैं भी कैसा बेवकूफ हूँ! अपने जानी दुश्मन के बेटे से असगर अपनी बेटी ब्याहेगा भी क्यों? नज्जू मियाँ जिन्दा होता तो और ही बात होती। तब दोनों का गठ बन्धन हो भी सकता था। दोनों के आपसी झगड़े भी इसी सम्बन्ध से निपट जाते। ऐसे ब्याह हजारों होते हैं। कितने लोग ऐसे ब्याह रचकर नये सिरे से दोस्ती का नाता जोड़ते हैं।

लेकिन नज्जू तो रहा नहीं, अब ऐसा सोचना ही बेकार है। मालिक की देखभाल कौन करेगा? मैं और कै दिन को हूँ, मेरे बाद लूट खायेंगे लोग। जब तक वह बड़ा होगा, जायदाद का नाम न रहेगा।

उसे फटे हाल से तब असगर अपनी बेटी की शादी करेगा भला ?

दोनों की शादी होगी, असगर की जायदाद का भी हकदार मालिक ही होगा—ऐसी बेसिर-पैर की बातें सोचने से लाभ क्या है ? ऐसी बातों के बजाय जितना कुछ बचाया जा सके, उसी का उपाय करना अच्छा है। इसीलिए असगर के पास अभी तक वह जा नहीं सका है, आज-कल करता रहा है। लेकिन दिन के साथ हालत भी बदतर होती आ रही थी। रैयतों ने खोलकर कह दिया था कि मालगुजारी नहीं देंगे। दीवान से मिल कर वे अपने नाम जमीन भी लिखा लें शायद। इसलिए जल्दी ही कुछ-न-कुछ करना जरूरी है।

चिलम की बात बशीर बड़ी देर से सोच रहा था। जब तक मन आगा-पीछा कर रहा था, तब तक वह इच्छा वैसी प्रबल नहीं हो पाई। अब जो उसने तै कर लिया सो चाह ने जोर पकड़ा। उठा, चिलम चढ़ाई, आग पर फूँक मार कर जमाई और हुक्के में जोरों का दम लगाया। नाक-मुँह से धुएँ का बादल उड़ा कर उसने सन्तोष की साँस ली। दिल और दिमाग हलका हो आया।

हाँफती हुई कुलसुम आई। पूछा, "मालिक को देखा है, मालिक को ?"

बशीर पहले तो सुन ही न पाया। तम्बाकू खूब जमा सो जी खुश हो गया था। मन-ही-मन कितना क्या सोच रहा था। कुलसुम की तीखी आवाज से उसका ध्यान जैसे टूट गया। घबरा कर पूछा, "मालिक को क्या हुआ ?"

डरती हुई कुलसुम बोली, "उसका कहीं पता नहीं है ?"

"कहती क्या हो तुम ? पता नहीं है। कब से ?"

"दोपहर-भर खटती रही। जरा लेटी थी। वह भी मेरे साथ ही सोया था। शरारत कर रहा था खूब। जितना ही मना करती, उतना ही और ज्यादा। आखिर आजिज आ गई। एक चपत जड़ दी मैंने। चपत खाकर वह गुमसुम-सा हो रहा। मैं जाने कब सो गई। जागकर देखती हूँ, वह गायब है।"

बशीर ठठा कर हँस पड़ा, "आखिर औरतों की बुद्धि। तुम्हारी खोपड़ी में नाम को भी अकल हो!"

कुलसुम बिगड़ उठी—"इसमे हँसी की कौन-सी बात हुई? कह रही हूँ कि उसका पता नहीं है और तुम हँस कर बेदम हुए जा रहे हो।"

बशीर फिर भी हँसता ही रहा। बोला, "आखिर वह मर्द बच्चा है, उमर हो रही है। हमेशा तेरे दामन से ही कैसे लगा रहे? लड़का है, जरा घूमे-घामेगा, मारपीट, झगड़ा-फसाद करेगा। ऐसे ही वह बड़ा होगा।"

कुलसुम को बड़ा गुस्सा आया। सोचा, सठिया गया यह बूढ़ा! वह लापता है। उसकी खोज तो क्या करेगा, लगा उपदेश झाड़ने।

वह लौट गई। कहती गई, "भर पाई आपके उपदेश से। जरा उसकी खोज-खबर लो।"

सुनकर भी बशीर ने अनसुनी कर दी। वह फिर मजे से तम्बाकू पीने लगा। कुछ झुँझलाया भी। जरा देर बीते दिनो की बातों में उलझा था कि यह दईमारी जाने कहाँ से टपक पड़ी। पुरानी बातों को सोचने का वक्त भी कहाँ मिलता है? मुश्किल से तो आज मौका मिला था, उसका भी छोर खो गया। नः, अब तम्बाकू का मजा जाता रहा। वह उठ खड़ा हुआ। कुछ सोच-समझकर मसजिद की ओर चल पड़ा।

गाँव के घरों-जैसी मसजिद भी मिट्टी की ही बनी थी। इतना ही फर्क था कि दीवारें मिट्टी के बजाय लकड़ी की बनी थीं। महराब पच्छिम की तरफ को थी। उसी पर चढ़कर इमाम साहब जुम्मा की नमाज़ के बाद खोतबा पढ़ते।

नमाज खत्म हो चुकी थी; मगर कोई-कोई नमाजी अभी भी बैठे थे। मगरिब की नमाज पढ़कर घर लौटने का इरादा था शायद। खेती के दिन तो थे नहीं, सब के पास समय था।

अन्दर जाते ही बशीर ने सुना, किसी बात पर तर्क हो रहा था, जोरों का तर्क। उसे देखकर जरा देर को तर्क रुक गया। एक ने कहा, "अरे

बशीर ! जब से नज्जू मियाँ गुजरा, तुम भी गायब हो।"

बशीर एक तो बोलता ही कम था, फिर अगर भीड़-भाड़ हो, तो बोल फूटता ही न था। बोला, "कुछ पूछो मत भई, जब से मुखिया गये, मरने की भी फुर्सत नहीं। यतीम बच्चे की जिम्मेवारी माथे पर आई। अल्लाह ही जानते हैं, किस भार से लदा हूँ।"

अचानक उसे याद आया, वह मालिक की तलाश में निकला है। असगर मियाँ ने उसके चेहरे के भाव को पढ़ लिया। पूछा, "मालिक बड़ा नटखट निकला है, क्यों ?"

"नहीं-नहीं, मालिक-जैसा लड़का ज्यादा नहीं मिल सकता। बड़ा ही सुशील, समझदार।"

असगर मियाँ ने एक लम्बी साँस ली,—"खुदा मेहरबान। मालिक गाँव का एक जाना-माना आदमी बने।"

असगर जरा देर चुप रह गया। फिर बोला, "तुम्हें पता नहीं है, नज्जू मियाँ कभी मेरा जिगरी दोस्त था।"

बशीर एक क्षण चुप रहा, जाने क्या कहते क्या कह बैठे। अन्त में उसने कहा, "तुम्हारी दोस्ती का किस्सा हमने सुना है। मगर अपनी ही तकदीर खराब है, नहीं तो तुम दोनों की दुश्मनी ही क्यों होती ? अगर तुम दोनों में मेल होता तो मजाल थी किसी गाँव की कि हमारे सामने खड़ा भी होता ? मगर सब अल्लाह की मरजी !"

उसने तिरछी निगाहों से असगर को ताका। असगर का चेहरा उतर गया था।

असगर ने गम्भीर होकर कहा, "तुमने बजा फरमाया बशीर, सब अल्लाह की मरजी। उसके हुक्म के खिलाफ कुछ नहीं होता।"

बात बदल देने के खयाल से असगर ने गुल्लू मियाँ से कहा, "हाँ, तो मतलब यह कि अजीज मियाँ मुझे पंच बदने को राजी नहीं ?"

किन्तु-परन्तु करके, गुल्लू बोला, "नहीं-नहीं, हकीकत में बात ऐसी नहीं है। किसी के भुलावे में पड़कर उसने ऐसा किया है। किसी ने उसे

यह समझा दिया है कि आप अजीज को पसन्द नहीं करते, इसलिए फैसला शायद उसके अनुकूल न हो।"

असगर की आँखें जल उठीं, मगर उसने शान्त भाव से कहा, "उस पर मुझे गुस्सा जरूर है, पर चाहे उससे दोस्ती हो या दुश्मनी, इन्साफ में उससे कुछ आता-जाता नहीं। झगड़ा है, तो उसके और मेरे बीच। लेकिन पंच बन जाने पर अपनी पसन्द-नापसन्द की बात ही नहीं आती। खैर, मुझे वही करना होगा।"

गुल्लू मियाँ कुछ कहने ही जा रहा था कि मुखिया असगर बाधा देते हुए बोल उठा, "मैं जानता हूँ, तुम क्या कहना चाहते हो! जब मुझसे उसकी पटती नहीं है तो उचित फैसले की उसे मुझसे उम्मीद कैसे हो सकती है, यही तो? लेकिन मैं कहूँ, इसीलिए तो उसे और भी परवाह न करनी चाहिए। उसे खातिर जमा रखनी चाहिए कि मुझसे उसे वाजिब ही फैसला मिलेगा।"

गुल्लू मियाँ और भी घबड़ा गया, "आखिर आप कहते क्या हैं मुखिया! आपसे उसकी बनती नहीं, इसीलिए वह न्याय पा सकेगा, यह कैसे?"

"बेशक, इसलिए उसे मुझ पर भरोसा करना चाहिए! हम दोनों के झगड़े की बात हर कोई जानता है। इस मामले में मेरे पंच होने से हरएक का ध्यान इस पर रहेगा कि मैं करता क्या हूँ। सो मुझे भी पंच के आसन का खामखा खयाल रखना पड़ेगा। मैं इस कोशिश में कुछ उठा न रखूँगा कि फैसला ठीक-ठीक हो!"

असगर ने ये बातें इतनी दृढ़ता से और साफ-साफ कहीं कि इनका आशय कोई समझे हों चाहे न समझे हों, पर सब के हृदय पर उसकी सचाई की छाप जरूर पड़ी। असगर मियाँ का यश है। सभी जानते हैं कि वह एक सच्चा आदमी है, सो उसकी बात टालते किसी से न बना।

गुल्लू मियाँ बोला, "समझ रहा हूँ मुखिया...."

मगर उसकी आवाज से जाहिर हो रहा था कि उसके मन का

सन्देह पूरी तरह से गया नहीं है।

असगर को यह समझते देर न लगी कि गुल्लू मन में अभी भी आगा-पीछा कर रहा है।

असगर के होंठों के कोने में हँसी की रेखा खिंच आई। सबको सम्बोधित कर उसने कहा, "अगर मुझ पर तुम्हें इतना ही अविश्वास है तो नज्जू मियाँ के गुजर जाने के बाद मुझे मुखिया क्यों बनाया?"

"तुम भी कैसी बातें करते हो मुखिया! तुम्हारे इन्साफ का हमें भरोसा है, तभी तो तुम्हें मुखिया माना है।"

असगर बोला, "अविश्वास न होता, तो ऐसे पचड़े पैदा ही क्यों होते? इन्साफ के मानी ही है, दोस्त-दुश्मन का खयाल न करते हुए दूध को दूध और पानी को पानी कर देना! फैसला क्या इसलिए किसी के पक्ष में होगा कि वह मुखिया का दोस्त है? मेरी सचाई अगर दुश्मन के मन में भी भरोसा न जगा सकी, तो वह सचाई क्या? तुम्हीं बताओ?"

असगर की बातों में दृढ़ता थी। सब एक दूसरे का मुँह देखने लगे। बात बड़ी वाजिब थी। मगर आदमी क्या हर समय वाजिब कर सकता है? अगर असगर कहे मुताबिक ही करे तो ऐसा आदमी चिराग लेकर ढूँढ़े नहीं मिल सकता। नज्जू मियाँ और रहीम बख्श भी मुखिया थे, लेकिन दोस्त-दुश्मन का भेद वे भी भुला सके थे क्या? असगर की तो बात ही जुदा दीखती है। ऐसी बातें इसके पहले किसी मुखिया के मुँह से सुनने को नहीं मिलीं।

असगर उठ खड़ा हुआ। सूरज डूब चुका था, मगरिब की नमाज का वक्त बीत रहा था। साँझ के अँधेरे में चारों ओर की स्तब्धता पर अजान की आवाज गूँज उठी, हवा में उसका गहरा सुर लहरा उठा। जो ठीक वक्त से नहीं आ पाये थे, वे अजान सुनकर मसजिद की ओर चल पड़े। जितना छोटा गाँव था, जमात उतनी छोटी नहीं थी। सब ने मिल कर इबादत शुरू की।

——पाँच

बशीर जब घर लौटा, अँधेरा काफी गहरा हो चुका था। घर-घर बत्तियाँ जल उठी थीं; आकाश में अनगिनत तारों की जगमगाती जोत, झुरमुटों में जुगनू के बूटे। मगर बशीर यह सब कुछ देखने की स्थिति में न था। उसका मन तरह-तरह की चिन्ताओं से जर्जर हो रहा था। वह बार-बार असगर की बात सोच रहा था। आदमी की बात और काम में मेल भी होता है! असगर का दरअसल रूप क्या है? सच ही क्या वह साधु है? या ये सारी बातें केवल बनावटी हैं, लोगों को धोखा देने का मुखड़ा!

असगर के खिलाफ उसे कहने को कुछ भी नहीं था। सब उसे अच्छा आदमी ही समझते हैं, नज़ीर मियाँ से उसकी दुश्मनी जरूर थी, मगर यह कहने की गुंजाइश नहीं कि उसने कभी नीचता भी दिखाई हो, दगा-फरेब किया हो।

ऐसा ही जाने क्या-क्या सोचता जा रहा था कि कुलसुम और गुलाबी की चीख से उसकी चिन्ता का छोर छूट गया। वे बशीर के ही इन्तजार में बैठी थीं। आँगन में पाँव धरते ही दोनों पूछ बैठीं, "मालिक कहाँ रहा? उसे साथ नहीं लाये?"

बशीर चौंक उठा—"मालिक अभी तक लौटकर नहीं आया?" साँझ का अँधेरा घना हो आया, अब तक तो मालिक को लौट आना चाहिए था! गया कहाँ वह?"

कुलसुम की और ज्यादा बेसब्री थी। बेताब-सी होकर बोली, "तुम्हें हो क्या गया है चाचा? हम तो यह समझ रहे थे कि तुम मालिक को ढूँढ़ने गये हो।"

बशीर शर्मिन्दा हुआ। ठीक ही तो उसे इसकी सुध नहीं रही!

बोला, "मुझे क्या मालूम था कि वह अभी भी नहीं लौटा है। फिर तो सब कहीं देख आता।"

कमरे में से उसने लाठी निकाली, पके बाँस की लाठी। तेल पी-पी कर उसकी हर पौरी चमक रही थी। पीतल की बँधी बीच-बीच में तार। जैसी वजनी, वैसी ही मजबूत।

कुलसुम ने पूछा, "कहाँ चल दिये?"

निःश्वास फेंककर बशीर बोला, "जरा उस शैतान को ढूँढ़ देखूँ। आज उसकी खाल उधेड़कर दम लूँगा। देखूँ, वह कितना बड़ा बदमाश है!"

कुलसुम बोली, "रात ज्यादा हो गई। हम घर में अकेली...."

बाधा देकर बशीर बोला, "अभी-अभी तो साँझ हुई है, इतना डर क्या है? दो जनी तो हो। फिर भी डर लगे ही तो पड़ोस में चली जाना।"

कुलसुम और गुलाबी ने एक दूसरे को देखा। ऐसा लगा कि वे अगर पड़ोस में जा पायें तो जान-में-जान आये। बोली, "हम चली जायँ और इतने में मालिक सूने घर में आ पहुँचे, तो?"

गुलाबी ने झिड़क कर कहा, "साफ-साफ बता दे न अपना इरादा। तू तो चाहती है कि अपने पड़ोस में जाय और मैं घर रहूँ। यह न होगा। जायेंगी तो दोनों, रहेंगी तो दोनों।"

सो डर लगने पर भी दोनों घर ही रहीं। बशीर ने धीरे-धीरे कहा, "इन औरतों से पार नहीं पाया जा सकता। मुफ्त में इतना समय बर्बाद कर दिया।"

बशीर लाठी सम्हाल कर निकल पड़ा। सावधान रहना ही ठीक है। गाँव में दुश्मनों की कमी नहीं। खास कर जायदाद के लोभ से बहुतेरे दुश्मन हो जाते हैं। कहीं मुझे कुछ हुआ तो लोग मालिक की जायदाद लूट खायेंगे। गाँव में दुश्मनों का क्या कहना? राह चलते पीछे से लगा दी लाठी। मार कर लाश को पद्मा में बहा दे, तो जानता

कौन है ?

बशीर के रोंगटे खड़े हो गये। असल में उसे अपनी कोई फिक्र नहीं। अपना क्या, मौत के पास जा धमका है। दो दिन बाद जायँ या पहले, उससे क्या होना-जाना। मगर यह मालिक, उसकी जिन्दगी तो अभी शुरू हुई है। उसे किसी दुश्मन ने पकड़ लिया हो तो ?

उसाँस भर कर बशीर ने मन में कहा, 'सब खुदा की मरजी। वह जो चाहेगा, वही करेगा। हम लोग सोच में बेकार ही सिर खपाते हैं।'

पेड़ों-झुरमुटों से ढँकी गैल होकर बशीर अँधेरे में बढ़ चला। तारों-भरा आकाश झलमल कर रहा था। ऊपर देखकर बशीर ने सोचा, अगर ये तारे न होते तो अँधेरे में मनुष्य चलते कैसे ? अल्लाह का रहम है यह, खुदा की कुदरत। मंद बुद्धि वाले इसे समझ नहीं सकते।

अचानक कुत्तों के भौंकने से वह चौंक उठा। अँधेरे में जाने किस पर कुत्तों की एक जमात भौंक रही थी ! बशीर ने लाठी ठोंक कर धमकी दी। उसकी आवाज से किसी ने पूछा, "कौन है ?"

"मैं हूँ भई, बशीर। नज्जू मियाँ के यहाँ से आ रहा हूँ।"

"बशीर ? इतनी रात गये कहाँ चले ? कुशल तो है ?" गुल्लू मियाँ ने पूछा।

"गुल्लू मियाँ ! इतनी रात गये जंगल-झाड़ी में क्या कर रहे हो ?"

फुसफुसा कर उसने कहा, "देखो किसी से कहना मत, मेरा बटुआ यहाँ गिर गया है। न मिले तो बड़ा नुकसान होगा। वही ढूँढ़ रहा हूँ।"

बशीर को इस सोच-फिकर के होते भी हँसी आ गई। गुल्लू मियाँ के बटुए की कहानी इस इलाके में कौन नहीं जानता। वर्षों से वह उसी को ढूँढ़ रहा है। कब्र में गये बिना उसकी यह खोज खत्म होने की भी नहीं।

ऐसों से कुछ पूछताछ करना फजूल ही है। फिर भी बशीर ने पूछा,

"तुमने मालिक को देखा है ?"

गुल्लू मियाँ ने जवाब देने के बदले सवाल ही किया—"मालिक अभी तक घर नहीं लौटा ?"

"नः, तीसरे ही पहर से गायब है।"

"गायब है ! मुसीबत । मैं बराबर मसजिद में ही था, कुछ बता नहीं सकता।"

जरा देर चुप रहकर बोला, "मतीन को बुला कर पूछूँ । तमाम दोपहर ये छोकरे दौड़ते रहते हैं। उसे जरूर पता होगा।"

बशीर ने दो कदम बढ़कर आवाज दी—"मतीन, ऐ मतीन ! इधर तो आना।"

घुँघराले बालों वाला एक लड़का सामने के मकान से बाहर निकल आया।

गुल्लू ने पूछा, "तूने मालिक को देखा है ?"

"नहीं ता। कल से ही वह इस तरफ नहीं आया है। साबू को पूछने से शायद पता चले। वे दोनों मिलते भी हैं और झगड़ते भी खूब हैं।"

बशीर को उसका सुझाव जँचा। मालिक प्रायः उसी के साथ रहता है, सो वह साबू के घर की तरफ चल पड़ा। 'हो न हो, वह जरूर वहीं है। कम्बख्त मिल तो जाय जरा, ऐसा सबक दूँगा कि सारी जिन्दगी याद रहेगा। ऐसा लड़का तो मैंने देखा ही नहीं, पित्त पानी कर छोड़ा।'

गाँव में पेड़-पौधों के नीचे अँधेरा और भी गाढ़ा था। दूर आसमान में टिमटिम तारे जल तो रहे थे, मगर उस जोत में दम नहीं था। झाड़ियों की उस गहनता में चाँदनी कभी झाँक नहीं पाती। जुगनूओं की जगमगाहट से अँधेरा और गहरा हो उठता। बशीर मालिक के लिए इस कदर चिन्तित हो गया कि उसे अपने आपद-विपद की सुध ही नहीं रही।

वह साबू के यहाँ लपक कर पहुँचा। घोर सन्नाटा, बीच-बीच में

कुत्तों के भौंकने की आवाज। घर के समीप पहुँचते ही बहुतेरे कुत्ते भौंकने लगे । बशीर रह-रह कर जमीन पर लाठी ठोंकने लगा; और आवाज दी—"साबू....साबू.... ।"

कोई जवाब नहीं । उसने और जोर से पुकारा । फिर भी जवाब नहीं । घर में लोग थे, दबे गले की आवाज सुनाई पड़ रही थी। बशीर ने खीझकर कहा, "अरे, घर-भर के लोग गुजर गये ? जवाब देने को भी कोई न रहा ।"

किसी ने दरवाजे का पल्ला जरा-सा झाँक करके पूछा, "कौन है, इतनी रात को ?"

बशीर ने कहा, "मैं साबू को पुकार रहा हूँ ।"

"साबू को खोज रहे हो ? मगर हो कौन तुम ?"

"मैं बशीर हूँ । नज्जू मियाँ के यहाँ से आया हूँ ।"

"अच्छा, बशीर मियाँ !" एक दुबला-पतला-सा आदमी बाहर निकल आया । "बात क्या है कि इतनी रात को साबू को खोज रहे हो? अरे भलेमानस, अपना नाम भी तो बता देना चाहिए ? तुम पुकार रहे हो और हम यह सोच रहे हैं कि जाने कौन उठाईगीर है !"

"खैर, उससे क्या ! भई टेपू मियाँ, साबू कहाँ है ?"

"सो रहा है वह तो ।"

"जरा जगा दो तो उसे ।"

बशीर को यकीन था कि यहाँ मालिक जरूर मिलेगा, मगर यहाँ तो सुनसान है । लोग-बाग सो गये हैं । उसकी चिन्ता और भी बढ़ गई ।

आँखें मलते हुये साबू ने आकर पूछा, "क्या बात है बशीर चाचा ?"

बशीर ने मालिक की बात पूछी । साबू ने कहा, "मुझे तो पता नहीं । शाम मेरे साथ था जरूर, झगड़कर जो गया, फिर नहीं आया ।"

"तो तुझे उसका पता नहीं है ?"

"नहीं । मैं जानूँ भी कैसे ? लड़ाई तो उसी ने शुरू की...."

बीच ही में बशीर बोल उठा, "लड़ाई किसने शुरू की, मुझे यह

जानने की गरज नहीं है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि वह है कहाँ ?"

मालिक से झगड़ कर साबू का मन ठीक नहीं था। वह बता देना चाहता था कि कसूर उसका नहीं है। उसकी बातों में रुकावट जो आई तो वह बिगड़ गया। लेकिन एक तो वह बशीर से डरता था, फिर सामने खड़ा था बड़ा भाई। सो उसने थोड़े में बताया, "मैं नहीं जानता।"

बशीर फिर एक शब्द न बोला। चल पड़ा। बशीर ने खामखा सोते से जगाया था, इसलिए टेपू मियाँ का मिजाज गरम हो आया था। मन-ही-मन बोला, 'जाहिल कहीं का। नींद में से जगाया और जाने लगा तो दुआ-सलाम भी नहीं !'

अब इतनी रात को बशीर उसे ढूँढ़े भी कहाँ ? खुदा जाने, क्या हुआ ? यह राक्षसी पद्मा, नज्जू और आयशा को खाकर भी शायद उसकी भूख न बुझी हो ! किसी तरह से यह रात कटे। शायद गुस्से से मालिक कहीं छिप गया हो, कोई ताज्जुब नहीं !

उदास बैठी थी गुलाबी और कुलसुम। खाने-पीने का किसे खयाल आता। तीनों गुमसुम बैठ कर सोचते रहे—'मालिक का आखिर हुआ क्या ?'

तीनों कितनी देर तक इस तरह चुप बने बैठे रहे, पता नहीं। एका-एक बशीर की निगाह पड़ी कि दूर से कोई तेज रोशनी इसी तरफ को आ रही है। जाने कौन आ रहा है ? दूर से ही बहुत लोगों की आवाज आई। माजरा क्या है ? बशीर सोचने लगा—'गुलाबी-कुलसुम को बताऊँ ? तहखाने में सब जा छिपें ? डकैत तो नहीं हैं ये लोग ? भला भले लोग भी मशाल लिये राह चलते हैं ? 'दिन-भर की मशक्कत, ऊपर से मालिक की चिन्ता। बशीर के दिमाग में बुरे-बुरे खयाल आने लगे। बुरी आशंकाओं की भीड़ लग गई। कहीं ये डकैत ही निकले तो अकेले इनका मुकाबला किया जा सकेगा ? मगर सोचने से क्या होता है, नसीब में जो है, वही होगा।

उसी के घर की तरफ चार आदमी चले आ रहे थे। चार में से

एक खासा लम्बा था। खुद बशीर काफी लम्बा है, मगर शायद उससे भी ज्यादा लम्बा था वह आने वाला। सहसा उसी का नाम लेकर किसी ने पुकारा। अरे, यह तो असगर मियाँ है। आखिर इतनी रात गये असगर यहाँ क्यों? बाहर निकल कर बोला, "मुखिया, इतनी रात गये क्यों तकलीफ उठाई?"

असगर जवाब दे, उसके पहले ही बच्चे के महीन गले की आवाज आई, "बशीर चाचा, देखो मैं तुमसे भी लम्बा हो गया हूँ।"

अँधेरे में उचककर बशीर ने देखा, मालिक असगर मियाँ के कन्धे पर बैठा था! इसी से असगर बेहिसाब लम्बा पहलवान लग रहा था।

असगर ने सारी बातें खोल कर बताईं। "दोनों घरों के बीच से जो नहर गई है, मालिक और नूरू दोनों उसी में फँस गये थे। बाँस-बाड़ी के बेड़े से नूरू बेतरह डरती है। नहर में पानी है, सो मालिक उसे पार कराने गया था। मगर लग्गी कीचड़ में धँसकर फँस गई। मसजिद से लौटते हुए मैंने देखा और इन्हें निकाल कर घर लेता गया।"

बशीर ने पूछा, "क्योंरे मालिक, तू तो तैरना जानता है, पार क्यों नहीं हो गया?"

मालिक बोला, "उस ठंढे पानी में उतरता कौन? उफ्, जो सर्द पानी और कीचड़ है! पाँव धँसता तो निकल सकता था भला?"

असगर खिलखिलाकर हँस पड़ा। बशीर ने भी हँसी में साथ दिया।

अपनी बड़ी-बड़ी आँखें फैला कर मालिक ने उन लोगों को ताका। साँझ से असगर और असगर की बीवी का हँसते-हँसते बुरा हाल रहा। अब हँसने की बारी आई बशीर की। मालिक क्या जाने, इसमें हँसने की कौन-सी बात है। उसने सोचा, बूढ़ा हो जाने पर आदमी ऐसा ही हो जाता है शायद।

कुलसुम कब वहाँ चुपचाप आ खड़ी हुई, किसी को पता न चला। मालिक ने देख लिया कि वह जा रही है। वह असगर के कन्धे से उछल

पड़ा और दौड़ कर कुलसुम से लिपट गया। कुलसुम कुछ भी न बोली। उसे छाती से लगाये अन्दर चली गई।

——छः

करना क्या चाहिए, इस मसले पर कुलसुम, गुलाबी और बशीर ने काफी सोचा-विचारा, मगर कोई हल न निकाल सके। बशीर ने यह अच्छी तरह समझ लिया था कि रैयत अपनी राज़ी-खुशी से मालगुजारी नहीं देने के। आप अब बूढ़ा हो गया है, जोर-जुलुम से अदा कराना उसके बस का नहीं। सो मुखिया के पास जाने के सिवाय उसे दूसरा रास्ता नहीं सूझ रहा था। और इधर कुलसुम और गुलाबी यही कहती जा रही थीं कि जब जायदाद एक बार असगर मियाँ के कब्जे में चली जायगी, तो क्या लौटने की उम्मीद रह जायगी?

अन्त में बशीर ने तै कर लिया, 'कहने को लोग जो चाहे कहें, सम्पत्ति मैं असगर को सौंप ही दूँगा।' सो एक दिन वह असगर मियाँ के घर जा पहुँचा। इसके पहले वह उसके यहाँ कभी नहीं गया था। नहर के पास ही घर था। काफी साफ-सुथरा। हर तरफ झकमक। दीवारें भली तरह पुतीं। गोले में धान, गाय-गोरू से गुहाल भरा। देखते ही समझ में आ जाता था कि असगर मियाँ को खाने-पहनने की कोई कमी नहीं। ऐन नदी पर ही उसकी दहलीज। घर के चारों-तरफ घेरे से सटा-सटा बाँस का मचान, जिस पर बीस-बाईस आदमी मजे से बैठ सकें।

असगर मियाँ आँगन में बैठा हुक्का पी रहा था। किसी गाय को बीमारी हो गई थी, जिसका इलाज चल रहा था,। बैठा-बैठा वह वहीं देख रहा था। पाँच-छः लोगों ने मिलकर गाय को चारों खाने चित्त गिरा रक्खा था। उसके पैर बँधे थे। वैद्जी लोहा लाल करके उसे दाग रहे थे।

बशीर ने सलाम करके पूछा, "गाय को क्या हो गया है मियाँ !"

असगर ने होंठों से हुक्के को हटाया, सलाम किया और बोला, "बीमारी वैसी खास नहीं, मगर दाग देना जरूरी था। खैर। कैसे इधर आना हुआ ?"

बशीर ने बगैर किसी भूमिका के कहा, "आपकी राय लेने आया हूँ।"

हुक्का रख कर उसने पूछा, "मेरी राय ? किस लिए ?

बशीर बोला, "मालिक के बारे में आपकी राय चाहता हूँ।"

बशीर जरा देर चुप रहा, देखें, असगर क्या कहता है।

असगर ने कुछ न कहा। हुक्का पीने लगा। जरा देर तक दोनों ही चुप बने रहे। जब बशीर ने देखा कि असगर कुछ बोलता नहीं है, तो कहना शुरू किया—"जब से नज्जू गुजर गया है, तब से उसकी जायदाद की देखभाल मैं ही करता हूँ। मगर अब मुझसे नहीं बनता। एक-न-एक बहाना बना कर रैयत मालगुजारी नहीं देते। बड़ी मुश्किलों से इस बार जमींदार का पावना चुकाया है। लेकिन इस तरह कब तक चलेगा ? इसीलिए आपकी मदद माँगने आया हूँ।"

असगर मियाँ आँखें बन्द किये हुक्के के दम लगाता जा रहा था। कोई जवाब नहीं।

असगर इसी तरह बड़ी देर तक चुप रहा फिर बोला, "देखो, तुम्हें मालूम है कि नज्जू से मेरी दुश्मनी किस हद तक जा पहुँची थी। ऐसे में अगर नाबालिग की जायदाद का भार मैं लूँ तो लोग क्या कहेंगे ? लोगों को गोली मारो, तुम्हीं क्या एतबार कर सकोगे ?"

कहकर असगर ने तीखी निगाहों से बशीर को देखा।

बशीर ने जवाब दिया, "एतबार न होता तो आपके पास आता ही क्यों ?" जरा रुक कर फिर बोला, "चूँकि आप पर एतबार है, इसीलिए आपको गाँव का मुखिया माना है। गाँव में ढेरों लोग तो पड़े हैं, सब को छोड़कर कर मुसीबत में आपही के पास आखिर क्यों आया ?"

असगर मियाँ बहुत कड़ा आदमी था। पूछा, "सच ही क्या तुम्हें मेरी मदद की जरूरत है ? सच ही तुम्हें मुझ पर विश्वास है ?"

बशीर कुछ घबरा-सा गया। उसकी समझ में न आया कि असगर आखिर कहना क्या चाहता है। उसने समझा, असगर मजाक कर रहा है। उसका मिजाज चढ़ गया। तुनक कर बोला, "आखिर तुम कहना क्या चाहते हो मुखिया ? सब पर जाहिर है कि बशीर मुँह से जो बोलता है, वही करता है। बेवकूफ शायद मैं होऊँ, पर फरेबी और दगाबाजी न तो मुझसे कभी हो सकी, न कभी हो सकेगी।"

असगर नाराज न हुआ। बोला, "बात ठीक-ठीक समझ में न आई, क्यों ? मगर मामले पर तुम्हीं जरा गौर करो। सब को मालूम है कि नज्जू मियाँ से मेरी दुश्मनी थी। आज वह गुजर गया, मगर वह अदावत भी क्या जाती रही? मालिक उसी का लड़का है। तुम्हीं बताओ उसका भार मैं कैसे ले सकता हूँ? मुझे ही इस पर क्यों यकीन आये कि सब कुछ जानते हुए भी उसकी सारी जायदाद की देखभाल का भार तुम मुझ पर दे सकते हो ? मैं कैसे मान लूं कि तुम्हारी नीयत में और कुछ नहीं है ?"

बशीर का गुस्सा और भी बढ़ गया। अपने को जब्त करके उसने कहा, "इस नीयत-वीयत का मैंने कर्ज नहीं खाया। अगर नीयत ही की बात होती तो तुम्हारे पास क्यों आता ? दीवान ने तो खुलकर ही मुझसे कहा था कि कुछ नजराना दो तो सारी जायदाद तुम्हारे नाम कर दूँ। तोबा, तोबा ! ऐसी बातें सुनने से भी गुनाह होता है। मैंने उस पर कान ही न दिया। तीन काल तो अपना कटा, अब एक पाँव कब्र की ओर बढ़ाये हूँ। इस उम्र में जायदाद के लिए अपनी आकबत क्यों बिगाड़ूँ? तुम मेरा मज़ाक उड़ा रहे हो मुखिया ?"

असगर अबकी जोर से हँस पड़ा। बोला, "यह कौन कह सकता है कि तुम बूढ़े हो गये हो ? कैसा भी जवान हो, बातों में तुमसे उसे शिकस्त खानी ही पड़ेगी।"

असगर कुछ देर चुप रहा, फिर जैसे सोच में पड़ गया हो, इस प्रकार बोला, "तुम मुझे मालिक का भार उठाने को कह रहे हो, मगर वह भार कैसे उठाऊँ, इसके बारे में कुछ नहीं बताते। बड़ी मुसीबत में डाल दिया तुमने मुझे। चाहे जो भी करूँ, जितना भी करूँ, लोग निन्दा ही करेंगे। लाख सही करता रहूँ और कभी कोई वैसी बात आन पड़े, तो लोग खामखा कहेंगे कि मैं उसकी जायदाद हजम किये जा रहा हूँ। और अगर तुम्हारी बात न मानूँ, तो भी लोग यही कहेंगे कि चूँकि नज्जू से मेरी अदावत थी, इसीलिए मैंने उसके नाबालिग लड़के की मदद नहीं की। और हो सकता है कि अन्त में इसकी वजह से मेरी मुखियागीरी पर भी आँच आये!"

बशीर ने सख्त होकर कहा, "मुखिया, तुम्हारे मुँह से ऐसी बातें सुनने की उम्मीद न थी। लोग क्या कहेंगे, केवल इसके डर से तुम्हारे जैसा आदमी सही रास्ते से दूर हट जायगा? मालिक नाबालिग है, मैं सत्तर पार कर चुका हूँ। तुम उसके सिर पर न रहो तो उसे रैयत ले डूबेंगे और तब यतीम के इस सर्वनाश के लिए खुदा के सामने तुम गुनहगार समझे जाओगे।"

असगर ने अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए पूछा, "आखिर तुम किस तरह की मदद मुझसे चाहते हो?"

खुशी के मारे बशीर ने सिर हिलाया। बोला, "मुझे तुमसे इसी बात की उम्मीद थी मुखिया। तुम ठहरे जाने-माने आदमी, तुम्हें इशारे से ही सब कुछ समझना चाहिए। अगर यह मालूम हो जाय कि तुम मालिक की मदद करोगे तो तुम्हें सब कुछ खोलकर बताने में एतराज भी क्या हो सकता है?"

असगर चुप हो रहा और बशीर कहता गया, "अगर मालिक की सारी जायदाद तुम इजारे पर रख लो, अपनी खेती जैसी उसमें भी खेती करो तो फिक्र क्या रह जाती है। कोई चूँ भी नहीं कर सकता। रैयत हमें मालगुजारी देने में आना-कानी करते हैं, मगर तुम्हारे आगे

उनकी एक नहीं चल सकती। खुद लाकर पहुँचा जाया करेंगे। तुम अपना पावना लेकर बाकी मालिक के नाम जमा रखना। जब तक मालिक नाबालिग है, तब तक तो यही करना अच्छा है। सयाना होकर वह चाहे तो खुद खेत-खलिहान करे, या जी चाहे जिसे दे।"

यह प्रस्ताव सुनकर असगर कई मिनट तक तो एकदम चुप बना रहा। मामले को डूबकर देख लेना चाहिए। बात कुछ ऐसी ही लगती है जैसी सौत के हाथों बच्चे को सौंप देना। मगर गौर करने पर तो यह उससे भी कठिन मालूम होती है। नज्जू से असगर की कभी पटी नहीं, इसी के कारण उसे इस पर और भी गहराई से सोचना पड़ रहा था। मान लो, लेने के बाद भी अगर रैयत लोग अँगूठा दिखायें तो मालिक का वाजिब पावना तो हमें हर हालत में देना ही पड़ेगा। लोग अदा न होने की बात तो बर्दाश्त नहीं कर सकेंगे। अपनी जायदाद बेच कर भी जमींदार का कर चुकाना पड़ेगा, मालिक का पावना उसे देना पड़ेगा। बशीर ने तो अच्छी मुसीबत में फँसाया।

बड़ी देर तक उत्तर का इन्तजार करके बशीर बोला, "क्यों मियाँ, कुछ कहा नहीं?"

असगर सोचने लगा, देखने में चाहे जो लगे, बशीर बेवकूफ हरगिज नहीं है। अगर यह नौबत उस पर आई होती तो वह भी यही करता।

आखिर असगर ने कहा, "तुम्हारे सवाल का जवाब इतनी जल्दी नहीं दिया जा सकता बशीर! जरा इस पर गौर करना पड़ेगा। राजी हो जाऊँ तो बिल्ली के गले घंटी तो फिर मुझे ही बाँधनी है! कहीं जरा चूक हो तो जिन्दगी-भर का अफसोस। नाबालिग की मदद न हो सकी तो खुदा के आगे भी गुनहगार हूँगा और लोगों में भी बदनामी होगी। इस पर सोच-समझकर ही अपना निश्चय बता सकूँगा।"

बशीर बोला, "यह तो बिलकुल वाजिब है। बिना सोचे-समझे कुछ करना भी नहीं चाहिए। खैर! तो आज मुझे इजाजत दो।"

बशीर चला गया, मगर असगर बैठा-बैठा उस राह की ओर देखता रहा, जिस पर से होकर बशीर गया था। उसकी नजर सुदूर अतीत पर गड़ी रही। कितनी ही बीती बातें याद आने लगीं। एक दिन ठीक इसी तरह वह भी राह पर निकल पड़ा था। नूरू कब उसकी गोद में आ बैठी, असगर को इसका खयाल ही न रहा। वह अपने में तल्लीन नारियल पीता रहा।

आखिर वही हुआ, जो बशीर ने कहा था। गाँव के दूसरे जाने-माने लोगों से असगर ने राय-मशविरा किया। सबने बशीर का मतलब जानना चाहा। सचमुच ही क्या बशीर बूढ़ा हो गया है कि उससे यह भार अब उठाते नहीं बनता, या इसमें और कोई दाँव है ? और कोई दाँव भी है, तो किसके खिलाफ, असगर के या मालिक के ?

वही पुराना किस्सा, विधवा और नाबालिग। इस हलके में जायदाद तो लाठी के बल ही रखी जा सकती है। राक्षसी पद्मा की जीभ तो हर समय लपलपाती ही रहती है। कब किसका खेत-खलिहान, घर-द्वार हड़प लेगी, कोई नहीं जानता। विधवा भी कम उमर की हो तो उसका निकाह कर दिया जाय। एक ठिकाने लग जाय वह। मगर मालिक की बाबत ऐसा भी तो नहीं। दुनिया में उसे अपना कहने को कोई नहीं। यह बूढ़ा बशीर, यह भी उसका कोई सगा-सम्बन्धी नहीं। गुलाबी, कुलसुम ? वे मालिक को क्या देखें, खुद उन्हीं को अभिभावक की जरूरत है।

पंचायत बुलाई गई। गाँव के सभी जाने-माने लोगों के आगे बशीर ने यह प्रस्ताव रखा कि असगर मियाँ मालिक की जायदाद को इजारे पर रखें। हर साल चैत में हिसाब-किताब कर दिया करें। बालिग होने पर, पंचायत बुलवा कर, मालिक अगर चाहे, अपनी जायदाद वापस ले सकेगा।

लोगों की खाक समझ में न आया ! कहीं बशीर को मिला कर तो असगर मालिक का सब कुछ हजम कर लेना नहीं चाह रहा है ? अस-

गर क्या सचमुच ही ऐसा नेक-बख्त और ईमानदार है ? या अब तक ढोंग करके लोगों को ठगता आ रहा है ! सब बार-बार असगर का मुँह देखने लगे। चेहरा मन का आईना है; बहुत बार मन की परछाईं चेहरे पर उतर आती है। मगर असगर का मुख-मंडल प्रशान्त ! अच्छे-बुरे, किसी भी भाव की छाया उसके चेहरे पर नहीं थी। लोगों ने बहुत कुछ सोचा-समझा। सबको नाबालिग की जायदाद बचाने की फिक्र थी। मगर सोचना और करना तो एक नहीं। चाह कर भी वे कितना कुछ कर सकते हैं ? सबको अपना-अपना काम पड़ा है, अपनी-अपनी जिम्मेदारियाँ हैं। जब किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सका, तो एक ने पूछा, "तुम्हारी क्या राय है मुखिया ?"

यों ही तो असगर गम्भीर प्रकृति का आदमी है, उसकी वह गम्भीरता आज और भी बढ़ गई थी। वह बोला, "अल्लाह जानता है, मैं कई रोज से लगातार यही सोचता रहा हूँ, मगर किसी फैसले पर नहीं पहुँच सका। इतने तो लोग हैं, मगर मालिक की जायदाद का भार मुझी को लेना पड़ेगा ? कोई कहता तो ऐसी बात पर यकीन ही नहीं आता, किन्तु इसी विचार के लिए आज पंचायत बैठी है। आज नज्जू मियाँ नहीं रहा; मगर आप सब लोगों को मालूम है कि उससे मेरी चखचख चलती थी, झगड़े-झमेले थे। आज बेशक वह है नहीं, कफन के साथ-साथ दोस्ती-दुश्मनी भी दफन हो गई, अल्लाह के सामने छाती पर हाथ रख कर मैं कह सकता हूँ कि नज्जू के खिलाफ मुझे आज कोई बैर नहीं, कोई मलाल नहीं। मगर कोई इस पर यकीन करेगा ? किस-किस की जबान बाँधी जायगी ? ऐसा करूँ, तो लोग यही कहेंगे, हो न हो मैं मालिक की जायदाद हथियाने पर तुल गया हूँ। लाख करो, हर साल एक-सी उपज नहीं आती; लेकिन लोग क्या ऐसे में मुझ पर रिआयत करेंगे ? कितना ही क्यों न करूँ, बुराई की बू लोगों को जरूर मिलेगी।"

असगर थम गया। सब की तरफ निगाह दौड़ाई। सब मौन। हुक्के

की अदला-बदली के सिवाय और कोई कोशिश, कोई आवाज नहीं।

असगर ने लम्बी उसाँस भर कर कहा, "यह दुधारी तलवार, जाते भी घाव, आते भी—अपनी यही दशा है। मालिक की जायदाद लेने में मुझे नफा से ज्यादा नुकसान है। और न लूँ तो लोग लूट खायेंगे। उसमें लोग शायद मुझे कसूरवार न ठहरायें, पर मैं अल्लाह के सामने क्या जवाब दूँगा ? एक ही उपाय है। गाँव के सभी हितैषी यहाँ मौजूद हैं। कोई और आदमी अगर यह भार कबूल कर लें, तो हो। मालिक की जायदाद भी बच जाय और मैं भी इस मुसीबत से रिहाई पाऊँ।"

असगर ने सब की तरफ ताका, पर यह मार लेने को कोई भी आगे नहीं आया।

बशीर को किसी निश्चय पर आने में देर लगती है; पर एक बार तै कर लेने के बाद देर बर्दाश्त नहीं होती उसे। कुछ अधीर-सा होकर वह बोला, "मुखिया, जब दूसरा कोई तैयार नहीं है, तो बेकार की बातों से क्या लाभ ? या तो तुम यह भार उठा लो या खुदा पर छोड़ दो। यह तो तै है कि तुम तैयार न हो तो और कोई तैयार नहीं हो सकता।"

लोग फिर भी चुप रहे। असगर ने फिर पूछा, "आप में से कोई यह भार लेने को तैयार हैं ? हों तो कहिए। खुदा गवाह है, जो यह भार लेंगे, मैं जिन्दगी भर उनका एहसान मानूँगा।"

एक ने कहा, "मुखिया, आपने जो कुछ भी कहा, सच है। नाबालिग की जायदाद लेना बड़ा कठिन काम है। इस भार को खुशी-खुशी अपने कन्धे पर उठा ले, हममें से ऐसा है ही कौन ? आप भी भली तरह सोच देखें, सँभाल सकेंगे ?"

असगर ने धीरे-धीरे कहा, "सोचते-सोचते मैं हार गया, पर इसका कोई किनारा न पा सका। इसे टाल सकता, तब तो कोई बात ही न थी। बहुत सोचा, खुदा से मन्नत मानी कि वह सही रास्ता बताये, पर अन्त में यही सोच पाया कि खुदा की शायद ऐसी ही मरजी है। अब अल्लाह मालिक है। आप सबों को गवाह रखकर मैं यह वायदा करता हूँ कि

मालिक के हक़ूक की जान देकर भी रक्षा करूँगा। अगर जानकर कभी इसके खिलाफ करूँ तो मेरे माथे पर गाज गिरे। हर साल वैशाखी पूर्णिमा के दिन सब के सामने हिसाब पेश करूँगा। अगर भूलचूक करूँ तो जो भी सजा आप लोग तजवीज करेंगे, मैं सिर झुका कर उसे कबूल कर लूँगा।"

——सात

मालिक नूरू की माँ को देख कर अवाक् रह गया। उसने सुन तो रखा था कि देखने-सुनने में वह अच्छी है। मगर ख्वाब में भी उसने यह नहीं सोचा था कि इतनी भी सुन्दर हो सकती है कोई। जैसी आँख-नाक की बनावट, वैसा ही खासा बदन का रंग। बाल घने काले और वैसे ही लम्बे। कहानियों में उसने मेघ जैसे काले रंग के बालों वाली कन्या का हाल सुना था। नूरू की माँ को देखकर मालिक को लगा, रूपकथा की परियाँ ऐसी ही खूबसूरत होती होंगी। और इतना मीठा स्वभाव कि उसने मालिक को गोदी में खींच कर छाती से लगा लिया। शर्म तो आ रही थी उसे, पर अपने को उसने उस बन्धन से छुड़ाया नहीं। अचानक नूरू की चीख से वह चौंक उठा।

"तू रो क्यों रही है अम्माँ?" नूरू ने माँ का अँचरा थामकर पूछा।

मालिक को अब तक तो खाक की खबर नहीं थी। नूरू की बातों से अब उसे लगा कि उसके माथे पर मानो गरम पानी की कुछ बूँदें टपक पड़ी हों। वह अपनी बड़ी-बड़ी आँखें फाड़ कर नूरू की माँ की ओर ताकने लगा।

इस बीच कब असगर मियाँ अन्दर आ गया, किसी को भी पता न चला। बीवी की आँखों में उमड़े आँसू देखकर वह चला जा रहा था कि नूरू ने उसका हाथ थाम लिया और बोली, "अब्बाजान, देखो न,

अम्मा जाने क्यों हो रही है ?"

अगसर बोला, "हाँ, देख रहा हूँ ।"

"क्यों रो रही है अब्बा ?"

"बेचारे मालिक का बाप गुजर गया, दादी चल बसी; अब दुनिया में उसे देखने वाला कोई न रहा । तेरी अम्मा इसी दुःख से रो रही है बेटे !"

असगर बिटिया के सिर पर हाथ फेरने लगा ।

नूरू की माँ ने आँखें पोंछ लीं । धीरे-धीरे मालिक को गोद से उतार दिया । नूरू का हाथ पकड़ कर बोली, "नूरू, मालिक तुम्हारा बड़ा भाई है । इससे शरारत मत करना ! लिहाज करना, हाँ !"

नूरू ने कहा, "वाहरे, मैंने शरारत कब की है ? मैं शरारती कैसे हूँ ?"

मालिक की तरफ घूम कर नूरू की माँ ने कहा, "बेटे, अपनी इस छोटी बहन का खयाल रखना ।"

मालिक क्या कहे, समझ नहीं पाया । सारी दुनिया की लज्जा मानों उसे दबोच बैठी । उसने कुछ कहा नहीं । सिर हिलाकर सहमति जताई ।

अब मालिक की एक बिलकुल नई जिन्दगी शुरू हुई । वह बेटे की तरह असगर मियाँ के साथ रहने लगा । असगर खेतों में जाता, मालिक उसके साथ जाता । असगर आगे-आगे बैलों को हँकाये चलता, पीछे-पीछे चलता मालिक । करारी मेहनत से थका हारा असगर जब बरगद के नीचे सुस्ताने बैठ जाता, मालिक चिलम चढ़ाकर उसे हुक्का दे जाता । दोपहर आते-आते असगर के लिए घर से खाना ले आता । खेतिहर-हलवाहे भी आ जुटते । दोपहर का खाना सब का खेत पर ही होता । खाकर वे नमाज पढ़ते । उनकी कतार में मालिक भी शामिल हो जाता ।

नमाज के बाद कोई-कोई तो जरा देर करवटें बदल लेता, कोई-कोई यह-वह काम कर लेता । असगर खटनेवालों की जमात का आदमी

था, सुस्ताना नहीं जानता। एक चिलम तम्बाकू पीने में जो देर लगती, उतना ही सुस्ताना समझिए। कश खींच कर मुँह से धीरे-धीरे धुआँ छोड़ता और हरियाये खेत की ओर ताकता रहता। धान के नन्हें पौधे, आँखें जुड़ा देने वाला उनका वह रंग। नई कोपलों की बहार, मानों सब्जपरियों का मेला जुड़ा हो। उनमें अनहोना जादू। धरती कितनी सुन्दर जँचती है, कितनी सुन्दर। तुलना नहीं हो सकती इसकी।

कमियों की कमी पड़ने पर खुद मालिक भी खेतों में जुट जाता। बच्चा ही ठहरा, काम भी कितना करता। मगर फरमाइशें पूरी करने में उसका जोड़ नहीं था। पेड़ तले बैठ कर वह कमियों पर निगाह रखा करता। छुरी से वहाँ बैठा वह बाँस के खिलौने बनाया करता। उन खिलौनों से नूरू कितनी खुश होती!

सुबह से दोपहर, दोपहर से साँझ—किस मजे से समय गुजर जाता। सूरज की पहली किरणों में धरती का अनूठा रूप देखते ही बनता। दोपहर की चिलमिलाती धूप में जो पारिपार्श्विक शोभा निखरती, वैसी और कहीं देखने को नहीं मिलती। परन्तु डूबते सूरज की आभा में उनकी शकल ही बदल जाती। छाया लम्बी, और लम्बी हो आती, थकावट से अलसा उठती सारी दुनिया। आखिर आराम करने का समय आ लगता। क्या मनुष्य, क्या पशु-पंछी, सभी अपने-अपने घर-घोंसलों को शरण लेते। कमिये-मजूरे काम से हाथ रोक लेते, बिखरी चीजों को बटोर लाते। इस मौके पर असगर एक बार खेतों का पूरा चक्कर काट आता। देख लेता कि दिन-भर में काम कितना हुआ है। किसी की पीठ ठोंक देता—'शाबाश जवान!' किसी की तरफ सिर्फ ताक लेता। प्रश्न और तिरस्कार-भरी उसकी निगाह से ही वह मारे शर्म के गड़ जाता। लड़खड़ाया-सा कहता—'आज जी कुछ अच्छा नहीं था, औकात-भर काम करते न बना।'

और सब कुछ कर-कराकर सामान के साथ सब घर की ओर चल देते। धुँधलका छाता। कुहरे की झीनी चादर से सब कुछ मायामय

हो उठता। सब लौट पड़ते। नजदीक जाकर मालिक दौड़ पड़ता, सबसे पहले वही पहुँचेगा। नूरू उसकी बाट जोहती रहती। दूर तक दौड़ी आती—'मालिक, क्या ले आये हो मेरे लिए ?' मालिक का हाथ खाली रहता, लेकिन पिटारे में या अँगोछे में बाँध कर रोज कुछ-न-कुछ लाता जरूर। कभी बाँस के खिलौने, कभी घास के। रंग-बिरंगे खिलौने। और जब भी कुछ लाता, आप बड़ा गम्भीर बना रहता।

नूरू रह-रह कर उसके चारों तरफ चक्कर काटती रहती। कहती, "जरा दिखाओ न, क्या लाये हो मेरे लिए ?"

बुजुर्गाना ढंग से वह कहता, "ठहरो भी, इतनी जल्दी क्या है ! सारा दिन लोहू-पसीना एक करता रहा, जरा सुस्ता तो लेने दो, हाथ-पाँव धो लेने दो। फिर देखूँगा कि तुम्हारे-लायक कुछ है भी या नहीं।"

कभी कहता, "अरे रे, बड़ी चूक हो गई। आज तो तुम्हारे लिए कुछ लाना भूल ही गया !"

ज्यादा देर तक धीरज रख सकना नूरू के लिए मुश्किल था। होंठ फुला कर, माथा हिला-हिला कर वह कह उठती, "रहने भी दो, कोई हर्ज नहीं। दिखाने की जरूरत नहीं, देखना ही नहीं चाहती मैं। ओह, ऐसी कहाँ की दौलत लाये हैं कि बिना देखे मेरी रोटी हजम नहीं होगी !"

मालिक तो चिढ़ाना ही चाहता। नूरू जितना ही बिगड़ती, वह उतना ही हँसता। कहता, "तुम न देखो तो मेरी बला से ! आज ऐसे खिलौने बनाये हैं कि क्या कहने हैं ! तुम्हें नहीं चाहिए तो दे दूँगा किसी और को।"

और मालिक छिपकर खिलौनों को ताक पर धर देता। लपक कर नूरू उन पर कब्जा जमा लेती। कहने लगती, "जरा मेरी चीज किसी और को देकर भी तो देख लो !"

वह खिलौनों को छाती से लगा कर जकड़ लेती।

रात का भोजन असगर अन्दर ही करता। अपने खाने से पहले इस बात की पूछताछ जरूर कर लेता कि कमियों को ठीक से खाना मिल

चुका है या नहीं। भात, कटोरे में दाल और बैंगन-कोंहड़े की तरकारी।

पेट सहज ही भर जाता, मन भी। खा-पीकर सब बरामदे में जुट कर बैठ जाते। एक से दूसरे हाथ को हुक्का बढ़ता रहता। सुख-दुःख की, आशा-आकांक्षा की बातें होने लगतीं। कोई बैठे ही रहते, कोई लम्बे हो जाते बरामदे पर। कोई वज़ू करता। नमाज पढ़ लेनी है। नौजवान लोग हाथ में बाँसुरी लिये नदी के किनारे जा बैठते। बाँस में से फूट पड़ने वाली सुरीली आवाज से चारों ओर की निस्तब्धता करुण हो उठती। जब सभी कमिये खाना खत्म कर चुकते, तब कहीं असगर मियाँ खाने बैठता। उसके अगल-बगल बैठ जाते नूरू और मालिक। गरम-गरम भात, मिर्च मिला कर भुने बैंगन। आँखों से पानी बहने लगे, इतना तीता। तीता हुए बिना मालिक से खाया नहीं जाता। और कहीं कच्चा प्याज और भुना लहसुन हो तो पूछिए मत। मारे खुशी के मालिक उछल-उछल पड़ता। खाना खत्म होने पर कटोरा-भर दूध, कोई पकवान और खजूर का गुड़।

मालिक के यहाँ आ जाने के दो ही चार दिन बाद गुलाबी गाँव छोड़ कर चली गई। बताया, अपने किसी दूर के रिश्ते के मामा के यहाँ जायगी। बात यह थी कि वह असगर के यहाँ रहना नहीं चाहती थी। आयशा की निगरानी में वह तैयार हुई; उसकी रुचि का, विचार का, सब कुछ का उसे पता था। अब इस उम्र में नये घर में, नई मालकिन का मन जुगा कर चल सकना सम्भव नहीं था। नये रंग-ढंग सीखने की न अब शक्ति रही थी, न इच्छा ही थी। कुलसुम अपने जानते रोकने की कोशिश से बाज नहीं आई। कहा था, 'तुम चली जाओगी, तो मैं कैसे रहूँगी?' मगर वह रहने को कदापि राजी न हुई।

गुलाबी के जाने से मालिक को खास कोई अड़चन न हुई। उसकी सँभाल असल में कुलसुम ही किया करती थी। उसकी कुलसुम से ही बनती थी, उसी पर उसका मान-अभिमान था। मालिक को पाकर कुलसुम भी यह भूल गई थी कि उसका अपना कोई नहीं। अपने पेट के बच्चे-

सा ही वह मालिक को पाल रही थी। इसीलिए मालिक के साथ वह भी असगर के घर आ गई। उसे छोड़ कर पल-भर रहने की भी वह कल्पना नहीं कर सकती थी।

मगर नूरू की माँ को वह उतना नहीं सुहाती। कभी कुलसुम से उसने कुछ कहा जरूर नहीं, पर उसके व्यवहार से ही कुलसुम यह ताड़ गई थी। वह बहुत सँभल कर रहती। पर नूरू की माँ उसे ऐसे-ऐसे काम बताती कि जिसमें मालिक को देखभाल की फ़ुरसत ही न मिले। कभी मौका पाकर मालिक को वह गोद में उठा भी लेती तो फौरन दूसरा हुकुम मिल जाता।

एक दिन मालिक हाँफता हुआ अन्दर आया—'कुलसुम, ओ कुलसुम, पानी पिला, मारे प्यास के छाती फटी जा रही है।' उसके पानी लाने के पहले ही नूरू की माँ वहाँ आ धमकी। उसके हाथ में तरबूजे की एक फाँक थी। बोली, "इस करारी धूप से आकर तुरत पानी नहीं पीना चाहिए बेटे! पहले यह तरबूजा खाओ, इससे प्यास घटेगी।"

नूरू माँ की गोदी में बैठी तन्मय होकर रूपकथा सुनती। जब तब कुछ पूछ बैठती। माँ उत्तर देकर उसकी जिज्ञासा दूर करती। कभी चोरी-चोरी मालिक की तरफ ताकती, उसका मुँह चिढ़ाती। उनके पास जरा देर को बैठने की इच्छा कुलसुम की होती; पर आते ही नूरू की माँ यह-वह पूछने लगती—'यह हो गया या नहीं, कल जो चावल पकेगा, वह बीना गया या नहीं।' लाचार उसे वहाँ से हट ही जाना पड़ता। काम-धाम चुका कर भी आती; तो नया हुक्म सुना दिया जाता। मन-ही-मन वह कुढ़ जाती, लेकिन कुछ कहने का उपाय नहीं था। पिटारे में बन्द साँप-जैसी फुफकारती रहती।

रहा नहीं गया तो एक दिन बशीर से बोली, "चाचा, ऐसा रहा तो मैं तो नहीं चल सकूँगी यहाँ।"

बशीर भला छः-पाँच क्या जाने। बोला, "क्यों, क्या हो गया?"

क्या हुआ है, यह बताना आसान न था। कुलसुम साफ-साफ उसे

कुछ भी न बता सकी। फीका हँसकर बोली, "हुआ तो वैसा कुछ नहीं। मगर उसी से तो सारा बखेड़ा है।" बशीर को यह बुझौवल-सा लगा। वह कुछ समझ नहीं सका।

यहाँ की खोज-खबर रखने का समय भी बशीर को कहाँ था ? वह मालगुजारी वसूलने में ही फँसा था। डाँट कर कुलसुम से पूछा, "खोल कर बता कि क्या हुआ है।"

"खोल कर क्या बताऊँ। तुम तो यहाँ रहते ही नहीं, जानो भी तो कैसे ?"

बशीर के मन में एक ही साथ अनेक प्रश्नों की भीड़ लग गई ! स्वर नीचाकर धीमे से पूछा, "नूरू की माँ मालिक से भला सलूक नहीं करती क्या ? उसे तकलीफ देती है ?"

कुलसुम बोली, "नहीं, यह बात नहीं। वह आठों पहर उसे डाइन की तरह घेरे रहती है। आदर-जतन से उसका दिमाग खराब कर रही है।"

बशीर बोला, "आदर-जतन तो खुशी की बात है। इसमें बिगड़ने का क्या है। तुम्हें गाली-गलौज तो नहीं देती ?"

कुलसुम का दबा गुस्सा अब रोके न रुका। तमक कर बोली, "बुरा-बरताव करती तो मुझे भी कुछ कह-सुन देने की गुंजाइश थी। मगर क्या मजाल कि कोई उसके व्यवहार में खोट दिखा दे ! मगर अन्दर ही अन्दर वह साप-जैसी कठोर है। गिरह-गिरह लपेट रही है, मौका-पाकर काट खायेगी।"

बशीर ने डाँट बताई "जबान सँभाल कर बोल, इतनी भली तो मालकिन मिली है। सुभाव की शान्त, सब को एक नजर से देखना। और तुम उसकी निन्दा कर रही हो। जिसे देखो, वही नूरू की माँ की तारीफ करता है। मालिक तो उसके नाम से मारे खुशी के विभोर हो जाता है।"

अबकी कुलसुम उफन पड़ी। उसके हृदय की छिपी वेदना बाहर

निकल आई। छलछलाती आँखें लिये बोली, "मैं सब जानती हूँ, सब। वह डाईन है! उसने जरूर मालिक पर कोई जादू किया है, नहीं तो जो मालिक मेरे बिना घड़ी-भर भी नहीं रह सकता था वह भूल कर भी कभी मेरी ओर झाँकता तक नहीं। उसे मेरे पास वह आने भी नहीं देती। उसके अन्दर आते ही मुझे इस-उस काम में लगा देती है। गोया मैं महा मूरख हूँ, उसकी यह चाल भी मैं नहीं समझ सकती। जरूर उस डाईन ने मालिक को कोई जड़ी सुँघा दी है।"

बशीर हँसी न रोक सका—"ओ, अब समझा। सारा गुस्सा इसी का है। अरी बेवकूफ, अगर सचमुच ही नूरू की माँ मालिक को इतना ज्यादा चाहती है, तो इसे खुदा का रहम समझना चाहिए। उसके लिए यह गुस्सा तो बेकार है। अगर तुम मालिक की भलाई चाहती हो, तो तुम्हें खुश होना चाहिए। मगर तुम जला करती हो, छिः।"

"मैं जला करती हूँ! या खुदा, यह मैं किससे इन्साफ माँगने गई थी। उस रूपवती मायाविनी को देखकर तुम्हारा भी दिमाग फिर गया है।"

कुलसुम फफक कर रो पड़ी।

बशीर जोरों से हँस पड़ा—"तेरा दिमाग खराब हो गया है। सारी उमर तो गई, अब मौत के दरवाजे पर रूपवती और कुरूपा का विचार करने से मेरा क्या होता है! फिर आज तक तो नूरू की माँ को मैंने देखा भी नहीं।"

थोड़ी देर बाद बशीर ने गम्भीर होकर कहा, "मुझसे जो कहा सो कहा, खबरदार और किसी के आगे ऐसा न कहना। बुरा होगा। खुद सोच देखो, समझ में आयेगा कि तुमने बुरा किया है।"

"हाँ-हाँ, मैं बेवकूफ हूँ, गधी हूँ। मैं उस डाईन से मालिक को बचाना चाहती हूँ, इसीलिए तुम मुझे जो जी में आ रहा है, कह रहे हो। खैर। अब कभी कुछ न बोलूँगी। खुदा करे, मालिक पर कोई मुसीबत न आये।"

कुलसुम अँधेरे में आँखें पोंछने लगी। आगे कुछ कहा नहीं गया। वहाँ से चली गई। बशीर के आगे फिर उसने कभी कोई शिकायत नहीं की; लेकिन उसमें एक परिवर्त्तन आ गया। शायद उसने यह सोचा था कि बशीर उसका कहा मानेगा और मालिक को लेकर फिर से अलग रहने का उपाय निकल आयेगा। मगर जब उसने देख लिया कि बशीर ने उसकी बातों पर कान ही नहीं दिया, तो उसका जी टूट गया। तब से मनमरी हो उठी। स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो गया। सब ने इस परिवर्त्तन को लक्ष्य किया।

नूरू की माँ ने एक दिन असगर मियाँ से सब कुछ कहा। बोली, "कुलसुम विधवा है, कम उमर की। स्वामी नहीं, बाल-बच्चे नहीं। अब तक अपने बच्चे के समान मालिक को पालती आई। मालिक अब बड़ा हो गया। वैसी सयानी लड़की का दामन थामे उसका रहना अब नहीं जँचता। मगर कुलसुम यह नहीं समझती। उसे जरूरत से ज्यादा लाड़ देकर बिगाड़ रही है। इससे बचने का एक ही उपाय है कि कहीं कुलसुम की शादी करा दी जाय। अपनी घर-गिरस्ती होने से वह मालिक को भूल जायगी। तुम कहीं इसकी शादी ठीक करो।"

असगर मियाँ के होंठों पर दबी हँसी की रेखा फूट पड़ी। बोला, "कहने का मतलब यह कि तुम उसे मालिक से अलग रखना चाहती हो?"

नूरू की माँ ने अपना मुँह फेर लिया। हँसी जब्त करके असगर कहता चला गया, "कुछ कहना न पड़ेगा। मैं सब समझ गया। बात भी तुम्हारी सही है। कुलसुम जवान है, उसकी फिर से शादी होनी चाहिए। दूल्हा भी है। पिछले साल अजीज की बीवी गुजर गई है। तीस-पैंतीस की उमर होगी। कुलसुम के लिए ठीक ही होगा। मैं बशीर से कहूँगा, अजीज से वह इस बात का जिक्र छेड़े। कुलसुम से भी पूछ जानकर देख लो, उसकी राय है या नहीं।"

"उसकी राय क्यों न होगी भला। औरत के लिए शौहर और

गिरस्ती के सिवाय गति भी क्या है ?"

उसी दिन साँझ को नूरू की माँ ने कुलसुम से कहा, "कुलसुम, तुम अभी जवान हो। इस उमर में औरत के लिए पति का घर होना जरूरी है। मैंने अजीज से तुम्हारी शादी लगभग पक्की कर ली है। उसके भी कोई बाल-बच्चा नहीं। अच्छा रहेगा।"

बशीर से बातें करने के बाद से ही कुलसुम को शुबहा था कि कोई-न-कोई आफत आने ही वाली है। मगर शादी की बात तो उसकी कल्पना में भी नहीं आई थी। नूरू की माँ ने जो कहा, तो वह चौंक पड़ी। उसके पाँव पकड़ कर रो उठी—"बीबी साहिबा, शादी मैं न करूँगी। आप मुझे यों न निकाल बाहर करें।"

"अरी, यह क्या पागलपन कर रही है; पाँव छोड़ दे। यह बचना मैं खूब समझती हूँ। ब्याह के पहले दूल्हे के नाम से जाने कितनी लड़कियों को मैंने काँपते देखा है। लेकिन ब्याह के बाद ? उसके बाद खसम को छोड़कर एक दिन को भी नहीं रहना चाहतीं। तेरी तो एक बार शादी हो चुकी है, तुझे तो यह सब मालूम होना चाहिए !"

नूरू की माँ कुछ भी सुनने को राजी न थी।

कुलसुम का रोना नहीं थम रहा था—"न-न, मैं शादी नहीं करूँगी, नहीं करूँगी।"

नूरू की माँ बिगड़ उठी। बोली, "यह नखरा ठीक नहीं लगता। जवान है। तुझे पहले ही समझना चाहिए था कि तेरा यहाँ ज्यादा दिन रहना नहीं हो सकेगा।"

जरा देर में नूरू की माँ फिर आई। स्नेह सने स्वर में बोली, "तुझे मालिक को छोड़ जाने में बुरा लग रहा है, क्यों ? अरी पगली, अभी तो खैर वह छोटा है, मगर कब तक वह इस तरह तेरा दामन थामे रहेगा ? तू बेकार की माया न बढ़ा कर अपनी शादी की सोच। अल्लाह के रहम से तेरी कोख फले-फूलेगी और तब तुझे आज के एतराज की सोचकर खुद हँसी आयेगी।"

कुलसुम ने बशीर से भेंट की। बोली, "चाचा, आखिर मेरे ब्याह के पीछे सत्तू बाँध कर तुम लोग क्यों पड़ गये हो। मैं शादी नहीं करती। मालिक को छोड़ कर मैं नहीं रह सकूँगी।"

बशीर ने गम्भीर बन कर कहा, "पागलपन मत कर। अजीज बड़ा भला है, तू सुखी होगी! असगर ने घर के लिए उसे जमीन देने को कहा है। तू यहीं, इसी गाँव में तो रहेगी। जो बहुत बेचैन हो तो जब-तब आकर मालिक को देख लिया करना। एतराज मत कर।"

कुलसुम बड़ी आफत में पड़ गई। उसकी कोई नहीं सुन रहा था। शादी ठीक होगई, दिन भी तै पा गया। औरतों ने उसे दुलहिन-सा सजाया। पर कुलसुम को कोई उत्साह नहीं, गिरा-गिरा-सा मन।

किसी ने तानाकशी की—"अहा, दूल्हे की सोच कर बेचारी सूख कर काँटा हो गई है!"

अजीज की खुशी की इन्तहा नहीं। भरी जवानी, महज साल-भर हुआ कि बीवी मरी है। कुलसुम बीस-बाईस की है, यह उसने सुना है। यह भी सुना है कि देखने में वह अच्छी है। इसीलिए बात उठते ही वह ब्याह के लिए राजी हो गया। शादी के दिन मजे में सजा-सँवरा। असगर की बैठक में स्लीचे पर वह बैठाया गया। शादी की रस्म यहीं होगी। उसकी तरफ का गवाह बना असगर मियाँ। लड़की के गवाह की राह देखी जा रही थी। आप ही तो नहीं आ सकती लड़की। बशीर उसका वकील बना। कुलसुम की राय के लिए वह अन्दर गया। बड़ी देर हुए भी जब वह बाहर न आया तो अजीज जरा चौकन्ना हो गया। खुद दूल्हा था, कहता भी क्या! सो बार-बार कातर आँखों से कभी इधर, कभी उधर ताकने लगा।

कनखी से देकर असगर ने कहा, "शादी-ब्याह का मामला है। जब तक हो नहीं जाता, कोई भरोसा नहीं। अखीर में अगर लड़की राजी न हो, तो किया-कराया चौपट हो सकता है।"

अजीज का मुँह और भी सूख गया। असगर ने यह देखकर कहा,

"छिः-छिः, दुलहे को ऐसा नहीं चाहिए।"

कमिये अजीज से मजाक कर रहे थे—"बेचारे दूल्हे से और नहीं रहा जाता, कहीं अन्त में गुड़ गोबर न हो जाय।"

सभी ठठाकर हँस पड़े। और तो और, असगर से भी बिना हँसे न रहा गया। आखिर बशीर को इतनी देर क्यों हो रही है? एक ने कहा, "झाँक कर लड़की ने दूल्हे की शकल जो देखी सो गश आ गया बेचारी को।"

बड़ी देर बाद बशीर बाहर निकला। असगर के कानों में कहा, "कुलसुम किसी भां तरह राजी नहीं हो रही है!"

असगर मियाँ का चेहरा मारे गुस्से के स्याह पड़ गया। उसने कहा, "इतना होने के बाद अगर शादी न हो सके, तो बेहद बदनामी होगी। मैं जरा अन्दर जाकर देखूँ। उसे राजी होना ही पड़ेगा।"

वकील और गवाह को लेकर असगर अन्दर गया। नूरू की माँ दरवाजे पर ही खड़ी थी। पूछा, "यह क्या हो रहा है आखिर? मैंने तो शुरू में ही कह दिया था कि कुलसुम की भी राय ले लो। मगर कौन जानता था कि तुमने बिसामिल्लाह ही में ग़लती की है! जैसे भी हो, यह शादी करा देनी है। बाद में अजीज समझ लेगा कि उसे कैसे कब्जे में रखना है।"

कुलसुम दुलहिन बनी बैठी थी, सिर झुकाये। सब उसी के सामने आ खड़े हुए। असगर ने कड़ककर पूछा, "यह क्या सुन रहा हूँ मैं? अजीज-जैसा भला आदमी मुश्किल से मिलेगा। तुम्हारी किस्मत अच्छी है कि उससे तुम्हारी शादी हो रही है। तुम राजी हो या नहीं, सो बताओ।"

कुलसुम ने कोई जवाब नहीं दिया। यों भी वह असगर मियाँ के सामने शायद ही होती थी, फिर अभी तो कुढ़ गई थी। बोलने की क्षमता उसकी जाती रही थी।

नूरू की माँ बोल उठी, "चुप्पी के मानी ही कबूल करना है।"

जैसे यकीन न आया हो, असगर ने कहा, "उसे अपनी जबान से कबूल करना पड़ेगा।"

नूरू की माँ हँसकर बोली, "लड़कियाँ अपने ब्याह की बात कभी कर सकती हैं ? सुना है कहीं तुमने ? चुप रह जाने का ही मतलब है कि वह राजी है।"

फिर भी बशीर ने तीन-तीन बार पूछा, "कुलसुम, शादी तुम्हें कबूल है ?"

कुलसुम न तो हिली, न उसने जबान हिलाई। मगर साथ की औरतों ने उसका सिर झुका कर हामी भरा दी।

असगर बोला, "तो तुम सभी गवाह रहीं कि कुलसुम ने बशीर को अपना वकील माना है और निकाह करना कबूल किया है।"

लोग-बाग बाहर निकल गये। दोनों तरफ के गवाहों के सामने दुलहिन के वकील ने दूल्हे की राय ली। सवाल-जवाब खत्म हो चुकने पर असगर मियाँ ने कुरान से सूरा का पाठ किया। ब्याह हो गया। सब खाने-पीने में मशगूल हो गये।

काफी रात गये कुलसुम को आँख खुली, चौंक कर वह बिछावन पर उठ बैठी—'यह कहाँ आ गई मैं ? मेरे बगल में यह सो कौन रहा है ?' सोते समय अजीज का एक हाथ उसके बदन पर आ पड़ा था। उसे सारी बातें याद हो आईं, बड़ी शर्म आई। याद आया कि सबने जबर्दस्ती अजीज से उसकी शादी करा दी है। अजीज भरा-पूरा जवान, आप भी युवती, और शादी जब हो ही गई तो फिर करे भी क्या ? उसने सोचा, यह सब खुदा की मरजी है, और वह करवट बदल कर सो गई।

——आठ

सुबह नींद से उठकर असगर मियाँ बाहर निकला। आसमान की ओर निगाह उठाकर बोला, "हाय अल्लाह, आज भी आसमान पर मेघ का कहीं कोई निशान नहीं।"

रात को सोते समय ही थोड़ी-सी शान्ति नसीब होती। जगते ही सारी दुनिया की फिकर दिमाग में घुस आती। सोच कर किनारा नहीं पाता। जहाँ तक आँखें जातीं, आकाश मेघ हीन; मगर उस नीलिमा में शान्ति नहीं थी, आँखें दुखतीं। अभी-अभी ही तो सबेरा हुआ, लेकिन धूप में कितना तीखापन है! धरती पक कर ताँबे-सी हो गई है, हरियाली का कहीं नाम नहीं। वैशाखी झोंकों का समय कभी का निकल गया, अभी भी धूल के उड़ते गुबारों में सूखे पत्ते और तिनके मानों आसमान का मुँह चूमते हों। खेत फटकर चौचीर हो गये। हल कैसे लगे? पद्मा भी बहुत दुबली हो गई है, मगर तेज धूप में उसकी पतली धार तलवार जैसी तड़प उठती है।

आषाढ़ का महीना। बारिश की बू भी नहीं। असगर मियाँ ने खड़े-खड़े चारों तरफ देखा। अब भी अगर बारिश नहीं होगी तो बीज कैसे बोये जायँगे? समय निकला जा रहा है। दो-ही-चार दिन में वर्षा हो तो हो, वरना खेती चौपट। पिछले दो सालों से सूखा पड़ता आया है। अब की भी फसल न लगे तो किसानों का खुदा मालिक। दो सालों से पूँजी तोड़ कर, औरतों के गहने-जेवर बेंच कर किसी तरह गुजर-बसर हुई है। चोरी, लूट-पाट फिर भी बढ़ गई है। अब की अनाज न हुआ तो हजारों-हजार लोग दानों के लिए तड़प-तड़प कर मर जायँगे।

चोर? असगर मियाँ को हँसी आई। कौन साधु है और कौन चोर है, अल्लाह ही जाने। ऐसी दुर्गत अपनी होती तो वह खुद क्या करता,

पता नहीं। नूरू अगर भूख से रिरियाती होती, उसकी माँ फाके पर फाके करके सूख कर काँटा हो गई होती, तो क्या वह चुपचाप बैठा रह सकता था ? आज जो चोरी कर रहे हैं, कभी वे गृहस्थ थे, खेती करते थे। अब दाने-दाने को मुहताज होकर उन्होंने पराये धन पर हाथ साफ करना शुरू कर दिया है। उनकी बहू-बेटियाँ जंगलों की खाक छान रही हैं। फल-पत्ते जो हाथ आ जाते हैं वही नोच-खसोट लाती हैं। खुद असगर के पास मजूरी के लिए कितने ही लोग आये थे। मगर उन्हें कौन-सा काम दिया जाय ? उसकी भी तो वही दशा है। ग़नीमत है कि उसके कई खेत ऐन नदी किनारे हैं। नदी से उसकी सिंचाई चल सकती है। उन्हीं खेतों को उसने जोता-बोया है।—वहाँ जरा हरियाली के दर्शन हो रहे हैं। उसके सिवाय चारों ओर सूखा। धरती और आसमान के पक्के ताँबे के रंग के बीच यह थोड़ी-सी हरियाली मानों एक परिहास हो।

अकाल का पहला साल जैसे-तैसे गुजर गया। नदी से नहर निकाली, ताड़ के पेड़ का डोंगा बना कर खेतों को पटाया, जानें क्या-क्या किया, फिर भी जैसा चाहिए नतीजा न निकला। इतनी मशक्कत से महज बीज और दो माह की खूराक जुट सकी !

सबको यही भरोसा था कि अकाल सदा नहीं रहता। अधभूखे और भूखे रहकर भी वे आने वाले अच्छे दिन की उम्मीद पर ज़िन्दा थे। बच्चे लेकिन इस मुसीबत को क्या समझें ? भूख से खुद रोते, माँ-बाप को रुलाते। माताओं पर ही मुसीबतों का पहाड़ था। कितने ही बहाने बनाने पड़ते थे उन्हें। किस-किस उपाय से रोते-बिलखते बच्चों को भुलाना-फुसलाना पड़ता। मुट्ठी-भर चावल को पूरी हाँड़ी माँड़ बना कर बच्चों को खिला-पिला देतीं। बढ़ने वाले बच्चे, उतने से उनका भला क्या हो ! 'और-और' की रट लगाते, रोते-पीटते। बेबस माँ बिलख पड़ती, या कभी-कभी जल-भुन कर उन्हें मार भी बैठती। पिट कर बच्चे और भी रोते, चीखने लगते। मर्दों में कोई अब जवान नहीं रह गया।

दिहाड़ी से पंजर की हड्डियाँ उभर आईं। लगता कि जिन्दा कंकाल चल-फिर रहे हैं। सब नसीब को कोसते और अल्लाह से फरियाद करते—'या खुदा, यह तेरी कैसी मरजी !'

दूसरा साल और बुरा गुजरा। अधपेट रह-रहकर किसान एक तो यों ही टूट गये थे, फिर सूखा पड़ने से उनकी हालत बदतर हो गई। फिर भी जीवन का मोह। अधमरे होकर भी खेतों को जाते, जी तोड़ कोशिश करते, किसी तरह अगर कुछ दानों का ठिकाना किया जा सके। बैशाख की शुरूआत में बारिश के कुछ छींटे पड़े। लोगों ने समझा, खुदा की मेहरबानी हुई। इस बार मुसीबत जाती रहेगी। दुबली देह और रोगी बैल लिये लोग खेतों में जा जुटे। जमीन तैयार रखी जाय! आशा-निराशा में झूलते हुए सब हर समय आकाश को ताकते। मगर कहाँ बारिश ? कभी-कभी आसमान पर बदली की हलकी रेखा दीख पड़ती, मगर हवा के झोंकों से दूसरे ही दम काफूर हो जाती। पच्छिम से झुलसाने वाली हवा के गरम झोंके आते। बारिश की रही-सही उम्मीद पर भी पानी फिर गया। धरती का सारा रस निःशेष हो गया। घास-पत्ते झुलस गये। पेड़ सूख कर लकड़ी हो गये। चारा न पाकर मवेशी धुकधुकी लिए जिन्दा थे।

लाचार बहुतों ने गुहाल के जानवरों को जिबह करना शुरू किया। अपने को ही दाना नसीब नहीं, फिर उनकी खूराक कहाँ से जुटाई जाय? यों भी उन्हें मारना ही है। उनके गोश्त से दो-चार दिन अपनी जान बचा लें। अच्छे दिन अगर देखना नसीब हुआ तो जानवर भी फिर हो जायँगे।

पहले साल असगर मियाँ को लेकिन वैसी तकलीफ न हुई। पास में पैसे थे और जो खेत नदी किनारे थे, उनमें थोड़ी फसल भी हुई थी। बाहर से दस-बीस मन अनाज मँगा कर किसी तरह से गुजारा किया। दूसरे साल तकलीफ ज्यादा हुई। आसपास की कौन कहे, धुलदी के बाजार में भी दाना मिलना मुश्किल हो गया था। और कहीं से मँगाने

पर बाजार तक अनाज पहुँच सकने की संभावना भी न थी। रास्ते में ही लूट हो जाती। एक व्यापारी ने अनाज की नाव लेकर धुलदी आने की कोशिश की; मगर न तो वह नाव वहाँ पहुँची, न व्यापारी। उनकी कोई खबर भी न मिली। जाने वे कहाँ गुम हो गये। लोगों की निगाह में सिर्फ इतना ही आया कि चौर में लठैतों की जमात के लोग काफी तन्दुरुस्त हो गये।

अकाल का यह तीसरा साल था। अब हल-बैल ही कितने लोगों के रह गये थे ? लेकिन जो भी था, उसी को लेकर लोग खेती में जुट पड़े थे। जब तक साँस, तब तक आस। आखिर अच्छे दिन आयेंगे ! खेतों की गोद फिर सोने की फसल से भरेगी।

एक बोरा चावल के लिए लोग पानी के मोल जमीन बेचने को आमादा। लेकिन खरीदे कौन ? बरतन-भाँड़े, घर-द्वार, गाय-बैल यहाँ तक कि लोग बहू-बेटी बेचने को भी तैयार। बेचने को तो सब तैयार, पर खरीदने वाला कहाँ ? असगर के पास लोगों की भीड़ आती--'मुखिया, कुछ चावल दो।' असगर उन्हें गोला खोलकर दिखाता, गोला खाली पड़ा था। किसी को यकीन आता, किसी को नहीं। कहीं छिपा कर रख दिया होगा ! असगर उनके मन की बात समझता, पर चुप रह जाता। कुरता उतार कर उनके आगे नंगे बदन खड़ा हो जाता। सब को साफ दीखता कि भूख के मारे उसके पंजर की हड्डियाँ निकल आई हैं, छाती की हड्डी एक-एक कर गिनी जा सकती है। एतबार न करने वालों को शरम आती। वे चुप लौट जाते।

लाख तकलीफ हुई, पर असगर ने अपने बैलों का जोड़ा नहीं बेचा, न जिबह किया। गुहाल के बाकी जानवरों बकरी-भेड़ सब को या तो बेच दिया था या काट कर खा गया था। बैलों को जीते जी बेचना मुश्किल था। भूख से बैलों का भी बुरा हाल था, ठठरियाँ बच रही थीं उनकी।

असगर ने कमजोर आवाज से मालिक को पुकारा। चौदह का हो गया है। मगर देखकर पहचानना मुश्किल है कि यह वही मालिक है।

दस की उमर में उसके चेहरे पर जो दमक थी, वह नहीं है। भरा बदन, फूले गाल आज सूख कर लकड़ी हो गये हैं। भूखे रहने से बाढ़ भी जाती रही। तिलमिलाता हुआ वह असगर के सामने आकर खड़ा हो गया।

सूखे कंठ से असगर ने मानो अपने ही तईं कहा, "वर्षा की कोई उम्मीद नहीं। हाँ रे मालिक, बशीर लौटा ?"

"नहीं तो।" मालिक ने किसी तरह उत्तर दिया।

काँपती आवाज में असगर ने फिर पूछा, "अभी तक नहीं आया ? दस दिन निकल गये; पता नहीं, उसका क्या हुआ !"

असगर ने मालिक की ओर ताका, देखूँ, वह क्या कहता है। कमजोर मालिक को बोलने की इच्छा नहीं हो रही थी और वह बोलता भी क्या ?

असगर बोला, "कुछ तो बता बेटे, मुझसे तो और नहीं रहा जाता।"

उसके मुँह की बात मुँह में ही रह गई। वह पगडंडी की ओर ताकने लगा। उसकी देखा-देखी मालिक भी उसी ओर ताकने लगा। सामने से कुछ लड़कियाँ गाती हुई आ रही थीं। उन सबके आगे नूरू थी। गीत के बोल कुछ-कुछ समझ में आ रहे थे। सब बारिश बुलाने के गीत गा रही थीं। मेघ की दुहाई दे रही थीं, बादल बुला रही थीं।

मालिक नूरू को देखकर खुश हुआ। बोला, "ये लड़कियाँ वर्षा लाने के गीत गा रही हैं।" लेकिन असगर के चेहरे पर जो नजर पड़ी तो वह डर से चुप हो गया।

असगर का चेहरा बादल के समान अँधेरा हो उठा था, कहने लगा "अगर गीत और मन्तर से ही बारिश आती तो लगातार तीन-तीन साल मारा ही क्यों पड़ता। एक तो ये लड़कियाँ भूखों रहकर यों ही दुबली हो गई हैं, ऊपर से यह जहमत क्यों ?"

लड़कियों के माथे पर बधना था। असगर बढ़ा। नूरू के माथे पर

से बधना उठाकर उसने पटक दिया। लड़कियाँ और औरतें रो उठीं। सगुन का बधना पटक दिया, जाने क्या अमंगल हो! उनका रोना सुनकर असगर का गुस्सा और तेज हो गया—'ले, और गीत गा, खूब गा। वर्षा उतरेगी!' कुछ और भी कहने जा रहा था कि नूरू के चेहरे पर नजर पड़ी। कोमल स्वर में बोला, "भूख से तुम लोगों का यों ही बुरा हाल है, फिर यह परेशानी क्यों मोल ले रही हो?"

"अब्बा, तुमने बधना तोड़ दिया। उससे तो हम लोगों का अमंगल होगा।"

"तू नाहक ऐसा सोचती है बिटिया! इन गीतों और मन्तर की कीमत एक कौड़ी नहीं। होती तो लगातार आकाल क्यों पड़ता, क्यों बारिश नहीं होती। इन टोटकों से जब कोई मंगल नहीं हो सका, तो अमंगल भी नहीं होने का।"

असगर ने नूरू को छाती से लगा लिया। नूरू फफक-फफक कर रोने लगी।

दूसरी लड़कियाँ भाग गईं। क्या ठिकाना, असगर उनके बधने भी तोड़ दे।

खुदा की कुदरत, उसी रात बारिश उतरी। साँझ से ही आसमान में बादल घिर आये। बड़ी उत्कंठा लिए लोग आकाश की ओर ताकते रहे। घोर काले बादल! दो साल की कड़ी धूप के बाद उसकी श्यामलता से आँखें जुड़ा गईं। काली कसौटी-जैसे मेघ, उनके बीच जब-तब बिजली की खिंचती कनक-रेखा। सहसा पूरब से हवा का झोंका आया, उसी के साथ चीख उठी पद्मा। हजारों अजगरों के माथे पर मानों माणिक की जगमगाहट, अँधेरे में नागों का गर्जन। पानी पर काजल काले मेघ की छाया उतर आई।

आसमान के एक से दूसरे छोर तक आँखों को चौंधिया कर बिजली खेलने लगी। बिजली की बारम्बार कड़क ने पद्मा की गोद में नये जीवन की सुगबुगाहट पैदा कर दी। दिशाएँ धूल से भर गईं। वज्र का निनाद

पद्मा के तटों पर टकराता फिरने लगा।

और बारिश उतरी। बड़ी-बड़ी गरम बूँदें। आकाश का कैसा हृदय-विदारक होना! दो साल से रो न पाया था, इसलिए आसमान की छाती पत्थर हो गई थी। आज वह पत्थर पिघल कर बाढ़ बह आई।

शुरू में बूँदा-बाँदी, फिर तेजी बढ़ती गई। तीन साल की प्यासी धरती की छाती से गरम उसाँस निकलने लगी। चारों ओर कैसी सोंधी खुशबू! बूढ़े, बच्चे, जवान—सब बाहर निकल पड़े। बरसते पानी में वे नई जिन्दगी ढूँढ़ने लगे।

सारी रात झमाझम पानी बरसा। सूखे ताल-तलैया, खाई-खंदक भर गये। राह-बाट में पानी बहने लगा। धूल और बालू मिल गये। सूखे पेड़ों पर हरियाली का आभास झाँकने लगा। ग्रीष्म का ताप गया, सजल स्निग्धता आई। मगर बारिश रुकी नहीं। चार दिन और चार रात अविराम वर्षा! प्यासी धरती पानी के लिए तड़प उठी थी, लोग बाग पानी के लिए बेचैन हो उठे थे, किन्तु ऐसा प्लावन तो नहीं चाहा था किसी ने! घाट-बाट, नदी, गाँव की सरहद—सब पानी से भर गये! गाँव के घर-द्वार बह जाने की नौबत आ गई!

चौथे दिन की रात बारिश की तेजी और बढ़ गई। साथ ही हवा के जोरदार झोंके। कूलों से उफन कर राक्षसी पद्मा गाँव में आ धमकी। पानी के वेग से सारा गाँव काँपने लगा। घर-द्वार के टिकने की उम्मीद न रही। अँधेरे के साथ-साथ बाढ़ का पानी भी बढ़ने लगा। सब ने समझ लिया, रात कटना मुश्किल है। मर्द घरों से बाहर निकले कि और कहीं पनाह मिल सके। बच्चों को छाती से चिपकाये औरतें बाहर निकल आईं। दब कर मरने से तो उन्हें बचाया जा सकता है, पर इस सर्वग्रासी बाढ़ का क्या किया जाय? चारों ओर देख कर सोचने लगे, जायें कहाँ? जिधर देखो, पानी और पानी। वेगवान प्रवाह का हाहा-कर। पानी ही पानी। केवल पेड़ों की फुनगी ऊपर थी, बाकी सब पानी में डूब गया था। जिनसे बन सका, सामने जो मिला, वही लेकर नाव

पर सवार हो गये। कोई छप्पर पर जा चढ़े। मवेशी की लाशें पानी के स्रोत में उतराती बह रही थीं।

आखिर सवेरा हुआ। कालरात्रि कट गई। कल जहाँ जीवन से भरा पूरा गाँव था, आज वहाँ उजाड़ है। घर द्वार का नामोनिशान नहीं। सारे पुराने चिह्न गायब। पानी पर केले के धड़ जैसी कुछ नावें तिर रही थीं। ऊपर मेघमुक्त आकाश, और छोर हीन। नीचे पानी का अनन्त विस्तार। प्रकृति के उस समारोह में मनुष्य की सारी निशानियाँ मानों लुप्त हो गई थीं।

मालिक, नूरू और नूरू की माँ को लेकर असगर मियाँ ने एक नाव पर शरण ली थी। बाढ़ के हाथों से प्राण के सिवा और कुछ वह न बचा सका था। जाने कितने आँधी-तूफान झेल कर असगर मियाँ ने अपना सिर ऊँचा रखा था। आज वही असगर इस मुसीबत से जैसे टूट गया।

भय भरी निगाह से नूरू बाप की ओर ताकने लगी। उसकी जिन्दगी में ऐसी घटना कभी नहीं घटी थी। उसे अभी भी यकीन नहीं आ रहा है कि यह क्या हो गया! बाप पर उसे बहुत बड़ा विश्वास था। जो चाहे हो, जब तक वह बाप के साथ है, कोई डर नहीं।

नूरू की माँ लेकिन पस्त हो गई। यों भी वह बड़ी दुर्बल हृदया थी, सदा स्नेह-जतन के आसरे रही। आज कुदरत के इस कारनामे से वह लस्त-पस्त हो गई।

इस मुसीबत में मालिक ने बल्कि नई शक्ति और नया साहस पाया। भूख से वह मायूस जरूर था, पर मर्द इतने ही से पस्त नहीं हो जाते। उसने बार-बार असगर को दिलासा देने की कोशिश की कि 'चाचा, सोचने से क्या हाथ आता है? तुम्हीं तो बार-बार कहा करते हो कि नदी का एक किनारा टूटता है, दूसरा बनता है। खाली हाथों यहाँ आये थे। अपनी मेहनत-मशक्कत से तुमने इतना कुछ किया था यहाँ। घर-द्वार फिर खड़े हो जायँगे? फिक्र क्यों?'

इस मुसीबत में भी असगर की हँसी न रुकी। गहरे स्नेह से उसके माथे पर हाथ फेरते हुए असगर ने कहा, "तू बिलकुल ठीक कहता है बेटे, मगर एक बात तू भूल रहा है। तेरी नई जवानी है, तुझमें आशा और उत्साह बेहद है, तुझे ही यह कहना सोहता है। मगर इस बुढ़ापे में मुझमें इतना साहस कहाँ? फिर भी तेरा कहना दुरुस्त है, रोकर क्या होगा। अल्लाह जो करते हैं, भले के लिए करते हैं, यही सोच-कर फिर से नई दुनिया बसाऊँगा।"

घर-द्वार, पूँजी-पट्टा सब कुछ पद्मा चट कर गई। जहाँ घर था, वहाँ अगाध पानी उमड़ आया। मगर इतना ग्रास करके भी मानों उसकी भूख नहीं मिटी, अभी भी भूखे अजगर की तरह फुफकार रही है।

लम्बी साँस छोड़ कर नूरू की माँ बोली, "तेरी यही इच्छा थी अल्लाह! फिर से नई गिरस्ती बनानी होगी!"

बहाव में नाव बढ़ती गई। सूरज की किरण फिर से दमकने लगी।

* * *

नूरू और मालिक

एक छोटे-से टीले पर खड़े होकर मालिक समुद्र देख रहा था। बात कई साल पहले की है, जब बाढ़ से घर-द्वार बह गये थे। पद्मा की राह नाव से जाकर असगर मियाँ ने नई जगह नये सिरे से संसार बसाया। तब मालिक की उम्र चौदह-पंद्रह की थी। उसने शैशव पार कर किशोरावस्था में प्रवेश किया था। अब वह उन्नीस साल का नौजवान है। मर्में भींग रही हैं।

कैसी-कैसी मालिक बीते दिनों को याद करने की कोशिश करता। पद्मा के तट पर नहर के किनारे उनका घर था। गाँव में होते हुए भी गाँव से जरा अलहदा। सारी बातें याद भी नहीं आतीं; जो आतीं, लगता, यह युगों पहले की किसी सुदूर अतीत की बातें हैं। अकाल के अन्त में बाढ़ आई। नदी और वर्षा का पानी एकाकार हो गया। उसमें घर-द्वार जाने कहाँ गायब हो गये। रात-दिन नाव पर भूखे, अधपेट, कभी-कभी तकलीफों से गुजरे! आज वे बातें सुबह के दुःस्वप्नों की स्मृति सी लगती हैं।

रात का भय और रात की विभीषिका सुबह की ज्योति में जाने कहाँ खो गईं। मालिक छुटपन की बातें सोच रहा था, उसकी भी जिन्दगी कैसे विचित्र अनुभवों से भरी है। जिन्दगी के बीस साल भी तो नहीं

गुजरे; इतने छोटे-से अरसे में इतना दुःख और इतना सुख कौन बटोर पाता है? दुःख उसने बेशक पाया, पर आज वे सारे दुःख सार्थक लग रहे हैं। इन आँधी-पानी, आपद-विपद के बाद आज उसके जीवन में सुख का अन्त नहीं। उसने प्यार करना सीखा है, उसे प्यार मिला है।

वह प्यार करता है—यह विचार भी कितना अच्छा लगता है। सुख के आवेश में उसकी दोनों आँखें झिप आतीं। अधमुँदी आँखों से वह समुद्र को ताकता रहता। कितनी सुन्दर है यह धरती! समुद्र में लहरों का चढ़ाव-उतार है। संसार के ये सुख-दुख समुद्र की इन लहरों-जैसे ही तो हैं। आँधी में सागर की लहरों पर मौत की झाँकी होती है, पर जो उस आँधी को जीत कर किनारे जा पहुँचते हैं, उन्हें वह मुसीबत आनन्द ही देती है। मालिक के जीवन में ऐसे आँधी-तूफान आते ही रहे हैं। अब उन झमेलों के बाद स्निग्ध शान्ति से उसका मन भरपूर हो उठा है। यह सवेरा कितना सुन्दर है, कितना मधुर! दूर पर दो-एक पाल-वाली नावें जा रही थीं। गँगचील लहरों पर तैर रहे थे, लहरों से ही मानों उनका खिलवाड़ हो।

बचपन की एक-एक झाँकी याद आने लगी। बाप की, दादी की याद आते ही विषाद से उसका मन भर जाता। वह सोचने लगता, बाप और दादी ही उसके सबसे अपने थे। मगर आज उनकी सूरत भी ठीक-ठीक याद नहीं आती। जो इतने पास रहे, इतने प्रिय रहे, उनकी याद विस्मृति के अतल में डूबती जा रही है। बाप की तसवीर तो लगभग भूल ही गई है। दादी से वह ज्यादा हिला था, उसकी भी तसवीर धुँधली हो आई है। मगर एक तसवीर वह कभी भी नहीं भूल सकेगा। आधी रात में आँख खुले दादी को बिस्तर से गायब पाकर जार-बेजार रोना, और बाद में पद्मा के घाट में उसकी उतराती लाश—यह तसवीर मालिक के मन में अमिट अंकित हो गई है। जब तक जिन्दगी है, यह तसवीर नहीं मिटेगी, म्लान नहीं होगी।

कभी-कभी गुलाबी और कुलसुम की भी याद हो आती। कहाँ हैं

आज वे ? अकाल, बाढ़, महामारी—एक पर एक मुसीबत आती रही। मौत के इन फंदों से बचकर वे जिन्दा भी हैं या नहीं, पता नहीं। बूढ़ा बशीर, उम्र के बोझ से उसकी कमर झुक आई थी। चलते हुए पाँव काँपता था। मगर नाव पर बैठकर पतवार पकड़ते ही बुढ़ापा जानें कहाँ काफूर हो जाता! उस समय उसे देखकर यह कौन कह सकता कि उसकी उम्र चार बीस की है ? वह बशीर ही आज कहाँ है ? खैर, जो हुआ, अच्छा ही हुआ। पद्मा को वह प्राणों से ज्यादा प्यार करता था, पद्मा ने भी उसे अपने हृदय में खींच लगाया।

उसे बाढ़ के दिनों की याद आने लगी। उफ्, कैसी बारिश, मानों आकाश टूट पड़ेगा। और पानी का जोर कितना। नदी और वर्षा का पानी एकाकार हो गया और सदा की जानी-चीन्ही धरती उसमें घुल गई! खूँखार पद्मा पर एक मामूली-सी डोंगी लिये वे निकल पड़े थे। ये सारी बातें क्या कभी भुलाई जा सकती हैं ? तब नूरू महज नौ-दस साल की थी, किन्तु उसी उम्र में उसने किस साहस से सारे दुःख-कष्टों को झेला।

सब गँवा-गँवूँ कर असगर मियाँ बशीर की खोज में निकला। बशीर मालगुजारी अदा करने के लिए नाव से पद्मा पार करने गया था। उस पार जाते ही असगर को खबर मिली कि कल तूफान से पहले ही बशीर घर के लिए वहाँ से चल पड़ा था। तब से उसका कोई सुराग नहीं मिला। पद्मा में ही उसने अपनी आखिरी सेज बिछाई!

भूखे और उनींदे रह कर वह समय कैसे गुजरा, भला मालिक इसे भूल सकता है ? आज यही सोचकर अचरज होता है कि वे जिन्दा कैसे रह गये। भूख से जो तकलीफ और बेचैनी हुई, मौत की तकलीफ क्या उससे भी ज्यादा होती है ? न घर रहा, न द्वार। कहीं सिर छिपा सके, ऐसी भी जगह न रही। कभी आधा पेट भोजन नसीब होता, कभी वह भी नदारद। मालिक ने अपनी आँखों देखा कि नूरू की माँ अब मरी, तब मरी हो गई थी। उसे दाना नसीब न हो रहा था। यह दर्द तो था

ही, उससे भी ज्यादा कष्ट उसे इस बात का था कि स्वामी भूखे रहते हैं, बच्ची दानों की मुँहताज है, मालिक भूखों रहकर दिन-दिन दुबला हुआ जाता है। वह इतना शारीरिक और मानसिक कष्ट न झेल सकी। शरीर टूट गया, चलने-फिरने की शक्ति जाती रही। कालाजार से उसने जो खाट पकड़ी, सो फिर नहीं उठी।

दुःख के उन दिनों एक नूरू ही सबकी खुशी का सहारा थी। बड़ी ही कितनी थी वह ? उसकी उमर ही क्या थी ? फिर भी सारी गिरस्ती उसने बेखटके अपने माथे उठा ली। पक्की गिरस्तिन की तरह उसने घर गिरस्ती सँभाली और रोगी माँ की सेवा का भार लिया, दुःखी पिता को भरोसा देती रही।

दुःख की काल निशा नहीं रहती। आखिर उनके दुःखों का भी एक दिन अन्त हुआ। असगर मियाँ को पता चला कि पद्मा और मेघना के मुहाने पर नया चौंर निकला है। नई मिट्टी निकली है। जो भी वहाँ जाता है, उसे खेती की जमीन और रहने की भूमि मिलती है। दल-के-दल लोग उधर ही चल दिये। असगर भी उन्हीं लोगों में जा मिला। वहाँ देखा कि जगह पद्मा-मेघना के मुहाने पर न थी, बल्कि चौंर समुद्र के पास वहाँ निकला था, जहाँ दोनों नदियाँ मिल कर समुद्र में जा गिरती हैं। एक तो नई मिट्टी, ऊपर से सागर के खारे पानी की गन्ध। लोग वहाँ बसना नहीं चाहते। लिहाजा जमींदार ने सलामी भी उठा दी थी। सलामी देकर वैसी जगह-जमीन ले भी कौन ? जमींदार ने रैयत बसाने की गरज से लोगों को अपनी तरफ से हल-बैल की भी मदद दी। पहले साल की मालगुजारी भी माफ कर दी गई।

असगर ने मिट्टी पर गौर किया। नई मिट्टी देख कर आँखें जुड़ा गईं। लहमे में उसने मन में संकल्प कर लिया—वह वहाँ रहेगा। इस अजाने इलाके में, अचीन्हे लोगों के बीच, नये सिरे से अपनी जिन्दगी शुरू करेगा।

तै तो उसने कर लिया, पर मालिक का कोई ठिकाना किये बिना

उसकी रिहाई कहाँ ? उसका उसने भार उठाया था। उसने मालिक से पूछा, "तू मेरे साथ यहाँ रहेगा या अपनी पुरानी जगह रहकर उसी जमीन के उद्धार की कोशिश करेगा ?"

मालिक ने असहाय की तरह असगर को देखकर कहा, "तुम क्या मुझ पर नाराज हो चाचा ?"

अचरज से असगर ने पूछा, "नाराज क्यों हूँगा बेटे. "

मालिक बोला, "फिर ऐसा क्यों कहते हो चाचा ? तुम जानते हो कि दुनिया में मुझे अपना कहने को कोई नहीं। अब्बा नहीं रहे, दादी न रही। उन सबके गुजर जाने के बाद बशीर मेरी देख-भाल करता था। वह भी चल बसा। बरसों से मैं तुम्हारे यहाँ हूँ। चाची मुझे माँ की तरह प्यार करती है, नूरू सहोदरा-सा नेह करती है। अब मैं तुम सबों को छोड़कर कहाँ जाऊँ ?"

असगर ने सोचा, 'लड़का दुरुस्त कहता है। वह परिवार का एक अंग हो गया है। हमें छोड़ कर कहाँ जाय ?'

नई जगह भली तरह बसने के पहले ही भाग्य ने असगर पर आखिरी वार किया। नया मकान तैयार होने के पहले ही नूरू की माँ उसे छोड़ गई। तन्दुरुस्ती तो उसकी पहले ही जाती रही थी। किसी कदर दुनिया सँभाल रही थी। लेकिन नई गिरस्ती का झमेला वह न झेल सकी। दुःख-शोक से जर्जर हो गई थी बेचारी। कब्र में उसके सारे दुःखों का अन्त हो गया।

माँ के शोक से नूरू पस्तहिम्मत हो गई। लेकिन जब उसने देखा कि अब्बा का भी हाल बदतर है, तो अपना दुःख छिपा कर वह असगर को भरोसा देने लगी। गिरस्ती के काम-काज देख तो वह पहले से ही रही थी, अब वही घर की मालकिन हो उठी। पिता की गिरस्ती में ही उसका सारा समय गुजर जाता, अपना दुःख देखने की फुर्सत नहीं मिलती। कोमल, कच्चे हृदय में शोक ज्यादा दिनों तक रह भी नहीं सकता। जानें कब दुःख की गहरी रेखा भी मिट जाती है।

यहाँ आने पर शुरू-शुरू किस कदर मशक्कत करनी पड़ी थी ! झाड़-

झँखाड़ साफ-सुथरा करके खेती के लिए जमीन तैयार करना हँसी-खेल नहीं ! जवानी के दिनों असगर एक बार ऐसा कर चुका था। पद्मा के किनारे ऐसी ही कड़ाचूर मेहनत से उसने रहीमपुर की बस्ती बसाई थी। तब की बात ही और थी। उठती जवानी थी, नज्जू मियाँ जैसा साथी था और सबसे बड़ी बात थी कि दल का सरदार रहीम बख्श था। रहीम जैसा मिजाज और दरिया दिल कै लोगों के होता है ? आज वह सरदार नहीं है। संगी-साथी जो थे वे या तो दरगोर हो गये या निकम्मे हैं। अपनी भी उसकी उमर हो आई। बुढ़ापे ने शरीर को तोड़ दिया है। फिर भी किस कदर मेहनत की है उसने यहाँ ! मालिक की उम्र निहायत कम थी, मगर वह असगर के साथ बराबरी से काम करता रहा। बाहर-बाहर ये दोनों एड़ी-चोटी का पसीना एक करते रहे और गिरस्ती अकेली नूरू ने सँभाली।

चौंर समंदर में से निकला था। इस माटी में एक खास बात थी। साल गुजरते-न-गुजरते घास-पौधे और एक खास किस्म के झाऊ से जमीन भर गई। उस जंगल को साफ करना पड़ा। जंगल की लकड़ी और सन से घर खड़ा करना पड़ा। यह सब कुछ अपने ही हाथों करने की नौबत आई। शुरू शुरू कमिये-मजूरे मिलना मुश्किल था। आखिर घर-द्वार छोड़ कर जो इतनी दूर आये थे, वे औरों के यहाँ मजूरी करते भी क्यों; वे आये थे अपनी जमीन के लिए। इसलिए सुबह से साँझ तक असगर और मालिक खेतों में काम करते। दोपहर को घर जाकर नहाये-धोयें, दो मुट्ठी अन्न मुँह में डालें, इतना भी समय नहीं था। नूरू अकेली रसोई सँभालती। पका-चुका कर थाली खेत ले जाती। खेत के किनारे बैठ कर असगर और मालिक वहीं खाते।

दोपहर को सूरज जब ठीक माथे पर चढ़ आता तो अँगोछे से पसीना पोंछ कर असगर कहता, 'अब नूरू आ रही होगी, आने का समय हो गया।' इतना कहते ही पगडंडी पर दूर नूरू की मूर्ति दिखाई देती। दस-ग्यारह साल की छोकरी, माथे पर थाली-कटोरा लिये, धीमे-धीमे असगर

के सामने आ बैठती। दस्तरखान बिछा कर उन्हें जतन से खाना खिलाती। खाना खत्म करके मालिक चिलम चढ़ाने लगता और नूरू झूठे बर्तन सँभालने लगती।

इस मशक्कत में भी एक आनन्द था। असगर की आँखों के आगे एक नई दुनिया बस गई। उसके दिन लौट आये। पहले ही साल जो फसल आई, उतनी फसल उसने अपनी जिन्दगी में कभी नहीं पाई थी। घास बेंचकर जो मुनाफा आया, उसने उसने इजारे पर और भी जमीन ली। घर बनाने में खर्च नहीं-सा ही लगा। खंभे जंगल से काट लाये, सन को छौनी कर ली। असगर बना कारीगर, उसकी फरमाइशें पुराते रहे नूरू और मालिक।

दिन जाने लगे। चार-पाँच साल कब निकल गये, असगर को भी पता न चला। उसकी हालत पहले से भी अच्छी हो गई। जमीन-जायदाद ज्यादा हो गई। फिर तो कमिये-मजूरे के बिना गुजर न था। सुन-सुनाकर उसके बहुत-से पुराने आदमी भी आ पहुँचे। कभी-कभी असगर को लगता, बाढ़ की बात महज सपना है। उसके दिन रहीमपुर ही में मजे से कट रहे हैं।

बाहर असगर दस गाँवों का मुखिया था और घर की सर्वेसर्वा थी नूरू। मालिक की क्या बिसात, असगर भी उसकी बातों पर उठता बैठता था।

सुबह के शान्त वातावरण में टीले पर खड़ा मालिक दूर समुद्र की तरफ ताकता रहा। उसके हृदय को एक प्रगाढ़ शान्ति मिली। वह आप अपने मन में बोल उठा—'अल्लाह मेहरबान!'

——एक

कमरे में नूरू अकेली बैठी थी। पंद्रह पार कर सोलहवें साल में कदम रखा है। सारे बदन में नये यौवन का आभास। अब वह बालिका नहीं रही। कैशोर और यौवन की इस संधि-वेला में उसके अंगों में लावण्य की बहार देखते ही बनती है। अपने इस आकस्मिक परिवर्तन पर वह खुद ही अवाक् है। कभी तो मन अनायास खुशी से खिल पड़ता और कभी अचानक घिर आती है विषाद की छाया। उसका यह परिवर्तन सब की निगाह में आ गया है, केवल असगर की आँखों में नूरू आज भी वही है। वह सोचता, आज भी नूरू उसकी वही दस साल की माँ-विहीना बच्ची है। माँ को खोकर बाप के ही स्नेह पर एक मात्र निर्भर वह लड़की अपने अनिपुण हाथों बाप की गिरस्ती चलाने की जी-जान से कोशिश करती। नूरू की घर-गिरस्ती चलाना देख असगर को हँसी आती।

नूरू में जो रूपान्तर आया, वह किसी की नजर से छिपा न रहा। छिपे भी कैसे ? उसमें ऐसा आमूल परिवर्तन हो गया कि छिपाया जा नहीं सकता। पहले बात-बात में उसकी बातों की बाँसुरी-सी बज उठती थी। हँसी शुरू हो जाय तो रुकने का नाम नहीं। अब उसकी हँसी नहीं सुनी जाती। क्वचित् ही होंठों पर अचानक आती है और वहीं अचानक खो जाती है। दौड़े बिना पहले वह चलती न थी, अब उसकी चाल धीर-मंथर हो आई। उसे खुद भी नहीं पता कि गले की आवाज कोमल कब हो गई। पहले वह लापरवाह थी। हँसी-खुशी से भरा मन। अब उसका चित्त हरिणी-जैसा चकित हो उठा है। कब किस मामूली बात पर उसके होठों की हँसी आँसू से धुल जाती, वह आप भी नहीं जानती।

नूरू के इस परिवर्तन से सबसे ज्यादा कठिनाई मालिक को हुई है।

छुटपन से नूरू उसके खेल की संगिनी रही है। चेहरे के भाव देखकर ही वह सदा नूरू के मन की बात ताड़ जाया करता था। लेकिन यह क्या, अब तो नूरू कुछ कहती भी है तो मालिक समझ नहीं पाता कि आखिर उसका मतलब क्या है। नूरू को देखने की ललक होती है, दो बातें करने को जी मचलता है, पर पास जाने पर नूरू के बात नहीं फूटती, वह आप भी बोल नहीं पाता। उसके मन की अब थाह नहीं मिलती। जो कहने-करने से उसे खुशी होनी चाहिए, उससे नूरू की आँखें गीली हो आती हैं। सो क्या कहते क्या कह बैठे, इस डर से मुँह की बात ही चुक जाती। नूरू के मन में यह किस नई दुनिया की झाँकी है, मालिक को इसका कभी पता भी चल सकेगा! इतनी सारी बातें वह साफ-साफ सोच नहीं सकता। गाँव के नौजवान के मन में ऐसे विचार आ भी कहाँ से सकते हैं! किन्तु किशोर-किशोरी के हृदय का जो आकर्षण है, वह तो चिरन्तन है। इसलिए अजाने इतनी बातें जो उसके मन को मथती, उनकी उसे खुद भी खबर नहीं होती।

धान काटने के दिन थे। आसमान के कोने-कोने हेमन्त की सुनहली आभा। दीप्ति से लोगों का मन जुड़ा जाता। निदाघ के दारुण ताप के बाद आसाढ़ की श्यामल छाया, सावन की अविराम वर्षा। शरत् के शुष्क मेघ और उत्ताप गये—आकाश-वातास में अब स्निग्ध प्रशान्ति आई। धरती के हृदय में हर ओर सुनहली बालियों की स्वर्णिम-हँसी। मिट्टी के दिये हुए सोने को घर लाने की व्यस्तता। मर्द धान काटने लगे, औरतें उन्हें बटोर कर सोने के स्तूप तैयार करने लगीं।

सभी खेतों की ओर गये थे। नूरू घर में अकेली थी। इन दिनों खेतों में कम ही जाती। खेती के कामों की निगरानी मालिक ही करता। जरूरत पड़ती तो असगर खुद भी देखता। नूरू कमिये-मजूरों का कलेवा भेज दिया करती। अपने नहीं जाती। असगर ने उसे जाने को कभी मना तो नहीं किया था, पर उसके मन की वह समझती थी। इसीलिए न कहने पर भी उसकी इच्छा के मुताबिक घर ही पर रहती थी।

अकेली बैठी वह आसमान की ओर ताकने लगी। श्वेत मेघ-खंड बगलों-जैसे आसमान में उड़े जा रहे थे। ये बगले-से, मक्खन-से, धुनी रूई-से मेघ कहाँ को, किधर को उड़े जा रहे हैं? काम चाहे जितना ही रहे, मेघों को यों देखना उसे अच्छा लगता।

और नूरू गुनगुना कर वह गा क्या रही है? गीत के शब्द साफ-साफ समझ में नहीं आते। शायद उसे भी मालूम नहीं कि यह गीत उसने कब और किससे सुना था; मगर उसकी कड़ियाँ आज भी याद रह गईं। वैसे ही गुनगुनाते हुए उसने फटे-पुराने कपड़े सँजोये और कथरी सीने लगी। उसमें लाल-काले धागों के कसीदे काढ़ने लगी। उसे बचपन की एक घटना याद आई, जिसे वह उस पर आँकने की कोशिश करने लगी। उसकी जिन्दगी तीन ही के सहारे बनी—माँ, असगर मियाँ और मालिक। इसलिए वह जो भी चित्र बनाना चाहती, मालिक उन सभी में आ जाता। मगर मालिक का चित्र आँकने में उसे लाज क्यों लगती है? पास चाहे कोई हो चाहे न हो, शरम से वह कथरी को छिपा लेती। कहीं कोई देख न ले कि वह मालिक की तसवीर बना रही है!

यह कथरीकिस लिए है, कब काम आयेगी—यह सोचते ही उसका चेहरा लज्जा से रंग जाता। असल में यह कथरी ब्याह के लिए थी। ब्याह की रात कसीदा काढ़ी हुई कथरी वर-वधू के लिए बिछाई जाती, जिसे वधू को अपने हाथों सीना पड़ता। इसीलिए ब्याहयोग्य हर लड़की अपने हाथों कथरी सीती है, नूरू भी सी रही है। ब्याह की बात हर लड़की के मन में उठती है। नूरू भी सोचती, उसकी शादी कब होगी, किससे होगी। और सोचते ही उसकी आँखों में मालिक की तसवीर आ जाती। मालिक के सिवाय उसका दूल्हा दूसरा कौन हो सकता है? लाज और खुशी से सारा शरीर सिहर उठता। फिर सोचती, असगर मियाँ कहीं मालिक से शादी न करे, तो? यह सोचते भी उसे भय लगता। तुरत अपने को दिलासा देती—नहीं, ऐसा हर्गिज नहीं हो सकता। अब्बा मुझे जान से ज्यादा प्यार करते हैं, मालिक को भी बेहद चाहते

हैं; फिर वह हम दोनों की जिन्दगी बर्बाद क्यों करेंगे ? वह इस शादी में कभी एतराज न करेंगे। मगर मालिक ? अगर वही ब्याह न करना चाहे ? तुरत उसे हँसी आ जाती। मालिक और मुझसे शादी न करना चाहे ! काम, हाव-भाव, इंगित-इशारा, हर तरह से मालिक ने यह जता दिया है कि वह मुझे प्यार करता है। शायद मैं उसे जितना प्यार करती हूँ, वह मुझे उससे कहीं ज्यादा प्यार करता है। मगर नहीं, मैं उसे जितना प्यार करती हूँ, उतना कोई नहीं कर सकता, कोई नहीं।

एकाएक उसकी चिन्ता का छोर खो गया। कथरी पर यह छाया किसकी पड़ी ? यहाँ तो कोई नहीं है ? बिना इजाजत कोई अन्दर आ जाय, यह भी मजाल किसी की नहीं। चौंक कर देखने लगी। किसी की आहट भी तो नहीं हुई। उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। कहीं दिन का सपना ही तो मालिक बन कर उसकी आँखों में नहीं उतर आया ? अपनी चिन्ता में वह इस कदर मशगूल थी कि कब पैर दबाये मालिक उसके आगे आ खड़ा हुआ, इसकी उसे खबर भी नहीं। मालिक के चेहरे पर हँसने का भाव था। अपने दोनों हाथ पीछे रख कर वह नूरू से मानो कुछ छिपाना चाह रहा था।

"हाथों में क्या है ?" वह बोल उठी। महज दो-तीन शब्द। मगर इतना ही कहने में मारे शर्म के उसका चेहरा लाल हो उठा।

मुग्ध नेत्रों से उसे देखते हुए मालिक ने कहा—"तुम्ही बताओ भला क्या है ?"

"क्या कहने हैं। चीज तुम्हारी, मैं कैसे बताऊँ ?"

मालिक ने हँसकर कहा, "कोशिश कर देखो। ठीक-ठीक बता दोगी तो एक चीज दूँगा तुम्हें।" मालिक की आँखों में कौतुक नाच उठा।

"तुम्हारी चीज नहीं चाहिए मुझे।," बनावटी क्रोध से मुँह फिरा कर नूरू ने कहा।

"नहीं चाहिए ? बहुत खूब। मगर कहे देता हूँ, जान लोगी तो

छोड़ना नहीं चाहोगी।"

"देखती हूँ, मुझसे तुम मेरे मन की बात ज्यादा जानते हो! मुझे तुम्हारी चीज नहीं चाहिए, नहीं चाहिए।"

नूरू के चेहरे पर गुस्सा और आँखों में हँसी फूट उठी।

नूरू की आँखों में आँखें रोपकर मालिक ने कहा, "मैं तुम्हारे मन की नहीं जानता?"

नूरू शरमा गई। धीरे-धीरे उसका सर झुक गया। वह कुछ बोली नहीं।

मालिक ने बल देकर कहा, "मैं तुम्हारे मन की जानता हूँ, सौ बार जानता हूँ, और इसे तुम भी जानती हो।"

जरा देर दोनों चुप रहे। अचानक मालिक जैसे अपने आप बोल उठा, "दिनों दिन तुम कितनी सुन्दर हुई जा रही हो नूरू?"

लाज से नूरू और लाल हो उठी। उसका मुह, बाँह, गला मानों आग से गरमा उठे।

भरे कंठ से मालिक ने कहा, "तुम सुन्दर कैसे हुई इतनी?"

नूरू चुप। सारी दुनिया की लज्जा ने उसका गला धर दबाया। उसमें बोलने या हिलने-डुलने की शक्ति ही न रही। सिर झुकाये अनिमेष धरती को ताकती और दाँत से नाखून काटती रही। उसे यह भी मालूम न हो सका कि वह कथरी कब उसकी गोद से छूट कर गिर पड़ी है। नजर पड़ते ही वह उसे उठाने जा रही थी, लेकिन मालिक उसे पहले ही झपट्टा मार कर ले भागा। दोनों हाथों से उसने कथरी को ऊपर उठा लिया ताकि नूरू का हाथ उस तक न पहुँच सके। पूछा, "इसका होगा क्या नूरू?"

लाज से रँगी नूरू बोली, "मेरी कथरी मुझे लौटा दो।"

"लौटा तो दूँगा ही। मगर मुझे यह बता दो कि यह है किस के लिए।"

दोनों हाथों में मुँह छिपा कर नूरू बोली, "नहीं बताती, नहीं बताती मैं।"

मालिक अचरज में पड़ गया। बोला, "क्यों ? एतराज क्यों ?"

नूरू ने उत्तर न देकर झपट कर कथरी छीन लेना चाहा। मगर मालिक से वह कैसे पार पाती ? मालिक ने उसे और सख्त पकड़ कर शक्ति भर ऊपर उठा लिया। बोला, "मेरी बात का जवाब दिये बिना यह नहीं मिल सकती।"

नूरू अबकी बिगड़ गई—"नहीं दोगे ? न दोगे न सही। जाती हूँ मैं।"

मालिक को हार माननी पड़ी—"जीत तुम्हारी ही रही नूरू ! अपनी कथरी लो।"

नूरू के चेहरे पर बादल उमड़ आये। आँखों के कानों में पानी छलक आया।

मालिक ने घबरा कर पूछा, "यह रोने क्यों लगी ? मैंने ऐसा कहा भी क्या ?"

नूरू ने मालिक की ओर ताका। उसका भी चेहरा तमतमा उठा था। रो तो नहीं पड़ेगा ?

वह कुछ बोली नहीं, सिर्फ अपनी छलछलाती आँखें मालिक की ओर उठाईं। आँखों में अब भी पानी भरा था, मगर पुतलियाँ हँस रही थीं, मानों मेघों की ओट से धूप निकली हो ! मुग्ध मालिक अपना सवाल भुला बैठा। वह नूरू की ओर ताकता रह गया।

शर्म से नूरू का चेहरा तमतमा उठा। सुनी भी जा सके या नहीं, ऐसी धीमी आवाज में उसने कहा, "यों क्या देखने लगे ?"

बेखटके मालिक बोल उठा, "क्यों ? तुम्हें देख रहा हूँ।"

फिर कुछ देर तक दोनों के दोनों चुप रहे। सन्नाटा। सभी चराचर मानों किसी जादूबल से वाक्यहीन हो गये हों। धरती और आकाश किसी मायावी आलोक से अपरूप हो उठे। उस निस्तब्धता को तोड़ता हुआ कोई पंछी पुकार उठा। वे दोनों भी चौंक पड़े।

भीत कंठ से नूरू ने पूछा, "अकेले आधमके ? अब्बा कहाँ रहे ?"

"खेत में काम कर रहे हैं। फसल काटने का समय है। घर में न कोई औरत है न मर्द, इस सूने घर में अकेले हम-तुम हैं।"

काँपते गले से नूरू बोली, "तो काम छोड़ कर तुम क्यों चले आये?"

मालिक बोला, "क्यों आया, यह भी क्या खोल कर तुम्हें बताना पड़ेगा?"

नूरू बोली, "और कोई आ पहुँचे तो?"

अपनी बात वह खत्म न कर पाई। शर्म से सिर झुक गया।

गर्दन हिला-हिला कर मालिक बोला, "आये तो आये, परवाह नहीं करता। छुटपन से हम दोनों साथ पले हैं। सब इस बात को जानते हैं कि जन्म से ही हमारी-तुम्हारी शादी ठीक हुई-हवाई है।"

नूरू के गाल फिर तप कर लाल हो गये। मगर मालिक बेपरवाह-सा बोलता गया, "हाँ, जो नहीं जानते हैं, वे यह समझते हैं कि हम दोनों भाई-बहन हैं।"

नूरू की गर्दन झुक गई। दुनिया-भर की लाज बटुर कर उसी के माथे जमा हो गई। धीमे से कहा, "अभी यहाँ से चले जाओ।"

मालिक का चेहरा फक् हो गया। कह क्या रही है नूरू? नूरू जाने को कहेगी, यह सुनना भी उसके कपाल में बदा था? दुःख से उसकी छाती फटने लगी। किसी तरह बोला, "मुझे जाने को कह रही हो नूरू? तुम मुझे प्यार नहीं करती? सच ही क्या तुम चाहती हो कि मैं चला जाऊँ?"

नूरू कुछ कहना तो चाहती थी, पर कह न सकी।

दुःख से मालिक की आवाज भारी हो उठी। बोला, "तुमने जाने को कह कर मेरी सारी आशाओं पर पानी फेर दिया।"

नूरू के सारे शरीर में अजीब-सी सिहरन उठी; पर वह बोल कुछ नहीं सकी।

लम्बी उसाँस भर कर मालिक ने कहा, "खैर, मैं चला जाऊँगा।

फिर कभी तुम्हें तंग करने न आऊँगा मैं, कभी नहीं। अच्छा तो चला।"

दुःख से उसका तन मन अवसन्न हो पड़ा, बोली में जैसे कोई जान न हो। किसी तरह ये बातें कह सका और जाने के लिए उसने कदम उठाया।

नूरू अब आपे में आई। बोली, "सुनो-सुनो। मत जाओ, मत जाओ तुम। तुम्हारे चले जाने से...."

पूरी बात वह कह नहीं पाई। दोनों हाथों में मुँह छिपा कर चुप हो रही। उसने जो कुछ कहा, इतने धीमे कहा, इतने धीमे कि मानो दिल की धड़कन में बात दब जायगी। लेकिन मालिक को लगा, वह बात हवा में, आकाश में ध्वनित हो रही है, उसके शरीर के रंध्र-रंध्र में, लहू के प्रवाह में वही बात प्रवहमान हो रही है। उसने सर्वांग के कण-कण से अनुभव किया कि नूरू उसे प्यार करती है।

उसने झुकी आँखों नूरू को देखा और जाने किस मंत्र से अभिभूत होकर नूरू ने भी उसे देखा। शायद पल ही भर के लिए दोनों की आँखें टकराईं। मालिक ने देखा, नूरू की आँखों में उसके लिए अगाध विश्वास और प्रेम है; और नूरू ने देखा, उसके लिए मालिक की नजरों में आकुल निवेदन है। नूरू ने तुरत अपनी आँखें फेर लीं। मगर मालिक को लगा, उसी लहमे-भर में जनम-जनम के लिए एक ने दूसरे के मन को पढ़ लिया।

मालिक का विषाद कहाँ गया? तृप्ति और आनन्द से तन-मन भर गया। हँसी की लहरों से धरती लहरा उठी।

नूरू अवाक् ताकती रही। मालिक कहता चला गया, "जानती हो, मैं क्यों आया था? भूल ही गया था कतई। इसमें दोष मेरा नहीं, तुम्हारा है। तुम्हें देखते ही मुझसे भूल होने लगती है।"

क्रोध का दिखावा करके नूरू ने कहा, "तो मुझे देखा ही न करो!"

हँसकर मालिक बोला, "क्या खूब दवा बता दी तुमने। सर में

दर्द हो तो सर ही उतार कर फेंक दो, दर्द जाता रहेगा, वाह !"

जरा देर रुक कर बोला, "तुमने मेरे जीवन में हँसी और प्रकाश भर दिया है। तुम्हें न देखूँ तो वह ज्योति ही बुझ जायगी नूरू।"

उसने अँगोछे में से एक हार निकाल कर कहा, "देखो, तुम्हारे लिए मैं धान का सतलड़ा हार गूँथ लाया हूँ।"

पके धान की बाली सोने सी दमक रही थी। मालिक ने अपने कुशल हाथों से उन्हीं का हार गूँथा था।

हँसते हुए मालिक बोला, "आओ, तुम्हें पहना दूँ।"

नूरू सिर झुकाये खड़ी रही। जतन से मालिक ने उसके गले में हार पहना दिया। नूरू ने झुककर उसे सलाम किया और मालिक उसे पकड़ ले, इसके पहले ही धीरे से भाग गई। दरवाजे के पास जरा रुकी। उसका चेहरा आन्तरिक उल्लास से दमक रहा था।

मालिक खड़ा-खड़ा उसे देखने लगा। मन-ही-मन बोला, "नः, अब देर नहीं करूँगा। कहूँगा असगर चाचा से। जरा कटनी खत्म हो ले, फिर अगर चाचा ने चर्चा न उठाई, तो मैं खुद ही उनसे कहूँगा।"

——दो

धूप का ताप कम हो आया था, पर उसकी दीप्ति वैसी ही बनी थी। आसमान से चारों ओर ज्योति छिटकी पड़ रही थी, दिशाएँ सुनहली रोशनी से झलमला रही थीं। जमीन और आसमान मिलकर जहाँ एक हो गया है, उस दूर दिगंत की ओर ताकता हुआ असगर अपने बरामदे में बैठा था। हाथ में हुक्का। उसकी निगाह उधर भी थी, जहाँ खेतों में कमिये काम कर रहे थे। दूर समंदर की ओर दृष्टि गड़ाये वह क्या सोच रहा था, वही जाने।

कश खींच कर उसने धुएँ की कुंडली उड़ाई। उस धुएँ की तरफ

ताक कर पता नहीं उसे क्या-क्या याद आया। दीर्घ निःश्वास छोड़ कर फिर उसने मजूरों की तरफ ध्यान जमाया। इन दिनों असगर नियमित रूप से रोज खेत पर नहीं जाया करता। उम्र के लिहाज से उतनी मेहनत करने की सामर्थ्य नहीं रह गई थी। खुदा के फजल से अब उसकी उसे जरूरत भी नहीं थी। मालिक सयाना हो गया था और सब कामकाज में वही असगर का दायाँ हाथ था। इसीलिए असगर को बरामदे पर निश्चिन्त हुक्का पीने का मौका मिल गया था। जब-तब मालिक के कामों की निगरानी कर लेता। किसी-किसी दिन साँझ को सभी लोग उसी के पास आ जाते। ऐसे वक्त असगर सबको बीते दिनों के किस्से सुनाया करता। दुःख-सुख की कितनी ही कहानियाँ, आपसी लड़ाई-झगड़े के किस्से, पंचायती फैसले, तूफान से पागल बनी नदी के बीच मल्लाह की असीम वीरता। पहले की औरतों के सद्‌गुणों की गाथा! उसकी वर्णन-चातुरी से सारी बातें श्रोताओं के सामने जीवन्त हो उठतीं।

असगर सब के साथ खेतों में काम जरूर नहीं करता, मगर सबको यह मालूम था कि उसकी तीखी निगाह से कुछ बच नहीं सकता। लिहाजा उसे कोई धोखा नहीं देना चाहता। लोग उसे प्यार भी करते थे, श्रद्धा की आँखों देखते थे। सोचते थे, जिस आदमी ने इतना कुछ देखा सुना और सहन किया है, उसे धोखा देना गुनाह है। कभी असगर खुद जैसी मेहनत करता था, आज वैसी ही मेहनत औरों से करा सकता था। उसके बाल सफेद हो गये थे। गाल पिचक गये थे, फिर भी जब वह खड़ा होता, तो सखुए के तने-सा सीधा। मूँछ-दाढ़ी भी सफेद। सर के बालों में घुँघरालापन अभी था। कुल मिलाकर उसके चेहरे में ऐसा कुछ था कि जो देखता उसी को उस पर श्रद्धा होती।

यह मजूरा सामने से जा रहा था। असगर ने पुकार कर उससे पूछा, "जानते हो, मालिक कहाँ है?"

वह बोला, "वह तो अभी खेत से नहीं लौटा है।"

'अभी तक नहीं लौटा ! लड़का है, मगर बड़ा मेहनती है। नः, उससे कहना पड़ेगा कि इतनी ज्यादा मेहनत न किया करे।' असगर मन ही मन बोला। वह उठ बैठा। बुढ़ापे से गाँठ-गाँठ में वात का असर। उठने-बैठने में दिक्कत होती है। जो लोग सामने आँगन में काम कर रहे थे, वे हाथ रोक कर उसकी तरफ ताकने लगे। आखिर आज मुखिया को हो क्या गया, अभी ही उठ कर चल दिये। काम खतम होने के पहले ही !

असगर बोला, "तुम लोग काम करो, मैं अभी अन्दर से आया।"

टट्टियों का घिरा अँगना। अन्दर जाते-जाते पुकारा—"नूरू, कहाँ है बिटिया ?"

नूरू लपक कर पास आई—"क्या है अब्बा ?"

उसके सर पर हाथ रख कर नेह भरे स्वर में असगर बोला, "क्या कर रही थी बिट्टो ?"

सिर हिला कर वह बोली, "गिरस्ती के कामों का क्या अन्त है अब्बा जान ?"

असगर की आँखों में कौतुक की रेखा दौड़ गई। बोला, "बेटी, तू मेरा कहा मान। इस कदर काम मत कर, थोड़ा शरीर का खयाल रख। खाने-पीने के बाद दोपहर को जरा देर आराम जरूर कर लिया कर।"

"तुमने आराम की बात कह तो दी अब्बा, मगर सारे कामों को चुकाये बगैर आराम करूँ तो कैसे ? मैं आराम करूँ तो यह इतना काम कौन करे ? लोग खेतों में काम करने जाते हैं। चिलचिलाती धूप बदन पर झेल कर खटते हैं बेचारे। उनका खाना तो समय पर भिजवाना ही चाहिए। और शाम को लौटने पर दो मुट्ठी गरम भात न मिले तो उनका चल कैसे सकता है ? धान उबाला जाता है, वह काम भी दूसरे पर नहीं छोड़ा जा सकता। मुझे खुद निगरानी रखनी पड़ती है कि वह काम ठीक-ठीक हो रहा है या नहीं। तुम्हारे लिए पकाना जरूरी ही है। तुम्हें माँ के हाथ की रसोई के सिवा कुछ पसन्द नहीं आता था। अब वह तो

होने का नहीं। मुझसे जैसा जो बन पाता है, करती हूँ। और मालिक का भी खास खयाल रखना पड़ता है। इतना लापरवाह है कि तकाजा न करो तो खाना भी छूट जाय।"

मालिक की चर्चा आ पड़ी। नूरू मुश्किल में पड़ गई। जरा रुक कर वह चटपट बात खत्म कर गई। शायद उसका चेहरा तमतमा उठा था। हो सकता है, धूप से चेहरा लाल हो उठा हो! असगर सोच में डूब गया था। उसे नूरू के इस परिवर्तन को देखने का मौका न मिला। मालिक का नाम आते ही उसे याद आ गया कि वह अन्दर अभी किस-लिए आया था। बोला, "हाँ हाँ, मालिक के ही बारे में पूछने आया था मैं। वह खा भी गया या नहीं?"

नूरू बोली, "नहीं। आज अभी तक लौटा ही नहीं।"

"यही तो सुना मैंने। मगर नूरू, इस तरह काम नहीं चल सकता। आज आये तो तू समझा देना, अपनी सेहत का खयाल रखे। अभी उठती उमर है, बदपरहेजी के अंजाम का पता नहीं चलता। मगर आगे चलकर समझ में आयेगा की तन्दुरुस्ती के बिना शरीर नहीं टिक सकता।"

जाते-जाते असगर फिर लौट आया। बोला, "नूरू, न हो तो किसी को भेज ही दो, उसे बुला लाये। बेला भुक आई और अभी भी खाना नहीं खाया। और देर करना ठीक नहीं।"

नूरू सोच में पड़ गई। वह उसे कैसे बुलवा पठाये? किससे कहे! वह किसी को कहे भी तो क्या सोचेगा वह? जरा देर नाखून खुरच कर वह बोली, "तुम्हीं किसी को भेज दो अब्बा।"

"ठीक ही कहती है तू।" असगर हँसने लगा। "बूढ़ा हो गया हूँ, सारी बातों का खयाल ही नहीं रहता। मैं ही किसी मजूरे को भेज दे सकता था। खैर, कुछ खयाल मत करना बेटी।"

नूरू ने हँस कर कहा, "तुम बूढ़े कैसे अब्बा! मैंने तो खूब देखा है कि तुम्हारे जैसा सभी बातों का खयाल किसी को नहीं रहता। तुम्हारे

मुकाबले काम कर सके ऐसा जवान इलाके भर में कोई नहीं।"

असगर के मन में आया, कहे, रहने भी दे, ढेर बड़ाई हुई। मगर मन उसका खुशी से भर गया। लड़की ने उसे खूब पहचाना। सच तो, वह ऐसा बूढ़ा भी क्या हुआ है! स्नेह से बोला, "तू मालिक के खाने का इन्तजाम कर, मैं उसे बुलवा भेजता हूँ।"

बाहर आकर उसने अजीज को पुकार कर कहा, "अजीज, जाकर जरा मालिक को बुला लाओ। उससे कहो, मैंने बुलवा भेजा है। जल्दी घर आ जाय।"

यह वही अजीज़ है, जिसकी शादी कुलसुम से हुई थी। दो साल लगातार दो बच्चों की माँ होने के बाद चौथे साल कुलसुम के पाँव फिर भारी हुए। इसी बीच वह कयामत की बाढ़ आयी। रहीमपुर बस्ती बर्बाद हो गई। कुलसुम की तन्दुरुस्ती एकबारगी खराब हो गई। उसने एक मरी बच्ची को जन्म दिया और आप भी चल बसी। दो बच्चों की देख-भाल कौन करता? कुछ दिनों के बाद दोनों बच्चे भी गुजर गये। शोक पर शोक आता रहा। अजीज़ का दिमाग खराब हो गया। वह घर से निकल भागा। बरसों उसकी कोई खोज-खबर नहीं मिली। आखिर कहीं किसी तरह उसे पता चला कि असगर मियाँ ने यहाँ नई दुनिया बसाई है। खोज-पूछ करता हुआ वह यहाँ आ पहुँचा। बोला, "मुखिया मेरे तो संसार में दूसरा कोई नहीं, एक बस कुलसुम है। वह तुम्हारा घर छोड़कर कहीं रहना नहीं चाहती। मेहरबानी करके अगर तुम बित्ता भर जगह दे दो, तो हम दोनों प्राणी जिन्दगी के बाकी दिन यहीं गुजार दें।"

असगर मियाँ ने अवाक् होकर पूछा, "कुलसुम? वह जिन्दी है?"

अजीज ने सिर हिला कर कहा, "जिन्दा नहीं है तो क्या मर गई? अरे, उन बुरे लोगों की बातों पर तुम हरगिज कान मत दो मुखिया, उन्होंने बात उड़ा दी कि कुलसुम मर गई!"

जरा देर बाद फुसफुसा के वह बोला, "उन्हें छुकानेके लिए मैं भी

कुछ नहीं कहता। जान जायँ तो उसकी जान न ले लें कहीं।"

असगर को याद आ गया, शोक से अजीज़ का दिमाग खराब हो गया है; वह सोच भी नहीं सकता कि कुलसुम मर गई है। असगर ने सोचा, पागल को छेड़ने से क्या लाभ ?

अजीज ने फिर कहा, "मुझे अपने यहाँ थोड़ी-सी जगह दो मुखिया ! जिन्दगी-भर तुम्हारा गुलाम बना रहूँगा।"

तब से अजीज यहीं है। यों सहज में समझ नहीं पड़ता कि उसका दिमाग खराब है, लेकिन कुलसुम की चर्चा उठते ही उसका हाल बुरा हो जाता है। फिर तो 'कुलसुम-कुलसुम' करके सब की खोपड़ी चाट जाता है। कहता, 'कुलसुम को यह चाहिए, उसने यह कहा है, वह वहाँ बैठी है।' और सच ही वह जा-जा कर हर बात उससे पूछ-पूछ कर जवाब देता।

दिमाग उसका चाहे जितना ही खराब हो, मालिक को वह प्राणों से बढ़कर प्यार करता। अजीज यह कभी नहीं भूलता कि कुलसुम ने मालिक को बच्चे की तरह पाला-पोसा है। वह सोचता कि मालिक को प्यार करके वह कुलसुम की इच्छा पूरी करता है।

असगर को यह बात मालूम थी। इसीलिए उसने मालिक को बुलाने के लिए उसी को भेजा। अजीज ने यहाँ देखा, वहाँ देखा। जब कहीं मालिक का पता न चला तो मजूरों से पूछा, "मालिक को देखा है कहीं ?"

मजूरों ने बताया, "मालिक मियाँ तो कब का घर चला गया।"

अजीज उलटे पाँवों घर लौट आया। मगर कहाँ, मालिक घर कहाँ आया ?

असगर ने कहा, "बड़ी अजीब बात है ! घर के लिए वह सबेरे ही खेत से चल चुका है और अभी तक गायब। अजीज, जाओ तो जरा फिर भली तरह ढूँढ़ो उसे।"

अजीज फिर निकल पड़ा। सारी बस्ती का कोना-कोना ढूँढ़ गया, खेत-खलिहान, दूसरों के खेतों की भी खाक छानी। जो मिले, उसी से

पूछा। आखिर एक आदमी से पता चला, गाँव की सरहद के खेत पर मन्सूर काम कर रहा है। उसने मालिक को देखा है। काम-काज चुका कर मालिक नदी की तरफ गया था। छोटी-सी नदी। नहर ही कहा जाय तो ठीक है। गाँव से सटकर बहती हुई सागर में जा मिली है। घाट पर डोंगी बँधी थी। उसी पर मालिक डाँड़ खेता हुआ गया है। मालिक रोज ही डोंगी से उधर जाया करता है। जहाँ नदी सागर से जाकर मिली है, वहीं पर एक टीला है। मौका मिलते ही साँझ हो या विहान, मालिक उस पर जा बैठता है।

अजीज ने सिर हिलाकर कहा, "यह मुझे मालूम है। कुलसुम ने मुझे बताया है कि छुटपन में भी मालिक नदी किनारे जाकर अकसर बैठा करता था। सुबह जब नदी से उछल कर सूरज ऊपर उठ आता तो मालिक की खुशी का क्या कहना। यहाँ भी शायद वह साँझ-विहान यही देखा करता है कि कैसे सबेरे सूरज समुद्र में से जगता है और साँझ को उसी में डूब जाता है।"

लौटकर अजीज ने असगर से बताया कि मन्सूर ने मालिक को देखा है। वह डोंगी लेकर समन्दर के पास के टीले की ओर गया है। अपनी धुन में उसने कहा, "मालिक की तो आदत ही ऐसी है। कुलसुम कहती है, 'उफ्, छुटपन में इतना तो शैतान था। घर से चल देता था, फिर शाम तक कहीं पता नहीं। एक बार नाव से बड़ी नदी में निकल पड़ा था। घर-भर में तहलका मच गया। यहाँ खोजो, वहाँ खोजो।' कुलसुम—"

बीच में बाधा देकर असगर ने कहा, "कुलसुम की बात मैं सब सुन चुका हूँ; मगर इस मालिक को टीले पर जाने का और कोई समय नहीं मिला? न नहाना हुआ है, न खाना। इधर चक्का अस्त होने को आया। यह क्या सूझी उसे?"

काम में जुटे मजूरों से असगर ने कहा, "म्याँ, जरा बढ़ के काम करो। सूरज डूब चला। अगहन की साँझ है, देखते-ही-देखते अँधेरा

उतर आयेगा।"

सबने और जोर मारा। काम की धूम पड़ गई। किसी की जबान पर शब्द नहीं। असगर ने हुक्के में दम लगाया। अजीज तब भी पास खड़ा उपर-नीचे हो रहा था। असगर ने पूछा, "क्यों अजीज, कुछ कहना है?"

असगर को मालूम था कि अजीज काम से जी चुरानेवाला आदमी नहीं, अगर उसे कुछ कहना नहीं होता, तो वह काम में जरूर जुट जाता। मौका पाकर अजीज ने कहा, "मैं मालिक को बुलाने जाऊँ? टीले पर से पुकारने पर बहुत दूर तक आवाज जाती है।"

"क्यों मालिक कोई दूध पीता बच्चा है कि खो जायगा? खुदा का फजल कहो, इस चौंर पर डाकुओं का आतंक नहीं। फिर मालिक कोई बहू भी नहीं कि डाकू उसे उठा ले भागेंगे।"

"न-न, मेरा मतलब यह नहीं। उसे चुरा कौन ले जायगा भला। मगर साँझ हो गई, अब भी उसे बुला न लाऊँ तो कुलसुम बिगड़ उठेगी।"

"हुँ। यह डर तुम्हें होगा, हमें क्या? तुम्हारी कुलसुम हमारा क्या कर सकती है। मालिक जब कहीं गया है, तो जरूर किसी काम से गया होगा। बुलाने से परेशानी ही होगी उसे। यहाँ कोई खूँखार जानवर नहीं है कि उसे निगल जायगा।"

लेकिन अजीज ने हार न मानी। बोला, "खूखार जानवर यहाँ हमने देखे जरूर नहीं हैं, पर उनके आ जाने में कितनी देर लगती है? शिकार की टोह में हाथी या बाघ मजे में आ जा सकते हैं। दो-तीन मील की इस खाड़ी को पार करना बाघ-भालू के लिए कुछ भी नहीं। मान लो, मालिक को कुछ हो गया तो कुलसुम को मैं कौन-सा मुँह दिखाऊँगा?"

असगर हँस पड़ा। बोला, "तुम्हारी जितनी ही उमर होती जा रही है, बुद्धि उतनी ही लोप होती जा रही है। इतने दिन तो हो गये यहाँ

रहते हमें, बाघ-हाथी तो क्या, कभी एक भेड़िया भी न देखा। जाओ, दिमाग मत चाटो। मालिक अब नाबालिग नहीं रहा। इतनी निगरानी शायद उसे रुचे भी नहीं।"

अजीज ने कोई जवाब न दिया, पर उसके चेहरे से लगा, उसे असगर की बात अच्छी न लगी। जरा देर रुक कर वह धीरे-धीरे अन्दर जाने लगा। डपट कर असगर ने पुकारा, "अजीज।"

अजीज सहम कर ठिठक गया। असगर ने धीमे स्वर में कहा, "तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। नूरू यह सुनेगी तो और भड़क उठेगी।"

अजीज को डाँट कर असगर खुद लज्जित हुआ। नर्म स्वर में बोला, "बूढ़े सठिया जाते हैं और औरतों के दिमाग में हजारों खयाल होते हैं। कहा भी तो है, एक तो करेला, फिर नीम चढ़। ये किस्से सुनकर नूरू ज्यादा डर जायगी।"

जिसका डर था, वही हुआ। अन्दर से एक बूढ़ी दाई ने आकर कहा, "नूरू बीवी आपको बुला रही हैं।"

इच्छा तो नहीं थी, पर असगर उठ खड़ा हुआ। अजीज पर उसे गुस्सा आया। फिर सोचा, जिसका दिमाग ही खराब है, उस पर बिगड़ना क्या? वह अन्दर जाने लगा। दरवाजे पर ही नूरू ने व्यग्रता से पूछा "मालिक कहाँ है अब्बा?"

असगर ने दिलासा देते हुए कहा, "तू खामखा घबरा क्यों रही है। ऊल-जलूल बातों पर कान नहीं देना चाहिए।"

नूरू का कलेजा पत्थर हो गया। बोली, "तुम्हारी बातें समझ में नहीं आ रही हैं अब्बा।"

असगर बोला, "मैं क्या कह रहा हूँ भला। अजीज का तो दिमाग खराब है, उसकी क्या सुनती है तू?"

नूरू बोली, "मैंने तो अजीज चाचा से कुछ भी नहीं सुना। तुम्हीं ने कहा था, 'उसका खयाल रखना।' मैं थाली परोसे कब से बैठी हूँ।

उसका कहीं पता नहीं।"

असगर को अपने-आप पर गुस्सा आया। वही खीझ उसकी बातों में जाहिर हो पड़ी। बोला, "तू नाहक ही परेशान हो रही है। मालिक को कुछ नहीं हुआ, वह आयेगा अभी।"

नूरू की आँखों से आँसू बहने लगे। बोली, "मैंने कौन-सा कसूर किया है अब्बा? तुमने कहा था, तुम उसे बुलाने के लिए आदमी भेज रहे हो। देर देख कर मैंने सोचा, काम की भीड़ में शायद भूल गये तुम। याद दिलाने के लिए मैंने बुलवा भेजा और तुम कह रहे हो कि उसको कुछ नहीं हुआ।"

असगर ने उलझन मिटाने की गरज से कहा, "अपने बूढ़े बाप पर इतना शुबहा? तू शायद सोचती है कि मुझे कुछ याद नहीं रहता।"

नूरू ने उतावली से पूछा, "तो किसी को भेजा था? क्या कहा उसने? कहाँ है मालिक?"

असगर चुप हो रहा। नूरू ने फिर पूछा, "किसे भेजा था?"

"अर्जीज को।"

"अर्जीज चाचा ने क्या कहा आकर? उसे जरा बुलवा भेजोगे? जाने क्यों मुझे डर लग रहा है। हो न हो कुछ हुआ जरूर है।"

असगर को इसका जवाब देने की इच्छा नहीं थी। पर बिना जवाब दिये नूरू को और भी डर लगेगा, इसलिए सर पर हाथ फेरते-फेरते कहा, "जानती तो हो ही कि अर्जीज का दिमाग सही नहीं। उसकी बातों पर भला एतबार करना चाहिए?"

नूरू जिद ले बैठी, "फिर भी उसने कहा क्या?"

असगर बोला, "बस वही 'कुलसुम-कुलसुम' की लिये है। उसका खयाल है, चौर में जंगली हाथी, बाघ, भालू, क्या-क्या आ गया है!"

नूरू की ओर देखा तो उसका चेहरा मारे डर के पीला पड़ गया था। सो जल्दी-जल्दी कह उठा, "उस पगले की बात का भरोसा ही

क्या जो सुनती हो ! बाघ-हाथी क्या, यहाँ तो लोमड़ी भी नहीं।"

नूरू की आँखें भर आईं। असगर की गोद में मुँह छिपा कर रोते-रोते बोली, "कौन जानता है, यहाँ कब कौन नया जानवर आ जाय। समुद्र का किनारा है, हम नहीं जानते, क्या-क्या जन्तु यहाँ बसते हैं।"

असगर ने स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, "रो मत बिटिया, मैं अभी उसे खोजने को चारों तरफ आदमी भेजता हूँ। मेरा खयाल है, वह समन्दर के पास वाले टीले पर गया होगा। नहीं जानता, वहाँ उसे क्या मिल गया है कि जब-तब वहाँ जा बैठता है।"

नूरू को थोड़ी ढाढ़स बँधी। बाप पर उसे अबाध विश्वास है। जब अब्बा कहते हैं कि मालिक लौट आयेगा, तो मालिक जरूर लौट आयेगा। असगर ने कहा, "आने दो उसे, मैं डाँट बताता हूँ। बिना कहे-सुने इस तरह कहाँ चला जाता है ? लोगों की चिन्ता की हद नहीं रह जाती। तू भी डाँट बताना।"

नूरू चुप रही, मगर आँखों के सजल होते हुए भी होंठों पर दुबली हँसी दिखाई दे गई। उसका सर सहला कर असगर बाहर चला गया। नूरू को तो उसने ढाढ़स बँधाया, पर अब उसे खुद भी चिन्ता दबा बैठी। बेला झुक आई। गोधूलि की आभा में सारी धरती छायामय हो उठी, पर मालिक क्यों नहीं लौटा ?

दरवाजे पर अजीज चिन्तित खड़ा था। असगर को देख कर उतावली से कहा, "तो मैं जाऊँ उसकी खोज में ?"

असगर बोला, "जाओ। अकेले के बजाय साथ में दो-चार आदमी ले लो। सब मिलकर अच्छी तरह तलाशो।"

अजीज दो कमियों को साथ लेकर निकल पड़ा। असगर खड़ा-खड़ा उनकी राह की तरफ देखता रहा। जब मोड़ पर वे आँखों से ओझल हो गये तो धीरे-धीरे अन्दर गया। देखा, नूरू वहीं, उसी जगह खड़ी एकटक राह की ओर निहार रही है। पैरों की आहट सुनकर उसने गर्दन उठाई। आँख-मुँह में आशा की ललक। मगर अकेले अब्बा को

आते देख फिर मुरझा गई। आँखें गीली हो उठीं।

असगर ने कहा, "फिक्र मत कर बेटी। कमियों के साथ अजीज को भेजा है। आ ही चले वे।"

नूरू का शोक जैसे और उफन आया। असगर ने उसे अपनी गोद में खींच लिया। उसके माथे पर, पीठ पर हाथ फेरने लगा। बाप की गोद में मुँह गाड़ कर उसकी रुलाई का बाँध टूट गया। असगर बोला, "रोती क्यों है बिटिया। आदमी तो भेजा है। चौर में कोई खतरा नहीं है। खूँखार जानवर यहाँ कभी किसी ने नहीं देखा। घबरा मत।"

कोई दो घंटे बाद अजीज लौटा। वे नदी के किनारे-किनारे समुद्र तक हो आये, मगर कहीं मालिक का पता न चला, उसकी नाव भी नहीं दिखी।

असगर ने पूछा, "टीले पर देख लिया था?"

अजीज बोला, "सबसे पहले तो वहीं गया था। ऊपर चढ़ कर बहुत पुकारा। गला दुख गया, पर मालिक का पता नहीं। हमारी पुकार हमारे ही पास लौट आई।"

अब असगर की भी चिन्ता का अन्त नहीं रहा। सूरज डूब चुका था। केवल पच्छिम में समन्दर के पानी में प्रकाश का आभास रह गया था। कोई-न-कोई मुसीबत जरूर पड़ी है, नहीं तो मालिक अब तक जरूर लौट आता। असगर का चेहरा देखकर सब त्रस्त हो उठे और नूरू की तरफ तो ताकना ही सम्भव न था। अब वह रो नहीं रही थी, लेकिन अव्यक्त शोक के दबाव से उसका चेहरा ही बदल गया था। देखकर कौन कह सकता है कि यह वही नूरू है जिसके होंठों से हँसी सदा लगी रहती है?

असगर ने गाँव के सब लोगों को बुलाया। बुला कर उन्हें चार टुकड़ों में बाँटा कि हाथ में मशाल लिये कनस्तर पीट कर सब जानवरों

को खेदें। और अपने चार विश्वासी आदमियों को लेकर स्वयं नाव पर निकला।

तमाम रात लोग ढूँढ़ते रहे। मशाल की रोशनी और कनस्तर की आवाज से सारा चौर भर गया। हेमन्त के शेष की रात। कुहरे के हलके जाल से आकाश आच्छन्न। धरती, पेड़-पौधे, घर-द्वार उस जाल में इस तरह जकड़ गये थे कि पहचानना मुश्किल।

चाँद नहीं था। आसमान में तारे हीरे जैसे झलमला रहे थे। मगर प्रकृति के इस अनुपम सौन्दर्य की ओर निहारने का उन्हें समय कहाँ था? तमाम रात की यह मेहनत बेकार गई। आखिर वे रात्रि शेष के म्लान आलोक में लौट आये। श्रम और निराशा से उनके चेहरे फीके और पीले हो आये।

नूरू अन्दर बैठी थी। न मुँह में बोली, न चेहरे पर दमक। गाँव की औरतों ने आकर दो-एक बार उसे खिलाना चाहा, मगर उसे बुत बनी देखकर तंग करने की हिम्मत न पड़ी। बारी-बारी लोग लौटने लगे। पहले तो नूरू के चेहरे पर आशा की रेखा फूट उठती। जब कुछ कहकर लोग चुप हो जाते, तो निराशा का अँधेरा छा जाता। रात बीतने को थी, तब असगर लौटा। उसकी आवाज सुनकर नूरू की चेतना लौट आई। वह उठकर दरवाजे की ओर लपकी। उसके मुँह से बात न फूटी, पर आँखों के व्यग्र प्रश्न के जवाब में सिर हिलाकर असगर ने कहा, "नहीं, मालिक को ढूँढ़ कर न निकाल सका।" नूरू से और न सहा गया। वह असगर मियाँ के पैरों के पास ही मूर्च्छित होकर धड़ाम से गिर पड़ी।

——तीन

कालरात्रि बीत गई, मगर असगर मियाँ की दुनिया का धुँधलका न गया। आशा, आशंका और अनिश्चय में दिन गुजरने लगे। जबान खोल कर कोई कुछ कहता नहीं, पर मालिक का गायब हो जाना सबके कलेजे पर पत्थर के दबाव-सा पड़ा रहा। सुबह होते ही असगर घर से निकल पड़ता। हर रोज सुबह की नमाज की भी अपेक्षा नहीं करता। समन्दर के किनारे उस टीले पर जाकर दूर-दूर देखता रहता—कहीं कोई जहाज या नाव दिखाई पड़ जाय। उसे पक्का विश्वास था कि मालिक समन्दर की राह ही लौटेगा। पहले लोग भी असगर के साथ जाया करते थे। लेकिन ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये, उनको विश्वास हो गया कि मालिक अब लौट कर आने का नहीं। किसी-किसी ने तो यह भी साफ कह दिया कि बबन्डर में डोंगी के डूब जाने से मालिक मर गया है। असगर को लोगों ने लाख समझाना चाहा कि आप नाहक ही तकलीफ उठा रहे हैं। टीले पर हजार बार चाहे जायँ, मालिक अब नहीं लौटने का।

असगर ढंडे दिमाग का आदमी था। सहज ही किसी पर बिगड़ नहीं पड़ता। मगर मालिक के न लौटने की बात सुनकर वह पागल हो उठता। उसका यों बिगड़ना देखकर लोगों ने समझ लिया, मुखिया बुढ़ापे के कारण ऐसा हो गया है।

असगर के इस विश्वास से नूरू को बल मिलता। उसे भी दृढ़ विश्वास था कि मालिक जरूर लौटेगा। वह बड़ी उत्सुकता लिये असगर के टीले से लौटने की बाट जोहा करती। उसके पैरों की आहट पाते ही दरवाजे तक दौड़ी आती। जब देख लेती कि असगर के साथ और कोई नहीं आया, तो लम्बी उसाँस भर कर फिर गिरस्ती के धंधों में लग

जाती। खाते समय रोज वह मालिक की थाली परोस रखती, अगर-अचानक आ जाय मालिक !

अजीज की भी पक्की धारणा थी कि मालिक लौट आयेगा। कोई मीन-मेख करता तो उसे मारने पर आमादा हो जाता। कमिये-मजूरे उस अधपगले बूढ़े की खिल्लियाँ उड़ाया करते, लेकिन सबका उस पर स्नेह भी था। वह बिगड़े दिमाग का चाहे हो, पर असगर का उससे विश्वासी और फरमाबरदार दूसरा कोई न था। मालिक और नूरू का जिक्र आने पर वह आपे में नहीं रहता। देह में कूवत भी असाधारण थी। दो जवानों को मजे से बगल में दबा ले। लोगों ने देखा, 'मालिक लौट कर अब नहीं आयेगा', यह कहने से ही वह खूँखार-सा मारने दौड़ता है। लोगों ने वैसा न कहना ही बेहतर समझा। जाने कब पीट-पाट बैठे। लोगों ने अजीज के आगे मालिक की चर्चा ही बन्द कर दी लेकिन दिन-दिन उनकी यह धारणा दृढ़ ही होती गई कि मालिक जिन्दा नहीं है।

दिन गये, हफ्ता बीता, कोई एक महीना निकल गया; मालिक का पता न चला। असगर की रही-सही आशा जाती रही। उसे भी डर लगने लगा, शायद मालिक अब न लौटे। टीले पर लेकिन रोज ही जाता। धीरे-धीरे यह विश्वास के बजाय उसका एक अभ्यास ही हो गया। एक दिन उसने अजीज से कहा, "अजीज, टीले पर जाने को अब जी नहीं चाहता। लगता है, मालिक अब नहीं आने का।"

नूरू उसी ओर होकर जा रही थी। असगर की बातें शायद उसने सुनी नहीं, पर उसकी क्लान्ति और चेहरे पर हताशा की छाप देख कर छाती धक् से रह गई। बाप के पास आकर बोली, "आज तुम बाहर नहीं जाओगे अब्बा ? टीले पर ?"

असगर क्या कहे ? कुछ क्षण चुप रहा, तब गम्भीर होकर बोला, "आज प्रायः महीने-भर से रोज तड़के टीले की तरफ जाता हूँ। कभी जरा देर हो जाती है तो सुबह की नमाज टीले पर ही जाकर अदा

की है। मगर यह बेकार की उम्मीद कब तक की जाय बेटी! अगर लौटना होता तो क्या अब तक मालिक नहीं लौट आता?"

नूरू का कलेजा जैसे जम गया। लगा, रीढ़ के अन्दर से बर्फ पिघल कर बह गई। करुण स्वर में बोली, "तुम भी क्या यही सोचते हो अब्बा, कि मालिक अब लौट कर नहीं आयेगा?"

उसकी आवाज में ऐसी करुणा थी कि चौंक कर असगर ने उसकी तरफ ताका। अपनी चिन्ता में बेतरह डूबे रहने के कारण कभी गौर से इधर नूरू को उसने देखा ही नहीं था। आज उसने देखा, नूरू आधी रह गई है। मुँह सूखा, मुरझाया; आँखों के नीचे-नीचे स्याह लकीरें। यों ही वह छरहरे बदन की थी, अब सूख कर काँटा हो गई।

स्नेह भरे स्वर में असगर बोला, "मेरे पास तो आ बेटी!" नूरू पास गई। असगर ने उसे अपनी गोद में खींच लिया। वह बाप की गोद में मुँह गाड़ कर जार-बेजार रोने लगी। दिलासा देकर बोला, "तू रो मत बिट्टो, मालिक जरूर आयेगा। मुझे पूरा यकीन है। आदमी का दिल ठहरा, टूट जाता है। मगर तू मेरी इस कमजोरी का खयाल मत कर।"

नूरू का रोना क्यों थमने लगा। अजीज वहीं पास खड़ा था। बोला, "मुखिया, रो लेने दो, जी भरकर उसे रो लेने दे। जी हलका हो जायगा। औरतों का यही तरीका है।"

असगर को गहरे दुःख में भी हँसी आ गई। बोला, "औरतों के तौर-तरीके की बात तुमने कब सीखी और सिखाया ही किसने तुम्हें?"

अजीज ने सप्रतिभ होकर जवाब दिया, "क्यों, कुलसुम ने। मैं तो उसे खाक भी नहीं जानता था। तुम्हीं ने धर-पकड़ कर उससे मेरी शादी करा दी। मगर मैं कह नहीं सकता मुखिया, तुमने मुझ पर कितना बड़ा एहसान किया। बड़ी बुद्धिमती है वह, उसी ने मुझे यह सब सिखाया।"

अजीज खिलखिला कर हँस पड़ा, गोया उसने बड़े मजे की बात

कह दी है ! हँसी रोककर कई बार उसने नूरू से कुछ कहना चाहा, पर जब भी हँसी कुछ थमी, तभी हँसी का नया वेग आया। अन्त में असगर ने डाँट बताई, "यह 'ही-ही' क्या लगा रखी है तुमने ?"

लाचार अजीज ने मुश्किल से हँसी रोकी। बोला, "नूरू बिटिया, तू रो मत। मालिक मियाँ जरूर आयेगा, जरूर। उसे रोक कर रखने लायक मर्द अभी तक पैदा ही नहीं हुआ। कुलसुम ने कहा है, 'शैतानी में उसका मुकाबला करने वाला नहीं।' कुलसुम से बढ़कर उसे जानता भी कौन है ? तुम्हें तो मालूम है कि जब से उसकी दादी छोड़ गई, कुलसुम ने ही उसे पाला-पोसा।"

असगर ने सोचा, कुलसुम का जिक्र छिड़ गया तो फिर अजीज को रोकना मुश्किल होगा, सो उसने बीच ही में कहा, "तुमने ठीक ही कहा अजीज, मालिक जरूर लौट आयेगा और जल्दी ही लौट आयेगा।"

नूरू का चेहरा लहमे में दमक कर मुरझा गया। बोली, "यह तो सिर्फ मुझे दिलासा दे रहे हो अब्बा। सच-सच बताओ, मालिक लौट आयेगा ?"

सिर हिलाकर असगर ने बताया, जरूर आयेगा।

अजीज कुछ कहना चाह रहा था। इतने में बात का रुख पलट कर असगर बोल उठा, "क्यों री नूरू, गुड़ का पकवान अबकी नहीं बनायेगी ? तेरे हाथ का पकवान तो इस बार नसीब ही नहीं हुआ।"

नूरू बोली, "मुझसे भूल हो गई अब्बा। जो कहो, अभी तैयार किये देती हूँ।"

असगर बोला, "जो तू चाहे, बना।"

जाते-जाते नूरू लौट पड़ी। बोली, "आज टीले पर नहीं जाओगे ?"

"जा ही तो रहा हूँ। तू पकवान पका कर रखना। लौट कर खाऊँगा।"

अजीज को साथ लेकर असगर टीले की तरफ चल पड़ा। दोनों

रफ धान के खेत, बीच में पतली पगडंडी। बड़ी देर तक दोनों कटे खेतों को देखते हुए चुपचाप चलते रहे। कटनी जोरों पर थी। और साल अब तक कटनी खत्म हो गई होती मगर इस साल मालिक नहीं है। असगर सोच-फिकर में पड़ा है। इसीलिए कटनी पूरी नहीं हो सकी है।

गाँव पार कर वे नदी के किनारे पहुँचे। यहीं मालिक को आखिरी मरतबा देखा गया था। दबा निःश्वास फेंक कर असगर बोला, "दिन-रात यही मन्नत मान रहा हूँ कि मालिक राजी-खुशी लौट आये, मगर गुनहगार बन्दे की फरियाद क्या अल्लाह के दरबार तक पहुँचती है?"

अजीज बोला, "क्यों नहीं पहुँचेगी। फिर उसे हम रहमानुरहीम कहते ही क्यों?"

थोड़ा रुक कर बोला, "अगर वह जिन्दा है तो बेशक लौटेगा। नूरू बीवी को छोड़ कर वह हरगिज नहीं रह सकता।"

असगर बोला, "दोनों एक दूसरे को बेहद चाहते हैं। चाहें भी क्यों नहीं। दोनों ही साथ पले हैं, गोया भाई-बहन हों। इसी से नूरू बड़ी मायूस हो गई है।"

अजीज बोला, "सचमुच ही मालिक के चले जाने से नूरू बीवी का दिल बैठ गया है। कुलसुम हरदम कहती है 'दोनों की जोड़ी क्या बनी है, लगता है, खुदाताला ने उन्हें मियाँ-बीबी ही बना कर भेजा है'।"

असगर बिगड़ उठा, "क्या ऊल-जलूल बकते हो? दोनों भाई-बहन के सामान साथ पले हैं। हम अपने बेटा-बेटी के समान उन्हें एक नजर से देखते आये हैं।"

गर्दन हिला कर अजीज बोला, "यह तुम्हारी भूल है मुखिया, सरासर भूल। तुम शायद ऐसा ही सोचते हो, पर वे दोनों ऐसा नहीं सोचते। कुलसुम कहती है...."

आजिज आकर असगर बोला, "तुम्हारा तो दिमाग फिर गया है, नहीं तो कुलसुम की रट लगा कर दिमाग क्यों चाट जाते। मैं कहता हूँ, वे भाई-बहन हैं। जो भाई के लिए बहन के रोने को नहीं समझ

सकते, वे बेवकूफ हैं।"

अजीज ने कहा, "तुम खुद अक्लमंद हो मुखिया, मैं क्या बताऊँ तुम्हें। मगर फिर भी इतना कहूँगा कि नूरू का यह शोक भाई के लिए बहन का शोक नहीं है। इन कुछ दिनों में बेचारी की सूरत क्या हो गई। उसकी तरफ देखा नहीं जाता।"

असगर डपट उठा, "फिर वही बकबक। मालिक जैसे भाई के लिए नहीं रोये, ऐसी भी बहन कहीं है? हरदम तो यही सुनने में आता है कि भाई के लिए रोते-रोते बहन का शरीर टूट गया है।"

अजीज लेकिन हार नहीं मान सकता था। बोला, "मैं तर्क नहीं बढ़ाना चाहता। फिर भी यही कहूँगा कि नूरू बीवी मालिक को भाई की तरह नहीं देखती। कुलसुम...."

असगर बीच ही में कुछ कहने जा रहा था कि हाथ बाँध कर अजीज बोल उठा, "गरीब को एक बात सुन लो मुखिया। कुलसुम ने मुझे बताया है कि जब मालिक तुम्हारे यहाँ रहने लगा था, तो बशीर ने कुलसुम से यही बात बताई थी। तब ये महज दुधमुँहे बच्चे थे, फिर भी दोनों में गाढ़ा अपनापा था। बशीर ने कुलसुम को बताया था कि दोनों साथ पल कर बड़े होंगे तो तुम उनकी शादी में एतराज न करोगे। तुम्हीं सोच देखो, ऐसी नीयत न होती तो वे नज्जू मियाँ के लख्तेजिगर को उसके सबसे बड़े दुश्मन के घर रख भी क्यों जाते?"

असगर कुछ बोला नहीं, लेकिन उसका चेहरा भारी-भारी हो गया। अजीज की बात को वह एकबारगी उड़ा न दे सका। एक बीती घटना की कसौटी पर इसकी सत्यता को वह कस कर देखने लगा। नूरू और मालिक को अपने बच्चों की तरह उसने पाला है। जब तक जिन्दा रही, उसकी स्त्री ने भी यही किया। वे कभी सपने में भी न सोच सके कि नूरू और मालिक में कभी ऐसे खयाल भी आ सकते हैं। अजीज की बातों से असगर की वह दृढ़ धारणा जाती रही। कितनी ही ऐसी मामूली बातें उसे याद आने लगीं, जिन पर उसने पहले कभी गौर नहीं

किया था। किया होता तो शायद उसको भी शुबहा होता।

असगर को खयाल आया, भरसक नूरू मालिक के बारे में सीधे कुछ नहीं कहती, पर उसकी हर बात में मालिक के प्रति संकेत होता है। मालिक के लिए वह किस जतन से रसोई करती, उसे खिलाने में कितनी तत्परता बरतती! पिछले साल कर देने को वह सदर गया था। जब तक लौट नहीं आया, नूरू की फिक्र और बेचैनी का अन्त न रहा। जबान से कुछ न बोली, पर हर पल अन्दर-बाहर करती रही। मालिक पर नजर पड़ते ही उसके चेहरे पर कैसी एक अपूर्व दीप्ति खेल गई थी। असगर को उस रात की बात याद आई, जब सब जगह की खाक छानने के बाद भी मालिक मिल न सका। नूरू किस तरह बेहोश गिर पड़ी थी। आज भी जो उसका हाल-बेहाल है, सो क्या भाई के शोक में?

असगर ने यह सब देखकर भी न देखा। सारी बातें उसकी आँखों के आगे ही गुजरीं, नूरू में लुकाछिपी की आदत नहीं। लेकिन असगर सोचता रहा, यह भाई के प्रति बहन का स्नेह है। भूल कर भी कभी उसके मन में यह नहीं आया कि बचपन के ये दोनों साथी प्रथम यौवन के आते ही प्रेम में इस कदर बावले हो उठेंगे। अपनी बुद्धिहीनता पर वह आप ही चकित रह गया। उसने सर ठोंक लिया—"इतना अन्धा था मैं!"

अजीज ने कान खड़ा करके सुनने की कोशिश की कि मुखिया कहता क्या है? वह तो सहज ही दब जाने वाला जीव नहीं! फिर यह अपने-आपको भला-बुरा क्यों कह रहा है? बोला, "क्या बुदबुदा रहे हो मुखिया?"

अजीज के सामने कमजोरी जाहिर हो जाने के कारण असगर शरमिन्दा हो गया था। सो उसने बात को पलट कर कहा, "बुदबुदाना क्या, कह रहा था कि तुम नम्बर एक के बेवकूफ हो।"

अजीज ने निःसंकोच असगर की बात कबूल कर ली। बोला, "मैं बेवकूफ हूँ, यह सभी जानते हैं। मैं भी जानता हूँ। मगर दुनिया में ऐसे

भी बेवकूफ हैं, जो खुद भी नहीं जानते कि वे बेवकूफ हैं।"

असगर ने समझा, अजीज उसी पर चोट कर रहा है। बिगड़ कर बोला, "जो कहना हो सो साफ-साफ कहो। यह बुझौवल बुझाना छोड़ो।"

अजीज बेवकूफ की तरह हँस पड़ा। कहा, "मेरी बात के मानी भी क्या। मैं तो सदा-सदा का बेवकूफ ठहरा। मेरी सुनता ही कौन है? कुलसुम कहती है...."

असगर मियाँ की बर्दाश्त से बात बाहर हो गई। जोरों से डपट कर कहा, "कुलसुम-कुलसुम' बकते रहोगे तो अच्छा न होगा।"

अजीज ने लापरवाही से कहा, "कुलसुम बेवकूफ थोड़े ही है। उसकी बात की कीमत है। उसने बहुत दुरुस्त बताया है कि जब तक कोई कुछ पूछे नहीं, मैं चुप ही रहूँ।"

असगर ने कहा, "कुलसुम ने बजा कहा है। वह अगर तुम्हारी जबान बन्द कर सकती तो एक बहुत बड़ा काम होता। निश्चय ही उसमें बुद्धि-विचार था।"

मारे खुशी के अजीज के सारे दाँत बाहर निकल आये। बोला, "यही समझो मुखिया। उसकी कानी उँगली में जितनी अकल है, उतनी अकल मेरे सारे शरीर में नहीं।"

असगर को हँसी आ गई। धीमे से बोला, "उसकी हर बात मानते होते तो अच्छा ही था। जो भी हो, दिल तुम्हारा नेक है। कसर है तो इतनी ही कि तुम यह नहीं जानते कि कहाँ क्या कहना चाहिए।"

सयाने की तरह सिर हिलाकर अजीज ने कहा, "कुलसुम भी यही कहती है।"

असगर ने फिर कुछ न कहा। दोनों चुपचाप चलते रहे। कुछ ही देर में जंगल पार करके वे समन्दर के किनारे जा पहुँचे। शान्त प्रभात की ज्योति में अपार सागर विराट् अजगर की तरह पड़ा था। शीतल बयार से शरीर प्रफुल्लित हो उठा, समुद्र के अविराम मर्मर स्वर से जी जुड़ा गया।

अचानक अजीज पूछ बैठा, "नूरू से मालिक की शादी करने में आखिर तुम्हें एतराज क्या है ?"

असगर क्रोध से पागल हो उठा। बोला, "भैंस जैसा बदन है, बुद्धि भी खुदा के फजल से भैंस ही जैसी है ! कह तो चुका कि यह हरगिज नहीं हो सकता, किसी भी तरह नहीं, फिर बारम्बार उसे छेड़ने से क्या लाभ ?"

अजीज भी नाछोड़ बन्दा। कहा, "तुमने यह तो एक बार भी नहीं बताया कि न होने की आखिर वजह क्या है। इतना ही तो एतराज है कि नज्जू मियाँ तुम्हारा दुश्मन था और मालिक उसी का बेटा है ? लेकिन यह क्यों भुला बैठते हो मुखिया, कि ऐसे रिश्तों से कितने ही झगड़े सदा के लिए मिट भी गये हैं।"

असगर का पारा गरम होता जा रहा था। अपने को जब्त करके उसने ठंढे दिमाग से कहा, "नज्जू मियाँ दोस्त था या दुश्मन, उससे इसका कोई सरोकार नहीं। इसके सिवाय अब नज्जू मियाँ तो उठ गया, उससे मेरी दुश्मनी क्या रही ?"

फिर जरा रुक कर बोला, "समझ गये ? मरे आदमी से सारे झंझट-झगड़े चुक जाते हैं। खुदा के आगे दोस्त-दुश्मन नहीं, सब एक आदम के बेटे, भाई-भाई हैं। सभी गुनहगार हैं। अपनी खताओं का, गुनाहों का लेखा लिए ही सब उलझे रहते हैं। सो नज्जू मियाँ का नाम न लो और इस बात का भी जिक्र फिर मत करना।"

अजीज ने कहा, "मैं तो हुक्म के मुताबिक न बोलूँगा, पर औरों की जबान पर ताले कैसे पड़ेंगे ? और नूरू या मालिक को ही कैसे रोकोगे ?"

असगर की आँखें लहक उठीं। उसने गुस्से से कुछ इस तरह ताका कि अजीज डर कर दो हाथ पीछे हट गया। असगर दबे गले से गरिज उठा—"खबरदार जो फिर कहा। अगर नूरू ने यह सब सुन लया तो...."

असगर ने बात पूरी नहीं की। लेकिन उसके हाव-भाव से साफ समझ में आया कि हुक्मउदूली करने पर खैर नहीं। अजीज घबरा गया। मन मारे चुपचाप उसके पीछे चलने लगा। मन में सोचा, बाल-बच्चे रहने से शादी का जिक्र तो आता ही है। जिक्र आने का यह मतलब तो नहीं कि शादी हो ही। इसमें गुस्सा करने की बात क्या है?

असगर ने पूछा, "नूरू से तो ये बातें नहीं बताई हैं?"

अजीज ने जल्दी से कहा, "नहीं-नहीं, उसे क्यों बताता। लेकिन मुखिया, तुमने भी तो नहीं बताया कि इन दोनों के ब्याह में अड़चन कौन-सी है?"

असगर ने मुख्तसर में कहा, "क्या मुझे हर बात की तुम्हें कैफियत देनी पड़ेगी? मैं कहता हूँ, यह शादी हो नहीं सकती, हरगिज नहीं होगी। बस।"

अजीज ने सिर तो हिला दिया, पर उसके भाव से समझ में आया कि उसके शुबहा का अभी अन्त नहीं हुआ। असगर चिन्ता-ग्रस्त होकर चुपचाप टीले पर चढ़ने लगा। ऊपर पहुँच कर उसने एक बार चारों तरफ निगाह दौड़ाई, फिर दोनों घुटनों के बीच मुँह गाड़कर बैठ रहा, चुपचाप। उसकी हालत देख कर अजीज का भी मुँह बन्द होगया। वह जरा देर चहलकदमी करता रहा, उसके बाद पेड़ की एक डाल पर बैठकर समुद्र की ओर देखने लगा।

अचानक एक चीख उठी। असगर की चिन्ता-धारा छिन्न हो गई। डाल पर बैठा अजीज चिल्ला रहा था—"उधर देखो मुखिया, वहाँ।"

डाल पर से उछल कर अजीज असगर मियाँ के समीप आ गया। अँगुली उठाकर दिखाया, दूर सागर में पाल ताने एक नाव तेजी से किनारे की तरफ आ रही थी। दोनों ध्यान से उस तरफ देखने लगे। दबी उत्तेजना से दोनों काँप रहे थे। मारे खुशी के अजीज कूदने लगा। थोड़ी ही देर में मल्लाहों के गीत का स्वर कानों में पहुँचा। असगर ने स्वस्ति की साँस ली। बोला, "नाव जानें किसकी है, इतना जरूर समझ

में आ रहा है, जिसकी भी चाहे हो, दुश्मनों की नहीं है।"

अजीज बोला, "दुश्मन क्यों होने लगा ? यह मालिक की नाव है। वही लौटा आ रहा है।"

असगर बोला, "खुदा करे, तुम्हारी बात सच निकले।"

उसे लेकिन यकीन नहीं आ रहा था। वह खूब गौर से देखने लगा। आखिर नाव है किसकी ? ऐसे वक्त यहाँ क्यों आ रही है ?

धीरे-धीरे मल्लाहों की सूरतें स्पष्ट होने लगीं। इतनी दूर से शकल तो नहीं पहचानी जा सकती थी। ऐसा लग रहा था कि तेज धूप में ताँबे की कुछ जीवित मूर्तियाँ हैं। और वह पतवार के पास कौन खड़ा है ? एक बार ऐसा मन में हुआ कि उसने अजीज और असगर को देख लिया है और हाथ हिलाकर कुछ कहना चाहता है। अजीज चिल्ला उठा—"वह मालिक है, मालिक !"

नाव कमर-भर पानी में आ लगी। ऊपर से मालिक कूद पड़ा। अब तो सन्देह की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। वह पानी तोड़ कर किनारे की तरफ लपका। ये दोनों भी उसकी तरफ बढ़े।

——चार

असगर के घर खुशी की बाढ़ उमड़ आई। केवल वहीं क्यों, तमाम बस्ती में धूम मच गई। चारों तरफ मालिक के लौटने की खबर फैल गई। सब जमात बाँध-बाँध कर उससे मिलने को आने लगे। जिसे देखो, उसी की जबान पर मालिक का नाम। उसके नाम पर कैसे कैसे किस्से फैल गये, कहा नहीं जा सकता। किसी ने कहा, 'तूफान में पड़कर नाव डूब गई। मालिक सात दिन, सात रात सागर की लहरों से लड़ता रहा।' किसी ने कहा, 'समुद्री जानवर के मुँह में जा पड़ा था। भाग्य से एक

शिकारी डोंगी आ निकली, जान बच गई।' लड़के-लड़कियों की भीड़ लग गई। जानें सागर पार से कहाँ क्या-क्या देखकर लौटा है वह!

असगर के चेहरे से ही झलकता था कि उसे अब कोई खेद नहीं रहा। उसका हृदय खुशी से भरपूर हो उठा है। लेकिन अजीज की खुशी की तो इन्तहा ही न थी। नाव को पहले उसी ने देखा था। मालिक को पहचान कर पहले वही समुद्र में कूद पड़ा था। लहरें काटता हुआ उसके पास पहुँच कर उसने उसे जकड़ लिया था। नौजवान मालिक को उसने बच्चे की तरह गोद में उठा लिया था। वह तो मालिक को गोद में उठाये ही किनारे ले आना चाहता था, मगर मालिक ने बड़ा एतराज किया। लाचार उतार देना पड़ा। मालिक ने झुककर असगर की कदमबोसी की। असगर ने दोनों हाथों से लपेट कर उसे छाती से चिपका लिया। जबान बन्द, आँखों में आँसू की धारा।

अजीज पास ही खड़ा था। असगर की गलबाँही से छूटते ही अजीज ने उसे आलिंगन में बाँधा। मालिक से ही क्यों, नाव के एक-एक मल्लाह से गले मिलकर उसका जी नहीं भर रहा था। मालिक को फिर से पाकर अजीज के मन में खुशी का ज्वार उमड़ आया था। जिसे भी सामने पाता उसी को गले लगा लेता। यहाँ तक कि असगर भी नहीं छूटा। उससे गले मिलकर बोला, "मैंने कहा था न कि मालिक जरूर आयेगा। भला कुलसुम की बात भी इधर-उधर हो सकती है!"

असगर ने हँसते-हँसते कहा, "तुम्हारी कुलसुम का कहना सच निकला, सदा ऐसा ही सच निकले।"

मारे खुशी के उछलते हुए अजीज ने कहा, "उसकी बात सदा सच उतरती है; मगर हम समझ नहीं पाते। सोचते हैं, फिजूल बकती है।"

मालिक के लौटने की खुशी में असगर मियाँ ने सारे गाँव की दावत की। जो मल्लाह मालिक को ले आये थे, बहुत कह-सुनकर उन्हें भी एक दिन रुक जाने को राजी किया। कहा, "आप लोग मेरे खोये

बच्चे को लौटा लाये हैं। आप न होंगे तो मेरी यह दावत बेकार होगी।"

खाने-पीने का जैसा इन्तजाम हुआ, वह बयान के बाहर है। एक तन्दुरुस्त बकरा जिबह करके कलिया और कबाब बनवाया गया; समुद्र की तरह-तरह की मछलियों का शोरबा, तरकारी। नूरू ने अपने हाथों मालिक के लिए जतन से पकाया—मुरगी का कोरमा, कवै मछली की तरकारी और रावड़ी। कितने जतन से उसने सब कुछ पकाया; पर तक-दीर उसकी, पास बैठकर वह उसे खिला न सकी। दावत में मालिक को सबके साथ बाहर खाना पड़ा। बेचारी करती क्या? कमरे की खिड़की से मालिक को उझक-उझक कर झाँकती रही।

आँगन में दस्तरखान पर सबके खाने की व्यवस्था की गई। इतने-इतने लोगों के लिए बरतन कहाँ से आते? केले के पत्ते लाये गये सभी मेहमान अपनी-अपनी जगह बैठ गये, तो अजीज ने नमक परसा। नमक के बाद आया भात। मोटे लाल चावल का भात, मगर घर के खेत का था, फिर भाप निकल रही थी। उसकी खुशबू और स्वाद का मुकाबला कहाँ? कटोरों में सालन दिया गया, गोश्त मिली दाल, भुनी मछली, पकी मछली, तरह-तरह की तरकारी, साग-भाजी। अन्त में ऊपर से सेवई। गाढ़े दूध की, नये गुड़ की। भर-भर पेट सबने खाया। खूब छूट कर। ऐसी दावत इस इलाके में तो कभी नहीं हुई थी।

खाना खतम हुआ। दस्तरखान समेटा गया। वहीं जमकर लोग बैठ गये। तै पाया कि मालिक अपने साथ गुजरी कहानी सुनाये। असगर मियाँ हुक्का लिये बैठा। पीनेवालों के लिए तम्बाकू की फरमाइश की। मालिक की ओर घूमकर बोला, "उफ् जो भुगतना पड़ा है तुम्हारे लिए! मगर तुम पर क्या गुजरी है, हम नहीं जानते। सबकी बड़ी ख्वाहिश है सुनने की। तुम अपनी राम कहानी कहो।"

अपनी बात सबसे पहले नूरू को सुनाने की इच्छा थी; लेकिन अब असगर का हुक्म कैसे टाले? बोला, "इस भरी दोपहरी में क्या कहानी अच्छी लगेगी? सुनना ही है, तो रात को सुनो चाचा।"

असगर बोला, "ऐसा भी कहीं होता है। ये सुनने आये हैं। रात तक थोड़े ही रहेंगे ?"

मालिक को फिर भी आगा-पीछा करते देख सबने उस पर दबाव डाला। बोले, "दरअसल तुम्हारी कहानी सुनने ही को तो हम आये हैं। उसके बिना इतनी बड़ी दावत ही बेकार हो जायगी।"

असगर को जरा बुरा तो लगा। मगर इतने दिनों पर मालिक लौटा है, नाराजी क्यों दिखाये। समझा कर कहा, "दस के बीच रहने से उनकी बात रखनी चाहिए। जब सब की ख्वाहिश है तो सुना दो चटपट। खास कर ये मल्लाह तो रात तक नहीं रह सकेंगे, जो तुम्हें लेकर आये हैं। औरों की खातिर न करो मगर इनकी खातिर तो करनी ही होगी।"

"उन्हें तो मैं अपना सारा किस्सा सुना ही चुका हूँ।" मालिक ने बच्चे की तरह कहा।

असगर बोला, "बचपना मत करो मालिक। लोग तुम्हें मानते हैं, इसीलिए तुम्हारी कहानी सुनना चाहते हैं, शुरू कर दो।"

बेबस की तरह मालिक ने अपनी निगाह इधर-उधर दौड़ाई कि नूरू कहीं है या नहीं। अजीज बगल में खड़ा था। झुक कर वह उसके कान में फुसफुसाया—"तुम पहले नूरू बीबी को सुनाना चाहते थे, क्यों ? वह खिड़की के पास बैठी सुन रही है। तुम कहो।"

मालिक की कृतज्ञता भरी आँखें देखकर अजीज निहाल हो गया। उसने फिर एक बार खिड़की की ओर देखा। चिक हिल उठी। समझ गया कि नूरू भी कहानी सुनने को बेताब हो रही है।

अजीज का वह फुसफुसाना और खिड़की पर मालिक की चकित दृष्टि, असगर की आँखों से यह सब कुछ न बच पाया। उसने क्रोध-भरी दृष्टि से एक बार अजीज को देखा और बोला,, "मालिक, सब इन्तजार में हैं। तुम अपनी कहानी शुरू कर दो।"

अब मुश्किल में पड़ गया वह। नूरू को वह प्यार करता है, इसी-

लिए कहाना पहले उसी को सुनाने की इच्छा थी उसकी। उसे पता था कि साँझ के खान-पान के बाद बाहर कोई नहीं रहता। हाथ में हुक्का लिए असगर बरामदे पर बैठा आँखें बन्द किये धुआँ उड़ाता रहेगा। तब उसके पास बैठी रहेगी नूरू। उसी नितान्त घरेलू वातावरण में वह अपनी कहानी सुनायेगा। मगर वह न हुआ। अब इतने लोगों में, सो भी दिन के खुले प्रकाश में, उसे कहानी कहनी पड़ेगी। पसीना छूटने लगा। चारों ओर देखा। सब की उत्सुकता भरी निगाहें उसी पर टिकी थीं। अचानक उसे लगा, ये सबके सब बेगाने हैं, ऐसों की मजलिस में वह अपनी कहानी कैसे कहे ?

लेकिन कहानी उसे कहनी ही पड़ी। खाँस कर गला साफ कर लिया और शुरू कर दिया।

"आज पूरे चालीस दिनों के बाद मैं आप लोगों के, अपनों के बीच आया हूँ। दिन महज़ चालीस गये, मगर ये चालीस दिन किस तरह गुजरे, एक अल्लाह जानता है कि मैं ही जानता हूँ। उस दिन भी ऐसी ही धूप निखरी थी। सारी दुनिया फल फसल में हँस रही थी। आसमान में हेमन्त की सुनहली धूप, पके धान से खेत झिलमिला रहे थे। कटनी शुरू हो गई थी। रोज की तरह उस दिन भी मैं निगरानी के लिए खेत गया। यहाँ-वहाँ करता रहा। सच पूछिए तो निगरानी करने की वैसी जरूरत भी न थी। हमारे कमिये मजूरे काम के हैं, फिर असगर चाचा-जैसा खुले हाथ का मालिक मिलना भी मुश्किल ही है। इसीलिए सब अपने ही मन से काम करते हैं,, ताकीद करते रहने की जरूरत नहीं पड़ती।"

मालिक की बात पर सब हँसे। बात ठीक ही थी। असगर कमिये-मजूरों से पैसे-कौड़ी के लिए एक भी खींचातानी नहीं करता। काम भी कड़ा चूर लेता है। खरा मजूरी, चोखा काम। कोई अगर जी चुराता, तो दुबारा उसे असगर के खेतों में पहुँचना नसीब न होता।

"मैंने देख लिया, काम-काज ठीक चल रहा है। मेरे खड़े रहने की

जरूरत नहीं है। जी में आया, जानें ऐसा मौका फिर कब आये, चलूँ, डोंगी से जरा समुद्र तक घूम आऊँ। हमारी यह नदी जहाँ समुद्र से जा मिली है, वहाँ एक टीला है। उस टीले पर बैठकर सागर की लहरों का कौतुक देखना मुझे सदा से भला लगता है। वहीं पर चाची की कब्र भी है। उस कब्र की जियारत किये बिना अगर हफ्ता गुजर जाय तो मुझे अच्छा नहीं लगता। खयाल आता कि चाची बुरा मानेंगी।"

मालिक ने रुक कर एक बार नूरू के कमरे की तरफ फिर, असगर मियाँ को देख लिया। खिड़की का परदा थोड़ा हिल उठा। मालिक को लगा, क्षण-भर के लिए किसी की काली-काली आँखें परदे की फाँक से झाँक गईं। असगर दोनों आँखें बन्द किये बैठा था।

मालिक कहने लगा—"समुद्र के पास पहुँचा तो भाटा पड़ चुका था। डोंगी प्रवाह के सहारे सागर की ओर बह चली। अच्छा लगा। डाँड़-पतवार है। जब चाहूँगा लौट आऊँगा। कुछ दूर क्यों न चला जाय। कई बार जा भी चुका था। मनुष्य सोचता कुछ है, होता कुछ और है। समुद्र में पहुँचा ही था कि दूर पर बजरे जैसा कुछ नजर आया। अचरज हुआ। समुद्र में बजरा कैसे आया? सोचा, बजरा नहीं होगा। मल्लाहों की ही नाव है। चूँकि समन्दर में आई है, इसलिए जरा बड़ी नाव लाई गई होगी। मगर मल्लाह तो रात को जाल डाला करते हैं और भोर होते-न-होते चल देते हैं। अब तक क्या करते रहेंगे वे? बड़ा कुतूहल हुआ। मैं बजरे की ही तरफ बढ़ चला।"

जो मल्लाह मालिक को पहुँचाने आये थे, उनके सरदार ने कहा, "दरअसल तुम खुश्की पर रहनेवाले लोग हो, पानी की दुनिया की खबर नहीं रखते, वरना ऐसी गलती न होती। हम लोग या तो साँझ को मछली मारते हैं या रात के अखीर में। धूप जहाँ गरम हो आई कि मछलियाँ गहरे पानी में जा छिपती हैं, साँझ से पहले फिर नहीं निकलतीं। इसलिए हम लोग अँधेरा रहते ही जाल डालते हैं और किरन फूटते-फूटते अपनी राह लगते हैं।"

मालिक ने हँस कर कहा, "ठीक कहते हो सरदार। हम जमीन के लोग पानी की दुनिया की बात क्या जानें ? खैर। मैंने जैसा सोचा था, वही बयान कर रहा हूँ। मुझे उत्सुकता हुई। सोचा, जरा बढ़ कर देखूँ। अगर मल्लाह हुए तो उनसे समुद्री मछली लूँगा। खारे पानी की मछली असगर चाचा को खूब भाती है। धारा में डोंगी एक तो यों ही तेज जा रही थी, फिर खेना शुरू कर दिया। कोई आध मील गया हूँगा। किनारे के गाछ-बिरिछ छोटे दीखने लगे। अचानक मैंने देखा, वह बजरा तो नहीं है, जहाज है। किसका जहाज है यह ? कहाँ से आया ? ज्यादा सोचने का मौका नहीं मिला। जहाज हिल उठा और मेरी तरफ आने लगा। कुछ पास आने पर देखा, बजरा या मल्लाही नाव से वह जरा भी नहीं मिलता। किनारे-किनारे किले जैसी ऊँची दीवार, बीच में काफी चौड़ाई। दीवारों में करीने से कटे छेद, उन छेदों में डाँड़ लगे हैं। हवा न भी चले, तो जहाज तेज जा सके। मैंने ऐसा जहाज या नाव इसके पहले कभी न देखी थी। क्या करूँ न करूँ, सोच ही रहा था कि उन लोगों ने जहाज से पानी में नाव उतारी। नाव में लोग भरे थे। कुछ लोग डाँड़ चला रहे थे। कुछ हाथों में भाले लिये खड़े थे। सूरज की रोशनी में तेज भाला चमक रहा था। मेरे तो प्राण मारे भय के उड़ गये। मैंने झटपट नाव का मुँह किनारे की तरफ मोड़ दिया। जीजान से डाँड़ चलाना शुरू किया। इतने में नाव से जोरों की आवाज आई। पूरी बात तो समझ नहीं सका, पर लगा कि वे मुझे रुकने का हुक्म दे रहे हैं। मैंने डाँड़ पर और जोर मारा। मैं ठहरा अकेला। उनकी नाव को दसों खेनेवाले। पार पाऊँ तो किस तरह ? देखते-ही-देखते वे पास आ धमके। चिल्ला कर कहा, 'भला चाहते हो, तो रुक जाओ।' मैं मगर खेता ही जा रहा था। उन्होंने भाला फेंक कर मारा। भाला डोंगी में धँस गया। सारी डोंगी पत्ते की तरह काँप उठी। फिर आवाज आई—'कहता हूँ रुक जाओ ! अबकी भाला फेंका नहीं कि आर-पार बिंध जाओगे।' भाग निकलने की कोई सूरत न देख मैं रुक गया। नाव डोंगी से आ भिड़ी।

भाला लिये एक भारी जवान मेरी डोंगी पर कूद पड़ा।"

मालिक थम गया। लोगों में हलचल मच गई। सब ने एक साथ ही पूछा—"कौन थे वे ? समुद्री डाकू ?"

मालिक बोला, "तकदीर का लिखा कौन मेट सकता है। माँ-बाप की दुआ थी, हयात थी, इसी से लौट कर आज आप लोगों को अपनी रामकहानी सुना पा रहा हूँ। नहीं तो हर्मदों के पल्ले पड़कर भी कोई लौट सकता है ? वे काला पानी पार करके आते हैं। लगता है, दया-माया को वे वहीं ताक पर रख आते हैं। खुदा का शुक्र कि मुझे जिन्होंने पकड़ा था, वे हर्मद नहीं थे। वे डाकू थे। हाँ, उनमें शायद एक हर्मद था। खल्ली जैसा सफेद चमड़ा। माथे के बाल कुछ लाली लिये, मानो मेंहदी से रँगे हों।

"जो उछल कर मेरी डोंगी में आ पड़ा, दल का सरदार वही था। क्या मजाल कि उसे एक बार देखकर भूला जा सके, छोटी-छोटी तिरछी आँखें। लग रहा था कि कपाल खुरच कर आग के दो अँगारे किसी ने जड़ दिये हैं। काले-काले साही के काँटों जैसे खड़े पैने बाल, दाढ़ी-मूँछ नदारद, छाती तक पर बाल नहीं,—रङ्ग ताँबे का। इतना लम्बा-तगड़ा आदमी मैंने अपनी जिन्दगी में नहीं देखा, न शायद फिर देख पाऊँगा। मुझे ही लोग लम्बा बताते हैं; मगर उसके पास खड़ा होकर मैं वामन-जैसा लग रहा था। चमड़े के नीचे उभरी और चमकती पेशियाँ। इतना गठीला बदन सच ही मैंने कहीं नहीं देखा। मैं अपनी मुसीबत भूल कर एक टक उसी को देखने लगा।

"उसने रुखाई से डाँट बताई—'इस तरह देख क्या रहा है ?' बड़ी ही रूखी आवाज, जैसे लोहे पर रन्दा चल रहा हो। बात मैं समझ सका। उनके उच्चारण का ढङ्ग जरूर जुदा था, पर भाषा अपनी-जैसी ही थी।

"क्या जवाब दूँ, यह सोच ही रहा था कि वह फिर गरज उठा—'तू है कौन ? क्या कर रहा था यहाँ ?'

"मुझे जवाब देने का मौका भी न दिया। दोनों हाथों उसने मुझे उठा लिया और जैसे जिबह की बकरी को कसाई फेंकता है, उसी तरह अपनी नाव पर फेंक दिया। मेरी डोंगी को कसकर अपनी नाव से बाँधा और जहाज की तरफ चल दिया।

"नाव पर जहाँ मैं गिरा, वहीं पड़ा रहा। जब तक जहाज तक नहीं पहुँच गया, किसी ने कोई बात नहीं कही। डर और गुस्से से अचेत-सा पड़ा था। एकाएक पीठ पर ठोकर खाकर होश में आया। सरदार मेरी पीठ पर पाँव रखे खड़ा था। ठोकर मार कर बोला—'चल, जहाज पर चल।' करता क्या, वही किया। जहाज के पास रस्सी की सीढ़ी थी। सीढ़ी से चढ़ते वक्त भी सरदार ने दो-तीन लातें जमाईं।

'क्रोध से मैं चिल्ला उठा—'नाहक मुझे बार-बार मार क्यों रहे हो?'

"सरदार ठठाकर हँस पड़ा गोया कोई हँसी की बात हुई हो। हँस चुकने के बाद उसने फिर लात मारी।

"मैंने भी जान पर खेल कर कहा—'खबरदार जो बार-बार लात मारी।'

"सरदार ने धमकी दी—'बेअदब छोकरे, चुप रह वरना खैर नहीं।

"उसके टूटे-टूटे शब्द और खौफनाक भाव-भंगी से मेरे बदन का खून पानी हो गया। जरा रुक कर वह बोला—'देख, मेरा गुस्सा मत भड़का, वरना तेरा ही नुकसान होगा।'

"मेरी छाती पत्थर हो आई। सोचा, डकैत के हाथों आ फँसा हूँ। मेरे लिए इससे बुरा और क्या होगा? या तो ये मुझे मार डालेंगे या कहीं ले जाकर बेच देंगे। गुलाम की जिन्दगी और मौत—इन दो में से तो मौत ही भली है। पल में मेरी आँखों के आगे सारी जिन्दगी की तसवीर नाच उठी। यहाँ का शान्तिमय जीवन, घर-द्वार, बन्धु-बांधव, असगर चाचा का स्नेह—सब याद आया। सोचा, अगर घर लौटना भाग्य में नहीं ही बदा है तो गुलाम बन कर रहने से मौत

बेहतर है।

"ये बातें सुनाने में मुझे समय लगा, पर सोचने में एक लमहा भी नहीं। बिजली की तरह सारी बातें दिमाग में खेल गईं। मैंने कड़क कर सरदार से कहा—'जो चाहे तुम करो, मैं उसकी परवाह नहीं करता।'

"मेरे कड़कने का नतीजा निकला। बुदबुदा कर सरदार ने मुझे गालियाँ तो दीं, पर फिर से लात न मारी। साथ के एक आदमी को पीठ पीछे मेरा हाथ बाँधने का आदेश देकर वह वहाँ से चला गया।

"मेरे हाथ बाँधते हुए उस डाकू ने कहा—'अबे छोकरे, तेरी किस्मत अच्छी है, नहीं तो सामने जवाब देकर सरदार के आगे कोई जिन्दा नहीं रह सकता। इससे भी मामूली बेअदबी के कसूर पर सरदार ने दल के लोगों तक को हंगर के मुँह में डाल दिया है।'

"मैंने कोई जवाब न दिया। कहता भी क्या। डकैत के घेरे में आ पड़ा हूँ, मरना तो है ही। और जब मरना ही है तो मर्द की तरह क्यों न मरूँ।

"इसी बीच सरदार लौट आया। आग में तपा कर सीखचे लाल कर लिये गये थे। चिमटे से वही लहलहाता एक सीखचा उसने मेरे आगे रखा। वह मेरे बदन में तो नहीं लगा, पर उसके ताप से आँख-मुँह झुलस गया। मैं मगर जरा भी न डिगा। जिसे मरना ही है, गरम सीखचे से डर जाने से उसका काम कैसे चलेगा?

"सरदार को शायद इससे खुशी ही हुई। पास ही एक गमले में पानी भरा था। तपे सीखचे को उसने उसी में डाल दिया। ऐसी आवाज उठी, मानों साँप फुफकार उठा हो। मुझसे बोला—'छोकरे, तुझमें हिम्मत है। मैं तेरी जान न लूँगा, तुझे अपनी जमात में शामिल कर लूँगा। भर्ती करने से पहले कुछ सवाल पूछने हैं। ठीक-ठीक जवाब देना। कहीं झूठ कहा तो सीखचों से तेरी बोटी-बोटी नोचकर हंगरों को खिला दूँगा।'

"मैंने कहा—"डर दिखाना फजूल है, मैं मरने से बिलकुल नहीं

डरता। पूछना है सो पूछो। झूठ कहने की मेरी आदत नहीं।

"सरदार बोला—'अपना नाम-पता बता। तू जरूर ही उस चौंर से आया है। क्या नाम है उस चौंर का? वहाँ का मुखिया कौन है? वहाँ दौलत और औरत मिलेगी? मुखिया आदमी कैसा है? आसानी से कहना मान लेगा कि सख्ती करनी पड़ेगी?'

"उसकी एक-एक बात तीर की तरह मेरी छाती में चुभने लगी। हाय अल्लाह, तुमने मुझे किस आफत में ला पटका! जवाब देना ही पड़ेगा। न दूँ तो मुश्किल। झूठ कहूँ तो भी आफत। क्योंकि ये डाकू हमारे चौंर पर धावा जरूर बोलेंगे। उसका जो नतीजा होगा, सोचकर ही रोंगटे खड़े हो गये। घर-बार फूँकेंगे, लोगों को कत्ल करेंगे, फिर औरतों की आबरू लूटेंगे। बाद में उन्हें बाँदियों के बाजार में बेंच डालेंगे। मुझपर जो बीतना है सो बीते, मगर मेरे बन्धु-बान्धव इन डाकुओं के हाथ जान गँवायें, यह मुझे कबूल न था। उसी दम मैंने निश्चय कर लिया। मेरी जो दुर्गत ये चाहें कर लें, पर मैं इस कोशिश से जान रहते बाज न आऊँगा कि ये हमारे यहाँ हमला न कर सकें।'

"सरदार ने पूछा—'क्यों, जवाब क्यों नहीं देता?'

"मैंने तुनक कर ही जवाब दिया—'मैं तुम लोगों की नादानी पर हैरान रह गया हूँ। तुमने बियान चौंर का नाम नहीं सुना? तलवार के एक ही वार से हर्मदों के सरदार अरमुजा की गर्दन असगर मियाँ ने काट गिराई थी। उसका नाम तुम नहीं जानते? यह वही चौंर है। वहाँ रहता है असगर मियाँ और उसके संगी-साथी। चौंर में उनके मकान नहीं हैं, बस्ती में हैं। चौंर में भी भला औरतें रहती हैं? मैं भी उन्हीं का आदमी हूँ। बरसात के पहले चौंर में आया करता हूँ, धान की कटनी के बाद गाँव लौट जाता हूँ। मेरी बात का एतबार न हो तो चलो, मैं तुम सबों को राह दिखाये चलता हूँ। मगर कहे देता हूँ, तुम्हारी जमात का एक भी आदमी वहाँ से जिन्दा न लौट सकेगा।'

"सरदार ने तीखी नजर से मुझे देखा, मानों वह मेरे अन्तस्तल

तक को देख लेगा। जब मैंने मरने पर ही कमर कस ली तो डरता क्यों? वैसी ही तीखी दृष्टि से मैं भी उसे ताकता रहा। जरा देर बाद सरदार फिर हँस उठा। उसकी उस हँसी में उल्लास नहीं था, बल्कि जो सुनता, भय से उसके प्राण काँप जाते। बोला—'तेरा कलेजा तो कम नहीं। कहाँ का और कौन असगर मियाँ, क्या पिद्दी क्या पिद्दी का शोरबा! वह मोंगयों के आगे टिकेगा? कहते हुए तुझे डर न लगा?'

सभी सुननेवाले एक साथ बोल पड़े—"तो तुम मोंगयों के चंगुल में जा पड़े थे—डकैतों के उस खूँखार सरदार के?"

असगर मियाँ भी चौंक उठा। बोला, "खुदा का लाख-लाख शुक्र है कि ऐसे शैतान के कब्जे से तुम्हें सही-सलामत लौटा लाया है।"

मालिक ने एक बार चारों तरफ देखा। सभी के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। मोंगयों का नाम सुनते ही सब एक दूसरे से सट गये। अकेले मानों कोई उसका नाम भी नहीं सुनना चाहता। मालिक ने नूरू की खिड़की की तरफ नजर दौड़ाई। वहाँ कोई खटका नहीं हुआ। वह बेचारी तो काठ हो गई थी। उसकी आँखों से केवल आँसू की धारा बह रही थी।

थोड़ा रुक कर मालिक बोला, "मोंगयों का नाम सुनकर मुझे भी लगा कि जाड़े की रात में किसी ने जैसे रीढ़ के भीतर से ठंढा पानी ढाल दिया है। मेरा बदन सिहर गया, पर भय को बलपूर्वक दबाकर मैंने पूछा—'तुम मोंगयों हो? हाँ, मैंने पहले भी यह नाम सुना है। सुना है कि तुम उसी गाँव पर हमला करते हो जहाँ जवाँमर्द नहीं। असगर मियाँ ने जानें कितनी बार कहा है कि कभी तुम मिल जाओ तो तुम्हें औरतों और बूढ़ों पर हमला करने का मजा चखवाए। जब इधर आ ही निकले हो तो एक बार उससे लोहा लेकर देख ही लो।'

"मोंगयों कुछ बोला नहीं पर गुस्से से उसका चेहरा स्याह हो उठा। अँगारे जैसी तो उसकी आँखें थीं ही, अब वे और लहक उठीं। भीतर से मैं डर तो गया, पर ऊपर-ऊपर यही दिखाया कि गुस्सा हुआ तो मेरी

बला से। जबर्दस्ती हँस पड़ा मैं , बोला, 'मेरी बात जँची नहीं क्या ? तुम तो बड़े वीर हो, बहादुर हो। चलो। असगर मियाँ के आगे तुम्हारी वीरता की परख हो जाय।'

"मोंगयों ने मेरी बात पर ध्यान ही नहीं दिया। अपने साथियों की तरफ मुड़कर बोला—'क्या इरादा है, इस चोर को आजमा लिया जाय ?'

"डाकुओं ने कहा—'नाहक फसाद खड़ा करने से क्या फायदा ? यह कम्बख्त असगर मियाँ का एक मामूली प्यादा है। यही जब हमारे चंगुल में रहने के बावजूद ऐसा रोब गालिब कर रहा है, तो उनसे निबटना मुश्किल ही जानिए, जो कि अपने हाथों से बाहर हैं। फिर लड़ाई ले भी तो किस लिए। न तो इस चोर में औरतें हैं, न धन-दौलत। यहाँ तो लोग महज खेती के दिनों में आते हैं। अभी-अभी तो कटनी शुरू हुई है। अभी खास कुछ नहीं मिलने का। इससे बेहतर है और कहीं चलिए। वहाँ औरत और सोना, दोनों मिलेंगे।'

"बातें तो वे फुसफुसा कर कर रहे थे, मगर आफत में पड़ने से आँख कान दोनों सजग हो जाते हैं। सारी बातें सुन न पाने के बावजूद समझा, इसलिए उन्हें और भी हौलदिल करने की नीयत से मैंने कहा—'मेरी बात पर यकीन नहीं आता ? चलकर दो हाथ देख ही लो। असगर मियाँ तो तैयार बैठा है, पूरा स्वागत करेगा। मैं पूछता हूँ, तुम्हें पता है, मैं यहाँ क्यों आया ?'

"मोंगयों बिगड़ उठा—'बेअदब जबान, चुप रह। नहीं तो तेरी बोलती सदा के लिए बन्द कर दूँगा। तुझे बक-बक करने को किसने कहा ?'

"मोंगयों ने साथियों से फिर सलाह-मशविरा किया। किन्तु अबकी बातें इतनी दबी-दबी हुईं कि मैं कुछ भी सुन न सका। जरा देर बाद वह मेरे पास आया। बोला—'तू सच कह रहा है, इसका सबूत क्या है ? सच ही क्या वहाँ सोना और सुन्दरी नहीं है ?'

"मैंने भी उसी ढङ्ग से उत्तर दिया—'विश्वास न करो तो क्या करूँ ? सब चलकर देख ही लो। यह भी देख लेना कि तब मैं तुम्हारी कैद में रहता हूँ या तुम लोग मेरे कैदी होगे ?'

"मेरी बात का असर हुआ। वे कुछ न बोले। जरा देर में उन्होंने जहाज का पाल खोल दिया। जहाज वहाँ से आगे बढ़ चला। जब तक बना, दोनों आँखें फैला कर अपने चौंर को देखता रहा। जब दिगन्त में चौंर की रेखा तक खो गई, तब मन-ही-मन खुदा को धन्यवाद दिया कि उसने इन शैतानों से चौंर को बचा लिया। मेरी दोनों आँखें भर आईं। अब तक की दुनिया, अब तक का जीवन पीछे छूट गया। सारे सुख-आनन्द, आशा-विश्वास को दूर हटा कर किस कठोर अजाने जगत् में लिये चल रहे हो खुदा !

"पीठ पर दोनों हाथ बँधे, पाँवों में बेड़ियाँ। हिलने-डुलने में भी तकलीफ। लम्बा दिन काटे नहीं कटता। भूख-प्यास से शरीर अवश होने लगा; हजारों तरह की चिन्ता-भय से जी जैसे पत्थर होने लगा। आखिर साँझ को मेरा एक हाथ खोला गया। एक प्लेट में पानी जैसी दाल और दो-तीन मोटी-मोटी रोटियाँ मेरे सामने लाकर रक्खी गईं। भूख से पेट जला जा रहा था। रोटी-दाल चट कर गया।

"मोंगयों खड़ा-खड़ा मेरा खाना देख रहा था। अचानक उसने एक तमाचा कस दिया। अचानक मार खाकर मैंने अपना सिर हटा लिया। मोंगयों खिलखिला कर हँस पड़ा। बोला—'इसी में दून की हाँक रहा था। थप्पड़ से इस कदर डरता है और बड़ाई छाँटता है कि असगर मियाँ मोंगयों से लोहा लेगा ?'

"मैंने कोई जवाब नहीं दिया। सोचा, डकैतों की बात है। उनके मन मुताबिक न चलो तो और भी सतायेंगे। सो चुपचाप सह लेना ही बेहतर है। मोंगयों ने फिर एक थप्पड़ जमाया। इस बार मैं पहले से ही तैयार था। निर्विकार की नाईं सह लिया। मोंगयों ने मेरे चेहरे की तरफ देखा, फिर मेरी ताकत की जाँच के लिए उसने मेरे हाथ-पैर की पेशियाँ

दबा कर देखीं। एक बार जी में आया, एक हाथ तो खुला ही हुआ है, लगाऊँ दो-चार। फिर सोचा, दोनों हाथ खुले रहने पर भी जिससे पार पाना मुश्किल है, उससे बँधे हाथ-पाँव से लड़ना पागलपन है।

"कठोर स्वर में मोंगयो ने हँसकर कहा—'तुम्हारी पेशियाँ बुरी नहीं हैं। अभी उतनी सख्त जरूर नहीं हुई हैं। हम लोगों के साथ रहने से कुछ ही दिनों में इस्पात बन जायँगी।'

"कुछ ठहरकर बोला—'छोकरे, मैं जो कह रहा हूँ, मन लगा कर सुन। तेरी बोल-चाल, रङ्ग-ढङ्ग मुझे अच्छा लगा। इसी से तू अभी तक जिन्दा है। मेरा यह तरीका है कि आमतौर से मैं किसी को कैदी बना कर नहीं रखता। कैदी पर पहरा रखना पड़ता है, खाना-खूराक देनी पड़ती है। इसलिए जिसे भी पकड़ता हूँ, समन्दर में डाल देता हूँ। जीव-जन्तु खा जाते हैं। कभी-कभी कोई जँचनेवाला जवान हाथ लग जाता है, तो उसे जंजीरों से जकड़कर डाँड़ खेने में लगा देता हूँ। तेरा भाग्य अच्छा है कि न तो तुझे मौत के घाट उतारा, न डाँड़ खेनेवालों में शामिल किया।'

"वह थोड़ा रुक गया। मतलब यह कि मैं उसकी बातें भली तरह समझ लूँ। बाद में धीरे-धीरे बोला—'तुझे जिन्दा रहने का एक मौका दूँगा, बशर्ते कि तू मेरी बात माने। न मानेगा तो खैरियत नहीं। ज्यादा लोगों को मुझसे ऐसा सुयोग नहीं मिलता। और जो ऐसा सुयोग पाकर भी गँवा बैठते हैं, उनकी जगह समुद्री जीवों के पेट में होती है।'

"वह हँस पड़ा। वह हँसी उसकी नाराज़ी से भी ज्यादा खौफनाक थी। मुझे चुप देख कर बोला—'तू यह भी नहीं जानना चाहता कि तेरी तकदीर में लिखा क्या है? तेरे मन में डर नहीं?'

"मैंने उसकी ओर देखते हुए कहा—'उम्मीद रखने वालों को ही डर लगता है। मैं उम्मीदों से हाथ धो बैठा हूँ, इसीलिए मुझे कोई डर नहीं। आज सुबह तक मैं एक किसान था। जो जी में आया किया, करता रहा। परवाह न की किसी की। अब मैं तुम्हारा कैदी हूँ। कब

मेरी कौन-गत करोगे, तुम्हीं जानो। बहुत करोगे, मार डालोगे मुझे। इससे ज्यादा और क्या कर सकते हो ? मेरे लिए मरना-जीना समान है, फिर कैसा तो भय और कहाँ की चिन्ता ?'

"मोंगयों हँसा। कहने लगा, 'इसी तेजी की वजह से तो मैं तुझे मार नहीं रहा हूँ। खैर, मेरी बात मान, तू दल में शामिल हो जा।'

"मैं अवाक् रह गया। ख्वाब में भी यह नहीं सोच सका था कि मोंगयों मुझे अपनी जमात में शामिल होने को कहेगा। कोई जवाब न दे सका। चुप रह गया।

"अधीर होकर मोंगयों ने कहा—'चुप क्यों हो रहा ? तुझ पर मुझे दया हो आई है, इसी से यह मौका दे रहा हूँ। इससे चूकेगा तो आप ही पछतायेगा।'

"बात न मानने पर अपना क्या नतीजा होगा, इसकी कल्पना से ही रोंगटे खड़े हो गये। मगर इस प्रस्ताव को कबूल भी कैसे कर लूँ ? डाकुओं की जमात में मिलने के विचार मात्र से मन घृणा से भर आया। पर न मिलूँ तो नसीब में मौत लिखी है। कह तो दिया था कि मैं मौत की परवाह नहीं करता, लेकिन अब समझा कि वह महज़ एक बात थी। उसके हाथों पकड़े जाने के बाद शुरू में मुझे एक ही फिकर थी कि चौंर को इनके हमले से बचाया कैसे जाय ? उस आवेग में मौत डरावनी नहीं मालूम हुई, प्राण देकर भी चौंर को बचा लेने की धुन सवार थी। अब वह उत्तेजना जाती रही। खून ठंढा हो गया, इसलिए मौत का विचार तक डरावना लगने लगा। यह भी खयाल आया कि जिन्दा रह पाऊँ तो कभी-न-कभी अपने यहाँ लौट सकता हूँ। मर जाने से तो किस्सा ही खत्म हो जायगा। मगर डाकू बन कर जिन्दा रहने से भी क्या लाभ ? कौन-सा मुँह लिये लौटूँगा। नहीं, इससे तो मरना ही अच्छा।

"मन में एक उथल-पुथल सी होने लगी। कुछ तै नहीं कर पा रहा था। मोंगयों ने टोका—'अबे जल्दी जवाब दे, वरना तेरी तरफ से मैं ही जवाब दे दूँगा।'

"सोचा, जरा सोच-समझ कर जवाब दूँगा। गिड़गिड़ा कर बोला—'सरदार, तुम्हारी बातों से मेरे अन्दर एक तहलका-सा मच गया है। मैं एक मामूली किसान रहा हूँ। स्वप्न में भी यह बात नहीं आई थी कि कभी मुझे डाकुओं के दल में भी शामिल होना पड़ेगा। मुझे जवाब देने के लिए थोड़ा समय दो। जब तुमने मुझ पर इतनी दया की है, तो और थोड़ा सब्र करो।'

"मोंगयों ने डाँट बताई—'अबे छोकरे, तू डकैत किसे कह रहा है? हम डाकू नहीं हैं, हम समन्दर के राजा हैं। बाहुबल से जो जीतते हैं, उसी को भोगते हैं। हम किसी के हुक्म के बन्दे नहीं, अपने कानून से चलते हैं।'

"मैंने कहा—'ग़लती हो गई हो तो माफी बख्शो सरदार! इसी से मैं सोचने को थोड़ा समय माँगता हूँ। मैं जिस दुनिया में इतने दिनों तक रहा, उससे तुम्हारी दुनिया का कोई मेल नहीं है। छुटपन से ही मैंने राजा के हुक्म पर चलना सीखा। तुम अपने कानून पर चलना सिखा रहे हो। नया सबक सीखने में थोड़ा समय तो लगेगा ही। मुझे समय दो।'

"मोंगयों ने कहा—'पता नहीं आज हो क्या गया है मुझे कि तुझे मार डालने की ख्वाहिश नहीं हो रही है। अच्छा सोच, सोच ले भर पेट। जवाब मगर मेरे मन माफिक देना। वरना जो गत होगी तेरी, वह क्या फिर याद दिलाना होगी?'

"वह चला गया। मैं अकेला बैठा सोचने लगा। सूरज डूब चुका था, लेकिन लहरों के माथे पर किरनों की चमक तब भी बाकी थी। आँखों देखने लगा कि अब तक कमिये-मजूरे खेतों का काम चुका कर घर लौट गये हैं। चौर के घर-घर में साँझ की दीया-बत्ती होने लगी है। वहाँ की सुख-शान्ति की याद आते ही आँखें भर आईं। हाय अल्लाह! यह किस गुनाह की सजा भुगत रहा हूँ मैं।"

——पाँच

मालिक यहाँ आकर थम गया दुःख तो बीत गया था। मगर उसकी चुभन ने उसे इतना कातर कर दिया कि कुछ देर तक मुँह से बात ही नहीं निकली। उसने दीर्घ निःश्वास लेकर नूरू की खिड़की की तरफ देखा। उसे लगा, नूरू भी लम्बा निःश्वास छोड़ रही है। मजलिस के भी सभी लोग सन्न थे। किसी के मुँह से बोल नहीं फूटा।

अपने को सँभाल कर मालिक ने फिर कहना शुरू किया—"वह रात कैसे गुजरी, बता सकना मुमकिन नहीं। रात काटे नहीं कटती थी, एक के बाद दूसरी चिन्ता मन को मथने लगी। दुःखी से दुःखी आदमी भी थोड़ा सोकर आराम पाता है, मगर मेरी आँखों में नींद न थी। एक-एक घड़ी पहाड़ हो रही थी, मानों वे भारी पत्थर की तरह मेरी छाती पर सवार हो गई हों। आसमान की ओर ताका। निर्दयी तारे जल रहे थे। उनमें भी मेरे लिए दया-माया न थी। समुद्र की हवा से थोड़ी सर्दी-सी लगी। भूख-प्यास के मारे आँखों में तन्द्रा तक नहीं।

"रात की आखिरी घड़ियों में आसमान फीका हो आया। मद्धिम होते-होते तारे जाने कहाँ खो गये। पूरब क्षितिज में प्रकाश की रेखा झाँकने लगी। प्रभात लोगों के लिए आशा और आनन्द का सन्देशा लाता है। मुझ अभागे के लिए वह नई यंत्रणा, नये जुल्मोसितम ले कर आया।

"सुबह होने को आई पर सारी दुनिया तब भी सो रही थी। केवल मेरी ही आँखों में नींद का नाम नहीं था। दिल फरियाद कर उठा—या खुदा, तमाम दुनिया आराम में पड़ी है, चोर-डकैत तक सो रहे हैं, केवल मुझी अभागे के भाग्य में तुमने नींद और विश्राम नहीं लिखा?

"पूरबी आकाश में सूर्योदय हुआ। सागर और आकाश नये प्रकाश से समुद्भासित हो उठे। लहरों के माथे पर मानो माणिक झल-मला रहे हों! सुबह भा की स्निग्ध हवा से मेरा शरीर भी जुड़ा गया। लगा, चौर के किनारे से मेरे लिए हवा आशीष और स्नेह की वाणी ढो लाई है।

"किस वक्त झपकी आ गई, नहीं जानता। मनुष्य के सहने की भी एक सीमा है। थका-हारा शरीर और सह नहीं सका। अवसाद का पर्दा उतरा और थोड़ी देर के लिए सभी दुःख-ताप को भुला गया। चेतना लौटी तो शरीर की गाँठ-गाँठ में असह्य पीड़ा, आँख-मुँह में आग की जलन! जहाज की सतह पर सोया था, फिर भी लगा कि धरती-असमान सब चक्कर खा रहा है। जी में आया, जोर-जोर से गा उठूँ। खुद को ही डर लगा—दिमाग तो नहीं खराब हो रहा है? ठीक-ठीक याद तो नहीं, पर शायद मैं चिल्ला उठा था; क्योंकि देखा, अचानक चारों ओर से लोग दौड़े आये। उनकी शकलें भी साफ नहीं दीखीं, अँधेरे में सिर्फ छाया-मूर्तियाँ मेरे आस-पास घूम रही थीं। किसी ने बदन पर हाथ रख-कर कहा, 'बाप रे, बदन तो भट्ठी-सा जल रहा है। अब शायद बच नहीं पाये।'

"बुखार की बेहोशी में कै दिन गुजरे, पता नहीं। होश आने पर देखा, एक कमरे में बिछावन पर पड़ा हूँ। कहाँ हूँ मैं, यह समझ नहीं सका। अजाना कमरा, चारों तरफ के सरो-सामान नये। बड़ी देर में समझ सका कि कमरा लकड़ी का है। उसी से लगे तख्ते पर केवल डाल कर मुझे सुला दिया गया है। समझ गया कि कमरा जहाज का है।

"प्यास से छाती जली जा रही थी। उठना चाहा, उठ न सका। किसी को पुकारने की इच्छा हुई। अपनी आवाज से आप ही चौंक उठा। शब्द नहीं निकले। गले में घड़घड़ाहट-सी हुई। अपनी आवाज-सी ही न लगी। उठने की कूवत नहीं, किसी को पुकार सकूँ, यह जुर्रत भी नहीं। मगर प्यास बेहद। इतने में मोंगयों मेरे बिछावन के पास आ खड़ा हुआ।

"मुझे जगा देखकर वह हँसा। अब तक उसकी हँसी से भय होता था। आज लेकिन उसकी हँसी में कोमलता थी। अपनी कठोर आवाज को भरसक मुलायम कर के उसने कहा—'तो इतने दिनों में जाकर तुम्हारा बुखार उतरा!'

"मैंने कहा—'प्यास से मरा जा रहा हूँ, पानी दो।' उसने सुराही से ढालकर पानी दिया। मुँह में गिलास लगाने की कोशिश की। हाथ काँप रहा था। मोंगयों ने गिलास पकड़ कर मेरे होठों से लगाया। एक साँस में सारा पानी पी गया। जी जुड़ा गया। एक-एक बूँद पानी अमृत जैसा लगा। सारे शरीर में नया जीवन ले आया। शरीर की तकलीफ तो मिटी, पर मन की बढ़ गई। लम्बी उसाँस भर कर फिर बिछावन पर पड़ रहा।

"मेरी ओर देखकर मोंगयों ने पूछा—'अब कुछ अच्छा लग रहा है?'

"मैंने सिर हिला कर हामी भरी। मोंगयों ने मेरा बिस्तर झाड़ा, तकिया ठीक कर दिया और चला गया। खूँखार डाकुओं का सरदार इतनी ममता करेगा, मेरी इतनी सेवा-हिफाजत करेगा, सोच कर भी अचरज होता है। मगर यह सच्चाई माननी ही पड़ेगी कि मेरी बीमारी में डकैतों ने जिस तरह मेरी सेवा की, उससे ज्यादा अपने लोग भी नहीं कर सकते। मोंगयों और उसके साथियों को मैंने जानवर से भी गया-बीता समझा था, पर बीमारी में उनकी मुहब्बत देखकर मेरी धारणा बदल गई। समझा, कठोर पत्थर के नीचे जैसे झरना रहता है, वैसे ही क्रूर हृदय की तह में आत्मा छिपी रहती है।

"रोग न रहा, मगर कमजोरी न गई। दिन-रात बिछावन पर पड़े-पड़े कितनी ही चिन्ताएँ मन में आतीं। आज सब याद नहीं हैं। बीते दिनों की एक-एक तसवीर आँखों में घूम जाती। सोचता, सुखों का वह बचपन क्या फिर नहीं लौटेगा? वर्तमान और भविष्य की बात भी सोचने की कोशिश करता, मगर अँधेरे के सिवा और कुछ नजर नहीं

आता। कभी जी में होता, अभिशप्त जीवन लेकर धरती पर आया था, नहीं तो अपने भाग्य में दुःख-ही-दुःख क्यों आता ?

"खुदा की मेहरबानी पर शका होती। लोग कहते हैं, अल्लाह मेहरबान है। मगर मैंने तो उसके रहम की कोई निशानी नहीं देखी। छुटपन ही में माँ को खोया। कब खोया, यह भी नहीं मालूम। माँ की वह कमी उतनी नहीं अखरी, दादी के जतन और बाप के स्नेह से माँ का अभाव भूल गया था। मेरे नसीब में इतना भी न बदा था। पद्मा बाप को ले बैठी। उसका शोक भूल भी न पाया था कि दादी को गँवा बैठा। यतीम बच्चे को देखने वाला ही कोई न रहा। बाप के एक मल्लाह और दादी की एक दाई के हाथों पलने लगा कि बाप के एक दुश्मन ने मुझे अपने यहाँ पनाह दी। मेरे बाप से असगर चाचा का किस बात का झगड़ा था, मुझे नहीं मालूम; मगर जिस स्नेह से चाचा ने मुझे अपने यहाँ आश्रय दिया, वह मैं कभी न भूल सकूँगा। यहाँ मुझे न केवल पिता का स्नेह मिला, बल्कि जीवन में पहली बार माँ की मुहब्बत और बहन का जतन-स्नेह मिला। लेकिन जिस पर खुदा नाराज हो, उसकी किस्मत में भला इतना सुख कैसे रहे ? फिर आँधी उठी, हवा वाली आँधी नहीं, बदनसीबी की आँधी। घर-द्वार गया। जो माँ मिली थी, उसे खोया। उस कयामत का मारा यहाँ आया। सोचा, दुर्भाग्य का शायद अब अन्त हुआ। लेकिन बिना बादलों के ही बिजली कड़की। समुद्री डाकू मुझे उठा ले गये। उन डाकुओं तक ने बीमारी में मुझ पर रहम किया; मगर मल्लाह के रहम का तो कोई नमूना न मिला।

"ऐसी ही दुर्भावनाओं में रातें बीतती रहीं, दिन कटते रहे। अपने खोटे नसीब को सोच-सोच जीने की इच्छा जाती रही। जिन्दगी की नाउम्मीदी से कमजोर शरीर में जल्दी कूवत नहीं आ पाती थी। मुझे अच्छा न होते देख आखिर डाकुओं का भी धीरज छूट गया। किसी-किसी ने कहना की शुरू किया कि इस रोगी की सँभाल अब नहीं बनती।

इस कम्बख्त को समन्दर में डाल दो, तो झंझट मिटे। अगर मोंगयों का कड़ा हुक्म न होता तो बेशक वे मुझे समन्दर में डाल देते।"

"एक दिन की बात मुझे खूब याद है। तीसरे पहर का समय। दोपहर का पथ्य लेकर मैं आँखें बन्द किये अपने बिस्तर पर पड़ा था। झपकी भी आ गई थी शायद। अचानक पैरों की आहट से तन्द्रा भंग हो गई, पर जाने क्या सोचकर मैंने आँखें नहीं खोलीं। आहट से अनुमान हुआ, दो-तीन आदमी मेरे बिस्तर के पास आ खड़े हुए हैं। मुझे मोंगयों के गले की आवाज सुनाई पड़ी। उसने कहा—'सोने दो इसे। बड़ी तकलीफ पा रहा है बेचारा।' एक दूसरे ने जवाब दिया। आवाज से मैंने पहचाना कि बोलने वाला जमात का एकाकी हर्मद था।

"उसने मुझे गालियाँ देते हुए कहा—'सरदार, जाने तुम्हें क्या सूझी है। ऐसी कमजोरी इसके पहले तो तुममें कभी नहीं देखी। जिसको भी पकड़ा या तो मौत के घाट उतारा या उससे डाँड़ें खिंचवाईं। इसे तुमने जमात में शामिल करने को कहा। उज्र किये बिना तुम्हारे हुक्म की तामीली की। महीना बीत चला, कम्बख्त बिस्तर से उठने का नाम ही नहीं लेता। ऐसे को जमात में लेकर भी क्या करोगे? आखिर हमारा युद्ध का जहाज क्या अस्पताल बन गया?'

"मेरी तन्द्रा तो उनके आते ही भंग हो गई थी। अपनी चर्चा हो रही थी, इसलिए मैं मटिया कर ध्यान से सुनता रहा। उत्सुकता हुई कि मोंगयों क्या कहता है। मुझे कोई डर न लगा। मरना-जीना मेरे लिए समान था। मरना ही बदा है, तो क्या किया जाय?

"मोंगयों चुप रहा। हर्मद ने पूछा—'कोई जवाब क्यों नहीं देते सरदार? हुक्म दो, इस कम्बख्त को तुरत समुद्र के हवाले करूँ। भर्ती करना चाहो तो दुनिया में लाखों लोग पड़े हैं। जिसे चाहोगे, खुशी-खुशी जमात में शामिल होगा।'

"मोंगयों ने अब उत्तर दिया। बड़े धीरे स्वर में बोला, लेकिन उसकी आवाज में ऐसी एक दृढ़ता थी कि आँख बन्द रहने के बावजूद

मुझे लगा, मैं उसे स्पष्ट देख रहा हूँ, मानों उसकी एक-एक पेशी उसके दृढ़ निश्चय को व्यक्त कर रही हो। मोंगयों ने कहा—'तुम बिलकुल ठीक कह रहे हो हर्मद, हमारा जहाज अस्पताल नहीं है। लेकिन एक बात तुम भूल रहे हो कि हम भी आखिर आदमी हैं। हमने एक आदमी को जबर्दस्ती पकड़ा, घर-द्वार, अपने-बिरानों से उसे अलग कर दिया। उससे हमने कहा कि जमात में भर्ती हो जाय। उसका 'हाँ-ना' जवाब अभी नहीं मिला और हम उसे समन्दर में डाल दें—यह कहाँ की रीति है? अगर बीमार पड़ने से पहले वह दल में शामिल हो गया होता, तो आज तो वह हमारा ही एक अंग होता। साथियों को समुद्र में डाल दूँ, उनकी बीमारी की हालत में, यह मेरा स्वभाव नहीं। अगर तुम लोग यही चाहते हो, तो फिर यही सही, मुझे कोई आपत्ति नहीं। तुम्हें तो हर महीने कुछ-न-कुछ बीमारी होती ही रहती है। इस नये कानून की परीक्षा पहले-पहल तुम पर ही की जायगी, क्यों?"

"मोंगयों हँसने लगा। संगी-साथी भी हँस पड़े। हर्मद की भी हंसी मैं सुन पाया। यों मोंगयो की हँसी बड़ी भयानक होती थी, पर आज वह अच्छी ही लगी।

"वे सब चले गये। मैं सोया-सोया सोचने लगा, आगे जाने क्या हो। आज तो मोंगयों ने मेरी तरफदारी की; पर चंगा होने के बाद मैं जमात में रहने से इनकार करूँ तो क्या वह मेरा साथ देगा? तब शायद वह खुद ही आपे से बाहर होकर मुझे मार डालने का हुक्म देगा। जी में आया, जमात में शामिल ही हो जाऊँ तो क्या हर्ज है? यह सच है कि डकैत होने की अपनी इच्छा नहीं, और डकैत बन कर बियान चौर लौटने का रास्ता एकबारगी बन्द हो जायगा। तो ऐसा जीना किस काम का? लेकिन मोंगयों ने मुझ पर जो एहसान किया है, उसका तो प्रतिदान देना है। दुर्बल देह से ज्यादा सोचते नहीं बनता। सोचा, जो नसीब में लिखा है, वही होगा। अगर डकैत बनना ही बदा है, तो बनूँगा। कौन रोक सकता है।

"आखिर मेरा नसीब जगा। आँधी-बाढ़ में दो-दो बार मेरा नसीब फूटा; लेकिन इस बार आँधी ही मेरे लिए मुक्ति ले आई।"

मालिक रुक गया। साँस रोक कर सब लोग उसकी कहानी सुन रहे थे। अपने ही घर का यह लड़का इतना आँधी-तूफान, आफत-मुसीबत झेल कर अब लौटा है। उसके दुःखों का हिस्सा उनके सिवाय बँटाये भी कौन?

मालिक ने आगे कहना शुरू किया—"तूफान से कष्ट बहुत उठाये, लेकिन इस बार तूफान ने ही जान बचाई। नहीं तो अब तक खासा डाकू बन गया होता और तुम्हारे बीच लौटने की कोई सूरत न होती। कोई चार-पाँच दिन हुए कि समुद्र में आँधी उठी। वह आँधी शायद इधर से नहीं गुजरी, नहीं तो एक भी घर खड़ा नहीं नजर आता।

"मैं रोज की तरह, अपने बिछावन पर पड़ा था। अचानक दौड़ कर मोगयों अन्दर आया। उसने मुझे कुछ कहने का भी मौका न दिया और बिछौने सहित मुझे खाट से कसकर बाँधा, फिर खाट को जहाज से बाँध दिया।

"मुझे निर्वाक् टुकुर-टुकुर ताकते देख कर वह हँसा। बोला—'मैं सदा कहता आया हूँ कि तुम्हें समुद्री जानवरों के नोच खाने के लिए समन्दर में डाल दूँगा। तुम सोच रहे होगे, शायद वही घड़ी आ पहुँची। भरोसा रखो, जब वही होगा तो हम सब भी तुम्हारे साथ उनके पेट में जायँगे।'

"मोंगयों उसी तेजी से बाहर निकल गया। जहाज में बड़ा हो-हल्ला हो रहा है, ऐसा लगा। दौड़-धूप जारी है, रस्सी बाँधे जाने की आवाज सुनाई दी। बीच-बीच में मोंगयों का कंठ-स्वर सुनाई पड़ रहा था। जाने क्या-क्या हुकुम दे रहा था।

"एकाएक जहाज हिल उठा। मेरा बिछौना तक मानों खड़ा हो गया। अगर मजबूती से मैं बँधा न होता तो छिटक कर दूर जा पड़ता। जी-जान से मैं खाट को पकड़े रहा। जहाज का हिलना बन्द नहीं हुआ।

दूध को मथकर मक्खन निकालते देखा है आपने ? समुद्र के पानी में वैसी ही हलचल समझिए। हमारा जहाज उस वेग में तिनके की तरह बह चला। आँधी का वेग बढ़ता ही गया। उसमें पत्ते की तरह जहाज का हिलना बर्दाश्त से बाहर हो उठा। इस कदर जी मिचलाने लगा कि लगा, पित्त तक बाहर निकल पड़ेगा। मैं चीख उठा। एक तो कमजोर शरीर, गले में जोर ही न रहा था, तिस पर आँधी की भयंकर हुँकार, कौन किसकी सुने ? जहाज कभी ऊँचे उठ जाता, कभी अथाह गहराई में। ऐसा लगने लगा कि दोजख के शैतानों के दल ने समुद्र में कुहराम मचा रखा है। उस कयामत की घड़ी में मैं कब बेहोश हो गया, नहीं जानता। आँखें खुलीं तो न समुद्र था और न जहाज। मैं अपने इन मल्लाह दोस्त की कुटिया में सोया था। अगर इन्होंने मुझे बचा न लिया होता तो या तो डकैतों के हाथ मारा जाता या डूब कर मर जाता। इन्होंने मुझे कैसे बचाया, यह आप इन्हीं की जबानी सुनिए।"

मल्लाहों के सरदार ने आनाकानी करते हुए कहा—"मैं क्या बताऊँ, सब कुछ तो आपने मालिक मियाँ से सुन ही लिया। हम लोग तो अन्तिम निमित्त के भागी भर हैं।"

मगर लोग इतनी आसानी से कब छोड़नेवाले थे ! उन्होंने बार-बार आग्रह करके सरदार को मजबूर किया। वह बोला, "हम लोग मछली पकड़ रहे थे। देखा कि आसमान धूमिला हो उठा है। तूफान के आसार देख हम लोग झटपट किनारे आ गये और देखते-ही-देखते आँधी आ पहुँची। तमाम जिन्दगी अपनी नदी और समन्दर की गोद ही में गुजरी है; मगर ऐसे तूफान में कभी पड़ने की नौबत न आई। ताड़ जितनी ऊँची उठ-उठ कर लहरें किनारे से टकराने लगीं। ग़नीमत कहिए कि हमने नाव को खींच कर जमीन पर उठा दिया था, नहीं तो पिसकर पिसान-बुकनी-हो जाती। इतने में तीर के वेग से एक जहाज किनारे की तरफ आता दीखा। हमने समझ लिया, इस जहाज की खैरि-

यत नहीं। हुआ भी ठीक वही। ऐसा एक धक्का लगा कि आधा जहाज तो किनारे के कीचड़ में बुरी तरह धँस गया, आधा रह गया पानी में। हम लोग दौड़ पड़े। शायद जहाज के कुछ लोगों को बचाया जा सके। हम तो उन्हें बचाने गये, मगर जिन्हें बचाने गये, वे हमलोगों पर ही टूट पड़े। पहले तो हम थोड़ा घबरा गये। एकाएक वार हुआ था। मगर आँधी झेल कर उनकी हालत पहले से ही पतली हो गई थी, फिर तादाद में हम उनसे ज्यादा ही थे। उन्हें मुँह की खानी पड़ी। उन्हें हम लोगों ने बाँध दिया। अन्दर गया तो यह मालिक मियाँ पड़े मिले—बिछौने से बँधे, बेहोश। देखते ही समझ गया, यह डाकू नहीं, बल्कि डाकुओं का शिकार है। खोल कर इन्हें हम अपने यहाँ उठा ले गये। बाद में जो हुआ, आपके सामने है।"

अर्जीज बोल उठा, "अल्लाह का लाख-लाख शुक्र है कि मालिक सही-सलामत लौट आया।"

असगर मियाँ चुप था। अचानक पूछ बैठा, "लेकिन उस मोंगयों का क्या हुआ? वह भी क्या पकड़ा गया?"

मालिक बोला, "तूफान में पतवार पर वही बैठा था। उसके बाद फिर उसे किसी ने नहीं देखा। बन्दियों में मोंगयों नहीं था।"

जरा रुक कर कह उठा, "न था, अच्छा ही हुआ। सदा समुद्री जानवर की खूराक जुगाने की कहता था, उसका कहना खुद उसी के लिए फल गया!"

——छः

दूसरे दिन सब मल्लाह लौट गये। असगर और मालिक ने उन्हें दो-चार दिन ठहरने के लिए बड़ा आग्रह किया, मगर वे न रुके। बोले, "भई, हम सब मेहनतकश हैं। मशक्कत करते हैं, तो पेट भरता

है। यों बैठने से हमारा गुजारा है ?" जाते वक्त असगर मियाँ ने उन्हें बहुत सारी सौगातें दीं—नये धान का चूड़ा, गुड़, सबके लिए कपड़े; मल्लाहों के सरदार की बीवी के लिए उसने किनारीवाली साड़ी दी; आईना-कंघी, नकली मोती की माला भी दी। सरदार लेने से बार-बार इनकार करता रहा; मगर असगर मियाँ कब सुननेवाला था ?

मल्लाह लौट गये। चौर की जीवन-यात्रा फिर मंदगति से शुरू हो गई। हफ्ते-भर में मालिक वहाँ की जिन्दगी में ऐसा घुलमिल गया कि उसे देखकर कौन कह सकेगा, यह कभी यहाँ से बाहर भी था, डाकुओं के हाथों इसकी दुर्गत हुई थी ! उन दिनों की स्मृतियाँ खुद उसे भी अवान्तर मालूम होने लगीं। कभी-कभी उसे अचरज होता, सच ही क्या वह खूँखार मौंगयों के चंगुल में जा फँसा था, या वह एक सपना भर था जो रात के साथ-साथ गायब हो गया !

अतीत, वर्तमान और भविष्य मालिक के मन में सब एकाकार हो जाते। कौन-सा पहले है, कौन-सा पीछे, क्या कुछ गुजर गया और क्या महज एक आशा है, इन पर उसे शुबहा होता। लेकिन इन सारी अनिश्चितताओं में उसके लिए नूरू का प्रेम ही एक ध्रुव सत्य था ! रात के अँधेरे में सभी तारे अपनी जगह बदलते हैं, ध्रुवतारा सदा अपनी जगह पर जगमगाता है। नूरू मानो मालिक के जीवन में वही ध्रुवतारा थी। इस बारे में मालिक को न कोई शंका थी, न दुविधा। नूरू की आँखों में भी उसे गहरा प्रेम दीखता। हरदम दोनों साथ रहना चाहते। कोई किसी को आँखों से ओझल नहीं करना चाहता। लेकिन यह सोचकर उनके मन में लाज और संकोच की सीमा न थी कि कोई उनके इस राज़ को जान न ले। प्रेम की सुनहली ज्योति से उनकी दुनिया हँस रही थी। विरह की इस कालरात्रि के कट जाने से आनन्द और उमड़ा पड़ रहा था। उनके आनन्द की यह जादू की लकड़ी जिसे भी छू जाती, वही आनन्द-मग्न हो उठता। असगर मियाँ भी उनके सुख से सुखी था; लेकिन उन दोनों के सुख की समस्त आकांक्षा और

कामना के इंगित से वह निर्विकार था। उसे देख कर लगता, वह नूरू और मालिक के प्रेम की बात नहीं जानता, या जानता भी है तो टालना चाहता है।

अजीज असगर के रंग-ढंग से समझ नहीं पाता कि आखिर उसका इरादा क्या है। नूरू और मालिक के प्रेम की बात उसने खुद उसे बताई है। फिर भी ऐसा रवैया क्यों? आखिर उसने यह क्यों कहा कि दोनों की शादी नहीं हो सकती? शादी यदि नहीं ही हो सकती तो फिर इन्हें मिलने-जुलने की ऐसी छूट देने का क्या मतलब?

अब मालिक भी चंचल और अधीर हो उठा। असगर को वह चाचा कहता आया है, बाप की तरह मानता रहा है, उससे वह ब्याह की बात कहे भी तो कैसे? कभी-कभी सोचता, जो चाहे हो, कहूँगा। लेकिन सामने जाता और असगर की गम्भीर प्रशांत मूर्ति देख हिम्मत जवाब दे बैठती। अपनी अधीरता पर उसे लज्जा होती। चाचा पर खीझ उठता—'उसे मालूम तो हैं सारी बातें, फिर खुद ही क्यों नहीं कहता?' मालिक इसी इन्तजार में रहता, मगर असगर की तरफ से इसका कोई इशारा नहीं पाता।

दुविधा की यह स्थिति असह्य हो उठी। मालिक ने देखा, अपने से तो यह बात नहीं बनती। अब अजीज की शरण लिये बिना चारा नहीं।

एक दिन अजीज रस्सी बँट रहा था। मालिक ने जाकर कहा, "तुमसे कुछ कहना है चाचा।"

अजीज बोला, "मुझे पता है, तुम क्या कहोगे।"

मालिक बोला, "बड़ी गोपनीय बात है। तुम्हारे सिवा और किसी को नहीं बताना चाहता। मगर यहाँ नहीं कहूँगा। आम के बगीचे में चलो।"

अजीज बुदबुदाया, "गोपनीय तो खाक है! तुम्हारी यह गोपन बात सभी जानते हैं, मैं भी जानता हूँ। मगर तुमने जिद ठान ही ली

है तो चलो।"

आम के बगीचे में पहुँच कर मालिक बोला, "तुमने मुझे छुटपन से पाला है चाचा, तुमसे क्या छिपा है। आज मैं तुम्हें एक बात बताऊँगा, जो कभी किसी को नहीं बताई। तुमसे भी नहीं कहता, पर सहने की भी तो एक हद होती है!"

अजीज गम्भीर हो गया। मालिक के दोनों हाथ थाम कर बोला, "मैंने तो कह ही दिया कि मुझे सब पता है। कुलसुम एक जमाने से यह कहती चली आ रही है। मैंने मुखिया से यह तसकिरा किया था। उसने कहा, 'यह हरगिज नहीं हो सकता, नामुमकिन है'।"

मालिक चौंक उठा—"कह क्या रहे हो चाचा, क्या नहीं हो सकता है? जानते भी हो तुम कि मैं क्या कहना चाहता हूँ?"

"खूब जानता हूँ मालिक मियाँ, मैं खूब जानता हूँ। तुम नूरू को चाहते हो और शायद वह भी तुम्हें चाहती है। कुलसुम ने यह सब मुझे बहुत पहले ही बता दिया है। लेकिन मुखिया तो कहता है कि कुलसुम कब की मर गई है और मेरा दिमाग खराब हो गया है।"

अचानक अजीज फूट पड़ा। दोनों हाथों अपना मुँह ढँक कर वह रो उठा, उसके सारे हृदय को मथ कर हताश स्वर में शब्द निकल आये, "मुखिया ने ठीक ही कहा है। जमाना हुआ कि कुलसुम मर चुकी है, फिर कभी नहीं आने की। मैं उसे कभी नहीं देख पाऊँगा।"

मालिक कुछ देर तक रोते अजीज को देखता रहा। गहरे शोक से उसका सारा बदन हिल-हिल उठने लगा, रुलाई जो शुरू हुई सो थमने का नाम न लिया। दोनों घुटनों के बीच उसने अपना सिर गाड़ लिया।

मालिक सहसा जैसे चेत में आया। 'हाय अल्लाह, यह सुन क्या रहा हूँ', कहता हुआ बगीचे से सीधे घर के अन्दर चला गया। औरतें रसोई की जुगत कर रही थीं, नूरू कर रही थी उनकी निगरानी। उसने और किसी की तरफ ताका भी नहीं। बोला, "तुमसे बहुत जरूरी काम है नूरू, जरा अपने कमरे में चलो।"

नूरू दंग रह गई। मालिक को उसने इतना उत्तेजित और निश्चल कभी नहीं देखा था। बिना खबर दिए जनान-खाने में आकर उसने कभी भी नूरू को सबके सामने इस तरह नहीं पुकारा था। हो न हो, जरूर कोई ऐसी बात हुई है। उसने औरतों से कहा, 'अभी आई मैं,' और चली गई।

औरतों में एक दबी हँसी उठी। मर्द शायद इतना गौर नहीं करते, पर मुहब्बत के मामले में औरतों की निगाह बड़ी पैनी होती है। मालिक और नूरू तो बिलकुल कच्चे थे। उनके मन की बात हर बात में, हर भाव-भंगी में जाहिर हो पड़ती। आपस में एक दूसरे को ठोंक मार कर औरतें हँसने लगीं। वह हँसी नूरू के कानों तक पहुँची। लाज से वह लाल हो उठी।

पुरखिन की तरह कोई बोल उठी, "अरे, कपड़ा ढाँके कहीं आग छिपती है!"

नूरू कहीं रुकी नहीं, सीधे अपने कमरे में गई। मालिक वहाँ पहले से ही पहुँच कर, बेताबी से चहलकदमी कर रहा था। नूरू के वहाँ पहुँचते ही बोला, "मैंने ऐसा कौन-सा गुनाह किया है नूरू, कि मेरे नसीब में ऐसी सजा ही सजा!"

नूरू और भी अचरज में पड़ गई। वह प्रश्न भरी आँखों से उसकी तरफ ताकती रही। एक साँस में वह कह गया, "अगर तुम जानती नूरू, कि मैं तुम्हें कितना ज्यादा चाहता हूँ तो इस तरह थिर नहीं रह सकती तुम।"

नूरू ने कहा, "आखिर हुआ क्या है? क्यों, ये बातें क्यों?"

मालिक का गला भर आया। बोला, "असगर चाचा मुझसे तुम्हारी शादी नहीं करेंगे।"

नूरू का मुँह सूख गया। उसने फिर भी पूछा, "यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ? तुमने उनसे पूछा था?"

"नहीं, मैंने नहीं पूछा। अजीज चाचा ने उनसे कहा था, लेकिन

असगर चाचा इस शादी से सहमत नहीं हैं।"

वेदना से उसका मुखमंडल विवर्ण हो उठा। घंटे-भर में उसकी उमर जैसे दस साल ज्यादा हो गई। हताशा भरे स्वर में बोला, "क्या करूँ नूरू ?"

आँखों की बाढ़ में नूरू के आगे की धरती मानो बह गई। उसने आँसू भरे नेत्रों से मालिक को देखा। लगा, जाने कितनी दूर था, कहाँ का आदमी है वह। उसके सिर में चक्कर आया। वह गिरी जा रही थी। चौखट थाम कर किसी तरह सँभली। आँसू से धुला उसका चेहरा शिशिर-स्नात स्थल कमल सा लग रहा था। देख कर मालिक की आँखें नहीं भरतीं। नूरू यों तो उसे सदा अच्छी लगती रही है, लेकिन उसके आज के सौन्दर्य की तुलना नहीं हो सकती।

मालिक नूरू के बिलकुल पास पहुँच गया। उसके दोनों हाथ खींच कर छाती से लगा लिये। बोला, "मेरी बात मानोगी नूरू ? मुझ पर विश्वास कर सकोगी ?"

नूरू ने कोई जवाब न दिया, पर उसकी दोनों आँखों में परम विश्वास देख कर मालिक को भरोसा हुआ। उसने गिड़गिड़ा कर कहा, "चलो, हम लोग यहाँ से भाग चलें। मल्लाहों का सरदार मुझे अपने बच्चे-सा मानता है। उसे कहला भेजूंगा तो वह हमें ले जायगा, शादी का सारा इन्तजाम भी कर देगा।"

नूरू ने मालिक की ओर सिर उठा कर देखा। उसके हृदय का गाढ़ा प्रेम आँखों से जाहिर हो रहा था, फिर भी उसने सिर हिलाकर मालिक के आग्रह का इनकार किया। कुछ कहना चाह रही थी, पर बोल न सकी। अन्त में ऐसी आवाज में बोली, जैसे कब्र के अन्दर से कोई मरा आदमी बोल रहा हो—"मालिक भैया, यह नहीं होने का। मैं तुम्हें प्यार करती हूँ, तुम भी यह जानते हो; पर मैं अब्बा की बात नहीं टाल सकती। माँ नहीं रही, उन्हीं से माँ और बाप दोनों का स्नेह पाकर मैं पली। आज कोई ऐसा काम मैं नहीं कर सकती, जिससे उनका दिल दुखे।"

मालिक ने बड़ा निहोरा, बड़ी विनती की। कभी आरजू, कभी प्यार भरी बातें, कभी अपनी किस्मत को धिक्कारने लगा। नूरू सब सुनती रही, खड़ी-खड़ी रोती भी रही; पर उसकी जबान से यही निकला कि अब्बा का जी न दुखा सकूँगी।

अचानक दोनों चौंक उठे। दबे पाँवों कब असगर वहाँ जा पहुँचा, किसी को पता ही न चल पाया। उन दोनों के बीच में एक लम्बी छाया पड़ी। चौंक कर नूरू ने मालिक से अपने हाथ छुड़ा लिये। वह अपने अब्बा की गोद में झपट पड़ी। उसके घुटनों में सिर रोप कर रोने लगी। अब तक वह किसी तरह आँखों की उमड़ती बाढ़ को रोके हुए थी। अब वह बेरोक बह चली। बाढ़ के प्रवाह-सी आँसू की धारा उसके आँख-मुँह को नहलाती हुई असगर के पाँवों पर झरने लगी।

मालिक भी चेत गया था। वह दो डग हटकर खड़ा हो गया। उसके तन-बदन में आग लग गई। क्रोध और हिंसा से दोनों आँखें दहकने लगीं। उसे लगा, असगर कहीं उसे मार न बैठे। पर असगर की आँखों से आँख मिलते ही उसका सिर आप-ही-आप झुक गया। देखा, असगर की आँखों में क्रोध या हिंसा का कोई चिह्न ही न था। आँखें स्नेह और करुणा से भरी थीं। प्रशान्त मुखमंडल पर झलक रही थी गहरी वेदना की छाया।

असगर सर सहला कर नूरू को दिलासा देने लगा। स्नेह से बोला, "रो मत मेरी बिटिया, रो मत।"

मालिक की चेतना लौटी। बोल उठा, "तुम इस शादी से इनकार क्यों करते हो चाचा?"

असगर फीका हँसा। बोला, "तुम समझ रहे हो, मैं अपनी ओर से इस शादी में अड़चन डाल रहा हूँ?"

मालिक ने कहा, "और नहीं तो क्या? तुम घर के मालिक हो, इलाके के मुखिया हो, तुम्हारी बात काट ही कौन सकता है?"

असगर ने सिर हिला कर कहा, "इतनी बड़ी गलती मत करो

बेटा ! मालिक कोई नहीं, हम सब उसी के बन्दे हैं। नूरू से तुम्हारी शादी नहीं हो सकती।"

मालिक ने कहा, "नहीं हो सकती, यह तो तुम हजार बार कह चुके हो। मगर यह एक बार भी नहीं बताते कि हो क्यों नहीं सकती।"

असगर ने शान्त स्वर में कहा, "तो सुन लो, तुम्हारी नसों में जो खून बह रहा है, वही इस ब्याह की बाधा है।"

क्रोध से मालिक चीख उठा—"यह बात है ! तो तुमने पहले ही क्यों नहीं बताया। दरअसल गलती मेरी ही है। मुझे पहले ही समझना चाहिए था कि बाप का दुश्मन बेटे का बन्धु नहीं हो सकता।"

असगर ने जवाब नहीं दिया, लेकिन दबी उसाँस से उसका सर्वांग काँप उठा। नूरू ने भी सर उठाकर एक बार अपने बाप को फिर मालिक को देखा। उसकी आँखों में कितनी कातरता और कैसा अनुयोग था !

उस नजर को देखकर मालिक शर्म से गड़ गया। समझा कि उसने गलत कहा है। फिर भी अपने को सँभाल नहीं सका। बोला, "आपत्ति आखिर कौन-सी है ? मैं नज्जू मियाँ का बेटा हूँ और नज्जू मियाँ थे तुम्हारे दुश्मन। क्या केवल इस दोष से तुम हम दोनों की जिन्दगी बर्बाद कर दोगे ?"

असगर ने दृढ़ता भरे स्वर से कहा, "खुदा जानता है, नज्जू मियाँ के प्रति मुझे कोई मलाल नहीं। मुझे इस शादी में इसलिए एतराज नहीं कि तुम नज्जू मियाँ के लड़के हो।"

असगर ने देखा, इतने पर भी मालिक को यकीन नहीं आ रहा है। बोला, "तुम्हारा खयाल है, नज्जू से मेरी दुश्मनी थी, इसलिए उसका बदला मैं तुम्हें तकलीफ देकर वसूलना चाहता हूँ ? मगर क्या मुझे यह मालूम नहीं कि यह शादी न होगी, तो मेरी लड़की जिन्दगी भर तकलीफ उठायेगी ? नज्जू मियाँ के कारण मैं अपनी लड़की से दुश्मनी कैसे कर सकता हूँ ?"

मालिक ने कहा, "मैं बुझौवल नहीं बूझ सकता। अगर तुम जानते

हो चाचा कि इससे नूरू को कष्ट होगा और अगर तुम्हें मुझपर गुस्सा नहीं है, तो तुम एतराज क्यों कर रहे हो ?"

असगर बोला, "फिर भी मुझ पर यकीन नहीं ? मैंने कह दिया कि यह शादी नहीं हो सकती। क्या इतना ही काफी नहीं ? उसके बाद भी वजह जानने की जरूरत है ?"

उसने एक बार मालिक, फिर नूरू की तरफ देखा। देखा, मालिक के चेहरे पर सन्देह और विद्रोह है, नूरू की आँखों में विनती और जिज्ञासा।

असगर जरा देर चुप रहा। अन्त में थका-हारा-सा बोला, "खैर। कह ही दूँ तब। मैंने सोचा था, यह कहानी मेरे ही साथ जायगी, लेकिन सो नहीं हो सका।"

असगर उठ खड़ा हुआ। बोला, "मालिक, चलो मेरे साथ। और तुम भी ओढ़नी डाल आओ नूरू, तुम्हें भी चलना है।"

असगर चुप हो गया। उसके चेहरे की गम्भीरता देख इन दोनों से भी कुछ बोलते न बना। चुपचाप वे चलते रहे। गाँव पार होकर असगर टीले की ओर बढ़ा—नूरू और मालिक उसके पीछे-पीछे।

असगर नूरू की माँ की कब्र के पास जाकर खड़ा हो गया। दोनों को कब्र के दोनों तरफ बैठने का इशारा करके वह कब्र के निशान पर खड़ा हो गया। दोनों हाथ आसमान की तरफ उठा कर बोला, "अल्लाह गवाह है अर्मीना, मैंने तुम्हारी गोपन बात कभी किसी से नहीं कही, न कहना चाहता था। लेकिन आज अब उसे छिपाने का उपाय नहीं रहा।"

बिजली की गति से उसकी नजर मालिक और नूरू पर जा टिकी। तीखे स्वर से वह बोल उठा, "तुम दोनों की शादी नहीं हो सकती। तुम दोनों भाई-बहन हो। अर्मीना के बेटा-बेटी हो।"

दोनों चौंक उठे। नूरू अचरज भरी आँखों से असगर को देखने लगी। मालिक ने विस्मित होकर पूछा, "नूरू की माँ मेरी भी माँ थी ?"

असगर चुप। मालिक ने फिर पूछा, "तो यह मेरी माँ का गोर है ?"

असगर ने सिर हिला कर कहा, "हाँ।"

मालिक उछल पड़ा। गुस्से से चेहरा काला हो गया। चिल्ला उठा, "झूठ, झूठ कह रहे हो चाचा। यह मेरी माँ की कब्र नहीं है।"

असगर मियाँ तन कर खड़ा हो गया। उसका लम्बा बदन मानों और लम्बा होकर बहुत ऊँचा उठ गया। शान्त और दृढ़ स्वर में बोला, "दुःख और शोक से तुम्हारा दिमाग सही नहीं है मालिक, नहीं तो असगर मियाँ को झूठा बताकर कोई पार नहीं पा सका।"

बातें बड़े शान्त और ठंडे ढंग से कही गईं, मगर मालिक की चेतना में वे पैने इस्पात-सी जा चुभीं। उसका सारा क्रोध पल में पानी हो गया। वह धूल में लोट पड़ा। फफक-फफक कर रोने लगा।

अचानक गर्दन उठाकर उसने पूछा, "तो क्या मैं नज्जू मियाँ का बेटा नहीं हूँ?"

असगर मियाँ अभी तक शान्त था। उसका पत्थर जैसा धीरज टूट गया। विषाद सने स्वर में बोला, "अगर तुझे अपना बेटा कहकर दावा करने की गुंजाइश होती, तो वह दावा मैंने कब का किया होता। तू मेरा कोई नहीं है बेटे, तू नज्जू मियाँ का ही बेटा है।"

मालिक की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। दोनों हाथों अपना सर थाम कर बोला, "तुम्हारी बातें मेरी खोपड़ी में नहीं समातीं। कभी तुम कहते हो कि मैं नज्जू मिया का लड़का हूँ, कभी कहते हो, नूरू का भाई हूँ? यह कब्र मेरी माँ की कब्र है। यह कैसे हो सकता है भला? अब्बा और दादी से कितनी ही बार मैंने सुना है कि मेरी माँ छुटपन ही में चल बसी थी। वे आखिर झूठ क्यों बताते मुझे?"

लम्बी साँस भर कर असगर ने कहा, "उन्हें तो यह कहना ही था। उनकी निगाहों में तुम्हारी मा मर गई थी। सच पूछो तो तुम्हारे अब्बा के घर वह मरी ही थी। जिस दिन वह वहाँ से निकल आई उसी दिन से उसकी वास्तविक जिन्दगी शुरू हुई।"

मालिक बोल पड़ा, "तुम्हें सारी बातें खोल कर बतानी पड़ेंगी, नहीं

तो मैं हरगिज नहीं छोड़ने का। अब तक मैं यही सोचता रहा था कि मेरे माँ नहीं, वह बहिश्त में है। नूरू की माँ को भी मैं माँ की ही तरह देखा किया। आज तुम जो कह रहे हो उससे सब कुछ उलट-पुलट हो गया। मैं लड़का नज्जू मियाँ का हूँ, मगर मेरी माँ नूरू की माँ है? यानी मुझे मानना होगा कि मेरी माँ बुरी औरत थी? हाय अल्लाह, यह क्या हो गया!"

असगर मियाँ ने कठोरता से कहा, "मन से यह मैल धो दो मालिक। तुम्हारी और नूरू की माँ बहिश्त की हूर है। दुनिया का पाप, दुनिया की ग्लानि उसे कभी नहीं छू सकती।"

जरा रुक कर असगर ने कहा, "मरे हुओं के बारे में बुरा नहीं सोचना चाहिए। तुमने अपनी माँ के लिए ऐसा सोच लिया?"

मालिक कब्र पर लोट गया, कब्र की माटी में मुँह गाड़ कर रोने लगा—"माँ, मेरी अम्मा! सच ही क्या तू मेरी माँ है? अपने इस नादान बच्चे को तू समझा दे माँ। मेरी तो कुछ भी समझ में नहीं आता।"

असगर ने अपनी बेटी की तरफ देखा। वह बुत बन गई थी, दोनों आँखों से जारी थे आँसू। असगर का मन कैसा तो कर उठा। वह नूरू के पास जमीन पर बैठ गया, उसका सिर अपनी गोद में खींच कर बोला,—"रो मत बिटिया!"

आँसू से नहाया अपना मुखड़ा ऊपर उठा कर नूरू ने कहा, "मुझे सब खोल कर बताओ अब्बा।"

बाप की गोद में मुँह छिपा कर फिर वह बेतरह रो उठी।

मालिक ने भी कहा, "सब खोलकर कहो चाचा।"

नूरू के माथे पर हाथ रख कर असगर ने कहा, "तुम्हें शायद मालूम न हो, कभी नज्जू मियाँ मेरा जिगरी दोस्त था। हम एक दूसरे को इतना प्यार करते थे कि अपना भाई भी भाई को नहीं करता। लोग हमारी इस मिताई की हँसी उड़ाते थे; पर हम उसकी परवाह ही

नहीं करते थे। जमीन की खोज में हम साथ-साथ ही घर से निकले, साथ ही आए और रहीमपुर में साथ ही घर बसाया। हममें से एक को अगर उसी समय अल्लाह उठा लेता, तो बाद में इतने दुःखों का भागी तो न बनना पड़ता।"

असगर की छाती में से लम्बी उसाँस उठी। उसने थोड़ा थम कर फिर कहना शुरू किया—"रहीमपुर में हमारी दशा अच्छी हो आई, तो शादी-ब्याह की फिक्र पड़ी। बस शादी के मामले में ही हमारी उसकी अनबन शुरू हुई। औरत के लिए संसार में कितने अनर्थ हुए, कौन बता सकता है! नज्जू मियाँ ने शादी के लिए लड़की की खोज शुरू की। मुझे लड़की ढूँढ़ना न थी, मैं बचपन से ही अपनी ममेरी बहन को प्यार करता था। सब ने निश्चित समझा था कि अमीना की शादी मुझी से होगी।"

नूरू ने बीच ही में टोका, "अमीना तो मेरी अम्माजान का नाम था।"

"हाँ, उसी की बात कह रहा हूँ बिटिया। हम दोनों साथ-साथ बढ़े। छुटपन से ही अमीना ने मुझे पति मान लिया था, मैंने उसे बीवी। तेरी नानी तो तभी से मजाक में मुझे दामाद कहने लगी थीं। कहतीं, अगर सोने से मढ़ नहीं दोगे, तो ब्याह नहीं होने दूँगी। मैं धन कमाने के लिए ही तो बाहर निकला था। जब अपना खेत-पथार, हल-बैल हुआ, तो देश लौटा। सोचा, शादी करके अमीना को साथ लाऊँगा। बीवी की तलाश में नज्जू मियाँ भी मेरे साथ घर लौटा।

"तब तेरी अम्मा की उमर पन्द्रह-सोलह की होगी। देखने में बहिश्त की परी। तुझे तो सभी सुन्दरी कहते हैं बिटिया, और है भी तू सुन्दरी; मगर तेरी माँ से तेरी कोई तुलना ही नहीं हो सकती। सोलह में उसका जो रूप मैंने देखा, वैसा रूप मेरी नजर में कहीं न आया। मानों रूपकला की राजकुमारी हो, चाँद के देश से मिट्टी की धरती पर उतर आई हो।"

"वहाँ मैं तेरी नानी के पास गया। कहा,—'मामी अब तो अपनी जमीन-जायदाद, हल-बैल हैं। अबकी अमीना को ब्याह कर रहीमपुर ले जाना चाहता हूँ'।

"मामी मानों आकाश से गिर पड़ी। बोली—'अमीना को तुम ब्याहोगे ?'

"मुझे तो काठ मार गया। कहा—'यह तुम कह क्या रही हो मामी ? अब तक तो तुम यही कहती आई हो कि उसकी शादी मुझी से होगी। मुझे सदा दामाद कहती आई, भूल बैठीं सब ?'

'तेरी नानी हँस पड़ी—'तुम्हारी उम्र हो आई, अब भी अक्ल नहीं आये तो कब आयेगी। बचपन में तुम्हारी शकल खासी थी, अमीना के साथ खूब फबती थी, इसी से दामाद कहती थी। मगर उसका मतलब यह थोड़े ही था कि उसकी शादी तुमसे कर ही दूँगी।'

"मैं जो भी कहने लगा, हँसकर टाल देने लगीं। हकीकत में उसने कुछ तै कर लिया था। मैंने लाख आरजू-मिन्नत की, हाथ जोड़े, उनका मन न बदला। मैंने उन्हें बताया, अमीना भी मुझे चाहती है। फिर भी कोई नतीजा न निकला। मामी ने कहा—'प्यार जरूर करेगी। बहन क्या भाई को प्यार नहीं करती ? उससे क्या तुमसे उसकी शादी कर दूँगी ? तुमसे ब्याह क्या देना है, उसे पद्मा में बहा देना है ?'

"ब्याह के लिए तो राजी नहीं ही हुई, उल्टे उसे नजर-बन्द कर दिया। यह भी सुयोग नहीं रहने दिया कि उससे मैं मन की दो बातें कहूँ, उसके मन की थाह लूँ। तब अपनी भी क्या उमर थी ? उन्नीस-बीस साल का जवान, उस काइयाँ औरत की अकल से कैसे पार पाता।

"जितना ही अमीना के बारे में सोचता, दिमाग उतना ही गरम हो उठता। किस तरकीब से उसे मामी के चंगुल से निकालूँ, कुछ समझ नहीं पाता। इसी बीच खबर मिली कि अमीना से नज्जू मियाँ की शादी की बात चल रही है। पहले तो मुझे इस पर यकीन नहीं आया। नज्जू मियाँ मेरा दोस्त है। वह मेरे साथ ऐसी दगाबाजी करेगा ? उससे

मेरी कोई बात छिपी न थी। मैं दौड़ा-दौड़ा उसके पास गया। बोला — 'यह क्या सुन रहा हूँ दोस्त, तुम अमीना से शादी कर रहे हो ?'

"नज्जू मियाँ गाँव के मातबर से बात कर रहा था। मुझे देख कर हँसते हुए बोला—'अन्याय ही क्या कर रहा हूँ मैं ? उसके रूप-गुण की चर्चा तो तुमसे ही सुनी थी, आँखों भी देख लिया उसे। नसीब से अगर ऐसी बीवी मिल जाय तो बुरा क्या है ?'

"मैं स्तम्भित रह गया। जबान से बात नहीं फुरी। मैंने कहा — 'छुटपन से ही उससे मेरी शादी तै है। तुम दोस्त होकर मेरी चहेती से शादी करना चाहते हो ?'

"नज्जू मियाँ ने व्यंग से कहा—'तुम्हारी ही बीवी होगी, तो मैं कैसे शादी कर लूँगा ?'

"गुस्से से मेरे बदन में आग लग गई। कहा—'तो जान लो, वह मेरी दुलहिन है। उसे चुराते तुम्हें शर्म नहीं आती ?'

"नज्जू मियाँ ने पलटकर जवाब दिया —'वह तो तुम्हारी ममेरी बहन है। अगर तुम्हारी मामी ही मुझे पसन्द करें तो मेरा क्या कसूर है ?'

"मैं क्रोध से अन्धा हो रहा था। बोला—'तुमने उस पर जरूर जादू-टोना किया है।'

"अबकी नज्जू मियाँ बिगड़ उठा—'झूठमूठ मे गाली-गलौज क्यों करते हो ? अमीना मुझे जँच गई है। मैंने ब्याह का पैगाम भेजा, तुम्हारी मामी ने कबूल भी कर लिया। मेरी खुशी है, मैं शादी करूँगा। रोड़ा अटकाने वाले तुम कौन होते हो ?'

"मैंने बड़ा झगड़ा किया, बड़ी दलीलें दीं, बड़ा निहोरा किया। मगर वह शुरू से अखीर तक एक ही बात कहता रहा—'वह मुझे जँच गई है। मैं उससे जरूर शादी करूँगा।'

"दुःख और क्रोध से बौखला कर मैं फिर दौड़ा-दौड़ा मामी के पास गया। उनके पाँव पकड़ लिये—'क्यों गजब ढा रही हो मामी ? अमीना की शादी....'

"मामी ने मुझे अपनी बात पूरी नहीं करने दी। बोली 'पागलपन क्यों कर रहे हो असगर, वह क्या सदा कुँआरी ही रहेगी ? ब्याह की उम्र हो गई। किस्मत से अच्छा पात्र भी मिल गया। वह भी अमीना से शादी करना चाहता है। इसमें गजब क्या हुआ भला ?'

"मैंने गुस्से से कहा—'अमीना की शादी किसी दूसरे से करोगी तो अच्छा न होगा।'

"मामी बिगड़ उठीं। बोलीं—'अब कितनी बार बताऊँ कि तुमसे मैं उसकी शादी नहीं करूँगी, नहीं करूँगी। न जमीन न जगह, बीवी को खिलाने की सामर्थ्य नहीं और शादी का शौक चर्राया है।'

"मैंने कहा—'कैसी बातें कर रही हो मामी ? खाली हाथ घर से निकला था। आज पन्द्रह बीघा जमीन है, अपना हल-बैल है....'

"मामी बीच ही में बोल पड़ीं—'पन्द्रह बीघे जमीन जुटाई है तो बड़ा शेर मारा है। तुम और नज्जू मियाँ दोनों साथ-साथ ही गये थे। उसके आज सौ बीघा जमीन है। ऐसा ही रहा तो दो-चार साल में हजारों बीघा बना लेगा, चाहे तो तालुका खरीद लेगा।'

"मुझे सन्देह हुआ। बात क्या है कि मामी अचानक सौ मुँह से नज्जू मियाँ की तारीफ करने लगीं। फिर भी उन्हें मनाते हुए कहा—'तुम अमीना को मेरे हाथों सौंप दो मामी, मैं कसम उठाता हूँ, पाँच साल में मैं भी उसके नाम हजार बीघा जमीन लिख दूँगा।'

"मामी ने हँसकर कहा—'यह मर्दानगी दिखा कर आये होते तो कोई बात भी थी। जिसे पन्द्रह बीघे की समाई नहीं, उसकी जबान पर हजार बीघे की बात शोभा नहीं देती। तुम्हारी बातों में आकर मैं अमीना का सर्वनाश नहीं कर सकती।'

"मैं चीख-सा उठा—'जबर्दस्ती नज्जू से उसकी शादी करके तुम्हीं तो उसका सर्वनाश कर रही हो।'

"मेरे रंग-ढंग से मामी शायद डर गईं। अपने को सम्भाल कर बोलीं—'किसने यह कहा कि मैं नज्जू मियाँ से अमीना की शादी कर

रही हूँ ? और कर भी दूँ तो तुम्हें कुछ कहने का हक ही क्या है। उससे तुम्हारी तुलना हो ही नहीं सकती।'

"फिर भी मैंने कहा—'तुम मेरी मामी हो, अमीना की माँ हो। इस तरह हम दोनों का जीवन मत बर्बाद करो, नज्जू और मुझमें दुश्मनी के बीज मत बोओ।'

"मामी हिकारत की हँसी हँसीं—'नज्जू मियाँ से उसकी शादी करूँगी या नहीं, मैंने कुछ तै नहीं किया है अभी। लेकिन तेरे-जैसे अभागे के साथ उसे नहीं ब्याहूँगी, यह तै है।'

"मैं फिर नज्जू मियाँ के पास गया। उसके हाथ-पाँव पड़ा। अन्त में गुस्सा होकर कहा—'मैं यह शादी हरगिज न होने दूँगा। इसका बदला चुकाऊँगा। अगर जरूरत पड़ी तो तुम्हारा खून तक करूँगा।'

"बदले की बात सुनकर वह भी बिगड़ उठा। बोला—'तुमसे जो बन सके, करना। मगर गाँठ बाँध लो, अमीना से शादी मैं करूँगा, जरूर करूँगा।'

"आखिर वही होकर रहा। मामी के दौलत थी। गाँव में इज्जत भी थी। नज्जू मियाँ भी पैसेवाला था। गाँवके मुखिये मातबर ने उसी की तरफदारी की। शायद मैं कुछ हंगामा करूँ, इस डर से उन्होंने मुझे पहले ही हाजत में डाल दिया। ब्याह हो जाने के कोई महीने भर बाद मैं कैद से छूटा। तब अमीना अपने शौहर के घर जा चुकी थी।

"कई दिनों तक पागल की तरह चक्कर काटता रहा। नज्जू मियाँ को मार डालने के बड़े-बड़े मनसूबे गाँठे। मगर हर समय वह लोगों से घिरा-घिरा रहता। पास तक प च सकने का सुयोग ही नहीं मिला। हाँ, एक दिन उसका खून करने का मौका मिला जरूर था। वह बीवी के साथ रहीमपुर जा रहा था। राह में उसका काम तमाम कर सकता था, पर साथ में अमीना और वह भी गर्भवती। सो उसकी हत्या के लिए मेरा हाथ न उठा। सोचा अपने नसीब में जो था, सो तो हो ही चुका, अब अमीना के बच्चे को यतीम बना कर मुझे क्या मिलेगा ?"

असगर रुक गया। मालिक की तरफ देखते हुए बोला—"आज तुम्हें अपनी दशा पर दुःख है। सोचते हो तुम-सा दुःखी संसार मे दूसरा कौन होगा ? मगर सोच सकते हो, उस दिन मेरी क्या दशा थी ? मेरी नजरों के सामने मेरी होनेवाली बीवी को मेरा दोस्त छीन ले गया! मेरी मामी ने ही मेरी जिन्दगी बर्बाद कर दी।

"मेरा दुःख तब और दूना हो गया. जब मैंने सुना कि अमीना इस शादी से सुखी नहीं है। नज्जू मियाँ एक तो यों ही कड़े स्वभाव का आदमी था, फिर उसे सन्देह था कि अमीना उसे प्यार नहीं करती, महज माँ की बात पर उसने शादी कर ली है। यह सोचकर उसका क्रोध और भड़क उठता कि मैं अमीना को प्यार करता हूँ। यह भी सन्देह होता कि अमीना भी मुझे ही चाहती है।

"मुझे ये खबरें मिल जाया करतीं। इसका कोई प्रतिकार करते नहीं बनता, इससे मेरा दिमाग और भी गरम हो उठता। नज्जू मियाँ पर हाथ उठाने की गुंजाइश नहीं थी, वह चोट अमीना के ही लगती। शायद उसका बदला भी वह अमीना से ही चुकाता। सो मैं अपने ही ऊपर जुल्म करके उसका बदला चुकाने लगा। दुष्कर्म के साथी भी सहज ही मिल जाते हैं। देखते-ही-देखते यह बात फैल गई कि मैं जहन्नुम में जा रहा हूँ!

"किस्से को और ज्यादा बढ़ाना नहीं चाहता। अमीना महज़ अपनी ही बदनसीबी पर नहीं रोया करती, मेरी बदनामी सुन कर उसे बड़ा दुःख होता। एक दिन उसने छिपकर मुझे बुलवा भेजा। बोली, 'असगर भैया, कभी ऐसा था कि हर कोई तुम्हारी तारीफ करते थे। इसी से आज जब तुम्हारी बदनामी सुनती हूँ तो मेरा कलेजा टूक-टूक हो जाता है।'

"उसके आँसू और अनुरोध को मैं टाल न सका। मैंने कसम खाई कि आइन्दा मेरे किसी काम से तुम्हारा मुँह नीचा न होगा। अल्लाह जानते हैं, आज तक भूल कर भी मैंने कभी वादा खिलाफी नहीं की है।"

"नज्जू मियाँ को हमारी इस मुलाकात का पता चल गया। वह पागल हो उठा। मेरी बदनामी तो थी ही। उसने अमीना पर बड़े जुल्म ढाये, उसे पीटा भी। अमीना चुपचाप सब सहती गई। इस बीच मालिक, तुम पैदा हुए। नज्जू मियाँ का सन्देह और बढ़ ही गया। उसने तुम्हारी माँ पर कलंक का टीका लगा कर उसे तलाक दे दिया और घर से निकाल बाहर किया। मामी गुजर चुकी थीं। तुम्हारी माँ को पनाह दे तो कौन? वह सुन्दरी थी, फिर पति ने लाञ्छित करके उसे घर से निकाल दिया था। बुरे लोग अपना उल्लू सीधा करने की कोशिश में लग गये। अमीना सदा से नेक औरत थी, उससे इतना दुःख सहा नहीं गया। वह जान देने की नीयत से पानी में कूद पड़ी। खुदा का शुक्र कहो कि ऐन वक्त पर मैं पहुंच गया। मैंने उसे पानी से निकाला। वह रोकर कहने लगी —'तुमने मेरी जान क्यों बचाई, मुझ-जैसी अभागिन का मर जाना ही अच्छा।'

"मैंने उसे बहुतेरा समझाया, लाख दिलासे दिये। अनुरोध किया कि तुम मुझसे शादी कर लो, मगर वह रोती रही, सिर्फ रोती रही। ब्याह की बात से तो और भी मायूस हो जाती। बोली—'कभी मेरी जिन्दगी का एक ही ख्वाब था कि मैं तुम्हारी बीवी बनूंगी। वह सपना अब टूट चुका है। मुझ अभागिन को तुम भूल जाओ।'

"किसी तरह भी मुझसे शादी करने को राजी न हुई। कहने लगी, 'ऐसी अभिशप्ता का बोझ क्यों लेना चाहते हो तुम?'

"अन्त में मैंने कहा—'अमीना, तुम्हें मालूम है कि मैं तुम्हें सदा से प्यार करता हूँ। अगर तुम्हें कुछ हो गया, तो मैं भी अपनी जान दे दूँगा। अब तक तो मेरे दिन दुःख के ही बीते। अब भी अगर मुझे सुखी देखना चाहती हो, तो मेरी बात मान लो।'

"होते-हवाते वह मेरी विनती मान गई। जब से वह मेरे घर आई, मेरा नया जीवन शुरू हुआ। खुदा का शुक्र है, मैंने प्यार किया, मैंने प्यार पाया। नूरू की पैदाइश के बाद तो ऐसा लगा, जीवन सोलहों

कला से पूर्ण हो गया हो। लेकिन जब तक नज्जू मियाँ जिन्दा रहा, मैं अमीना को रहीमपुर नहीं लाया। और बाद की बातें तो तुम्हें मालूम ही हैं।"

——शेष

असगर का कहना खत्म हुआ। चारों तरफ सन्नाटा। किसी के भी मुँह में बोल नहीं। डूबता हुआ सूरज जरा देर को समुद्र की छाती पर रुक कर लहरों की ओट में जाने कहाँ खो गया। साँझ हो आई, नौकाएँ घाट की ओर चल पड़ीं। झोंपड़ों में दीये जलने लगे। घनीभूत अँधेरे में टीले पर कब्र के पास ये तीन जनें चुप बैठे रहे।

अन्त में मालिक की जबान खुली। आँखों का पानी सूख चुका था। उनमें गहरी निराशा की छाया। वह निर्जीव कंठ से बोल उठा, "नूरू को मैं अपनी भावी पत्नी समझता रहा था, आज अचानक मालूम हो गया, यह मेरी बहन है। तुमने मुझसे यह पहले क्यों नहीं कहा चाचा?"

असगर ने उसकी बात का सीधा जवाब नहीं दिया। नूरू के कपाल पर हाथ रख कर बोला, "इसके लिए क्या तू भी मुझे तोहमत देगी बेटी?"

नूरू ने चुपचाप गर्दन हिलाई। इन्हीं कुछ घन्टों में उसमें आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया। अब वह चन्चल बालिका नहीं रही, स्थिर-बुद्धि रमणी की गम्भीरता उसमें एक नई महिमा ले आई। बाप के

हाथ पर हाथ रख कर बोली, "तुमने हम लोगों के लिए बड़ी तकलीफ उठाई अब्बा।"

अब असगर की आँखें गीली हो आईं। रुँधे कंठ से बोला, "नूरू, तू तो मेरी बेटी है, मालिक मेरा कोई नहीं। मगर खुदा जानता है, मैंने उसे अपने बेटे-सा ही देखा है। खुदा की इच्छा नहीं थी, नहीं तो तुम दोनों मेरी ही सन्तान होते। मैंने जो कुछ भी किया, यह जान कर किया कि तुम्हारा भला हो। मैंने यही कोशिश की कि तुम्हारे तरुण जीवन को अतीत के हिंसा-द्वेष की बयार छू न सके। वैसा हो नहीं सका, मुफ्त में तुम दोनों दुःख उठाते रहे। मगर अब इस अपराध को मन से निकाल देना।"

नूरू माँ की कब्र पर लोट पड़ी। माटी में मुँह छिपा कर रोते-रोते उसने कहा, "तूने सब खोल कर क्यों नहीं बताया अम्मा ? पहले बताया होता तो मेरी यह बुरी गत क्यों होती ?"

मालिक उठ खड़ा हुआ। असगर और नूरू ने उसकी तरफ देखा। मालिक ने लेकिन देख कर भी उन्हें न देखा। अभी समुद्र में जहाँ पर चक्का बुझ गया था, लहरों के माथे पर वहाँ अभी भी सुनहली ज्योति खेल रही थी। उसकी दृष्टि वहीं गड़ी थी। लगा, बड़ी दूर से उसकी आवाज आई है। नूरू और असगर को सुनाई पड़ा—"तो अलविदा असगर चाचा ! बहन नूरू, तुमसे भी विदा माँगनी है। तुम पर अल्लाह का रहम उतरे, मन के सारे खेद, सारी अशान्ति मिट जाय।"

असगर का दिल टूट गया। हताश होकर उसने पूछा, "कहाँ जा रहे हो मालिक ?"

नूरू बोली तो नहीं, पर उसकी जिज्ञासा भरी आँखें भी यही पूछ रही थीं।

मालिक ने टूटे स्वर में कहा—"कहाँ, यह तो नहीं जानता, मगर मुझे जाना ही पड़ेगा। कहीं दूर, बहुत दूर चला जाऊँगा, जहाँ अतीत की ये पैनी स्मृतियाँ भूल जाऊँ। सारी जवानी नूरू को घेर कर रंगीन

सपनों का जो जाल बुनता रहा, आज एकाएक एक बारगी हो क्या सपने भुलाये जा सकते हैं ? नः, मुझे जाना ही पड़ेगा।"

असगर की नजर अपनी स्त्री की कब्र पर थी। धीरे-धीरे बोला, "हम नदी की छाती पर के आदमी हैं। पानी और कादो से ही हमारा सरोकार है। बालू पर हम घर बनाते हैं, नदी के प्रवाह में वह घर बार-बार बह जाता है। फिर भी हम हार नहीं मानते, नये सिरे से फिर-फिर घर बसाते हैं। ऊसर को खेत बनाते हैं, उसमें उगाते हैं सोने की फसल। नदी जितनी ही बार तोड़ती है, उतनी ही बार हम नये घर बनाते हैं।"

मालिक ने कहा, "नदी का आदमी मैं भी हूँ। मैं भी बालू पर घर बसाऊँगा। मगर उसके लिए समय चाहिए। पुराने पत्ते जब तक झड़ नहीं जाते, नई कोंपलें नहीं निकलतीं, जब तक अतीत का भार चुक नहीं जाता, भविष्यत् कैसे आ सकता है ? तुम मुझे रोको मत चाचा! यह मेरा करम-का लिखा है, मुझे जाना ही पड़ेगा। अगर भाग्य में लिखा होगा, तो कभी लौटूँगा।"

असगर मानों आप-ही-आप बोल उठा, "नदी की धारा जरूर बदलेगी। यह किनारा टूटेगा, वह बनेगा। पुराना छोड़ कर नया पाट ढूँढ़ना नदी का तरीका है। फिर भी नदी पुराने को नहीं भूलती, बार-बार उसी की तरफ लौटती है।"

असगर उठ खड़ा हुआ। पुकार कर नूरू से कहा, "चल बिटिया, घर चलें।"

वह चुपचाप खड़ी हो गई। गाँव की गैल पर बाप के पीछे-पीछे जाने लगी। जब तक नजर आते रहे, मालिक एक टक उन्हें देखता रहा। असगर की आँखें बिलकुल सामने थीं, एक बार भी उसने पीछे मुड़कर नहीं देखा। नूरू, लेकिन चलते-चलते बार-बार रुकती और मुड़-मुड़कर मालिक को देखने लग जाती। रुक-रुक कर वह कभी बाप की ओर देखती, कभी मालिक की ओर। दुविधा में पड़ी थी। क्या करे, किधर जाय, थिर न कर पाई। अन्त में, लेकिन बाप के ही साथ

घर लौट गई।

मालिक माँ की कब्र के पास अकेला बैठा रहा। गाँव से दूर, समुद्र और क्षितिज पार करके किसे ढूँढ़ने में उसकी आँखें उदास थीं? चारों ओर सन्नाटा, उसके मन में भी असीम सूनापन। गोधूलि की आभा खो गई। अँधेरे में दूर समुद्र में तैरने वाली नावों की कतारें दीखना बन्द हो गईं। आदमी का कहीं कोई स्वर नहीं, दूर से केवल मल्लाहों के गीत की कड़ी हवा में उड़ती हुई आ रही थी।

काफी रात गये असगर मियाँ अपनी बीवी की कब्र के पास आ बैठा। धरती के सारे लोग सो रहे थे, आकाश और समुद्र भी नींद में बेखबर। मालिक के इन्तजार में वह वहाँ रात-भर बैठा रहा। मगर मालिक कहाँ? तारों की रोशनी में राह देखता हुआ वह किस सवेरे की खोज में चला गया, कौन जाने!

* * *